अगर पुराने जमाने की नगर-देवता की और ग्राम-देवता की कल्पनाएँ आज भी मान्य होतीं तो मैं कहता कि इलाहाबाद का नगर-देवता जरूर कोई रामैंटिक कलाकार है। ऐसा लगता है कि इस शहर की बनावट, गठन, जिन्दगी और रहन-सहन में कोई बँधे-बँधाये नियम नहीं, कहीं कोई कसाव नहीं, हर जगह एक स्वच्छन्द खुलाव, एक बिखरी हुई-सी अनियमितता। बनारस की गलियों से भी पतली गलियाँ और लखनऊ की सड़कों से चौड़ी सड़कें। यार्कशायर और ब्राइटन के उपनगरों का मुकाबला करने वाले सिविल लाइन्स और दलदलों की गन्दगी को मात करने वाले मुहल्ले। मौसम में भी कहीं कोई सम नहीं, कोई सन्तुलन नहीं। सुबहें मलयजी, दोपहरें अंगारी, तो शामें रेशमी! धरती ऐसी कि सहारा के रेगिस्तान की तरह बालू भी मिले, मालवा की तरह हरे-भरे खेत भी मिलें और ऊसर और परती की भी कमी नहीं। सचमुच लगता है कि प्रयाग का नगर-देवता स्वर्ग-कुंजों से निर्वासित कोई मनमौजी कलाकार है जिसके सृजन में हर रंग के डोरे हैं।

और चाहे जो हो, मगर इधर क्वार, कार्तिक तथा उधर वसन्त के बाद और होली के बीच के मौसम से इलाहाबाद का वातावरण नैस्टर्शियम और पैंजी के फूलों से भी ज्यादा खूबसूरत और आम के बौरों की खुशबू से भी ज्यादा महकदार होता है। सिविल लाइन्स हो या अल्फ्रेड पार्क, गंगातट हो या खुसरूबाग, लगता है कि हवा एक नटखट दोशीजा की तरह कलियों के आँचल और लहरों के मिजाज से छेड़खानी करती चलती है। और अगर आप सर्दी से बहुत नहीं डरते तो आप ज़रा एक ओवरकोट डालकर सुबह-सुबह घूमने निकल जाएँ तो इन खुली हुई जगहों की फिजाँ इठलाकर आपको अपने जादू में बाँध लेगी। खासतौर से पौ फटने के पहले तो आपको एक बिल्कुल नयी अनुभूति होगी। वसन्त के नये-नये मौसमी फूलों के रंग से मुकाबला करने वाली हल्की सुनहली, बाल-सूर्य की अँगुलियाँ सुबह की राजकुमारी के गुलाबी वक्ष पर बिखरे हुए भौंराले गेसुओं को धीरे-धीरे हटाती जाती हैं और क्षितिज पर सुनहली तरुणाई बिखर पड़ती है।

एक ऐसी ही खुशनुमा सुबह थी, और जिसकी कहानी मैं कहने जा रहा हूँ, वह सुबह से भी ज्यादा मासूम युवक, प्रभाती गाकर फूलों को जगाने वाले देवदूत की तरह अल्फ्रेड पार्क के लॉन पर फूलों की सरजमीं के किनारे-किनारे घूम रहा था। कत्थई

स्वीटपी के रंग का पश्मीने का लम्बा कोट, जिसका एक कालर उठा हुआ था और दूसरे कालर में सरो की एक पत्ती बटन होल में लगी हुई थी, सफेद मक्खन जीन की

पतली पैंट और पैरों में सफेद जरी की पेशावरी सैंडिलें, भरा हुआ गोरा चेहरा और ऊँचे चमकते हुए माथे पर झूलती हुई एक रूखी भूरी लट। चलते-चलते उसने एक रंग-बिरंगा गुच्छा इकट्ठा कर लिया था और रह-रह कर वह उसे सूँघ लेता था।

पूरब के आसमान की गुलाबी पाँखुरियाँ बिखरने लगी थीं और सुनहले पराग की एक बौछार सुबह के ताजे फूलों पर बिछ रही थी। "अरे सुबह हो गयी?" उसने चौंककर कहा और पास की एक बेंच पर बैठ गया। सामने से एक माली आ रहा था। "क्यों जी, लाइब्रेरी खुल गयी?" "अभी नहीं बाबूजी!" उसने जवाब दिया। वह फिर सन्तोष से बैठ गया और फूलों की पाँखुरियाँ नोचकर नीचे फेंकने लगा। जमीन पर बिछाने वाली सोने की चादर परतों पर परतें बिछाती जा रही थी और पेड़ों की छायाओं का रंग गहराने लगा था। उसकी बेंच के नीचे फूलों की चुनी हुई पत्तियाँ बिखरी थीं और अब उसके पास सिर्फ एक फूल बाकी रह गया था। हलके फालसई रंग के उस फूल पर गहरे बैंजनी डोरे थे।

"हलो कपूर!" सहसा किसी ने पीछे से कन्धे पर हाथ रखकर कहा, "यहाँ क्या झक मार रहे हो सुबह-सुबह?"

उसने मुड़कर पीछे देखा, "आओ, ठाकुर साहब! आओ बैठो यार, लाइब्रेरी खुलने का इन्तजार कर रहा हूँ।"

"क्यों, यूनिवर्सिटी लाइब्रेरी चाट डाली, अब इसे तो शरीफ लोगों के लिए छोड़ दो!"

"हाँ, हाँ, शरीफ लोगों ही के लिए छोड़ रहा हूँ; डॉक्टर शुक्ला की लड़की है न, वह इसकी मेम्बर बनना चाहती थी तो मुझे आना पड़ा, उसी का इन्तजार भी कर रहा हूँ।"

"डॉक्टर शुक्ला तो पॉलिटिक्स डिपार्टमेंट में हैं?"

"नहीं, गवर्नमेंट साइकोलॉजिकल ब्यूरो में।"

"और तुम पॉलिटिक्स में रिसर्च कर रहे हो?"

"नहीं, इकनॉमिक्स में!"

"बहुत अच्छे! तो उनकी लड़की को सदस्य बनवाने आये हो?" कुछ अजब स्वर में ठाकुर ने कहा।

"छि:!" कपूर ने हँसते हुए, कुछ अपने को बचाते हुए कहा, "यार, तुम जानते हो कि मेरा उनसे कितना घरेलू सम्बन्ध है। जब से मैं प्रयाग में हूँ, उन्हीं के सहारे हूँ और आजकल तो उन्हीं के यहाँ पढ़ता-लिखता भी हूँ...।"

ठाकुर साहब हँस पड़े, "अरे भाई, मैं डॉक्टर शुक्ला को जानता नहीं क्या? उनका-सा भला आदमी मिलना मुश्किल है। तुम सफाई व्यर्थ में दे रहे हो।"

ठाकुर साहब यूनिवर्सिटी के उन विद्यार्थियों में से थे जो बरायनाम विद्यार्थी होते हैं और कब तक वे यूनिवर्सिटी को सुशोभित करते रहेंगे, इसका कोई निश्चय नहीं। एक

अच्छे-खासे रुपये वाले व्यक्ति थे और घर के ताल्लुकेदार। हँसमुख, फब्तियाँ कसने में मजा लेने वाले, मगर दिल के साफ, निगाह के सच्चे। बोले–

"एक बात तो मैं स्वीकर करता हूँ कि तुम्हारी पढ़ाई का सारा श्रेय डॉ. शुक्ला को है! तुम्हारे घर वाले तो कुछ खर्चा भेजते नहीं?"

"नहीं, उनसे अलग ही होकर आया था। समझ लो कि इन्होंने किसी-न-किसी बहाने मदद की है।"

"अच्छा, आओ, तब तक लोटस-पोंड (कमल-सरोवर) तक ही घूम लें। फिर लाइब्रेरी भी खुल जाएगी!"

दोनों उठकर एक कृत्रिम कमल-सरोवर की ओर चल दिये जो पास ही में बना हुआ था। सीढ़ियाँ चढ़कर ही उन्होंने देखा कि एक सज्जन किनारे बैठे कमलों की ओर एकटक देखते हुए ध्यान में तल्लीन हैं। छिपकली से दुबले-पतले, बालों की एक लट माथे पर झूमती हुई—

"कोई प्रेमी हैं, या कोई फिलासफर हैं, देखा ठाकुर?"

"नहीं यार, दोनों से निकृष्ट कोटि के जीव हैं–ये कवि हैं। मैं इन्हें जानता हूँ। ये रवीन्द्र बिसरिया हैं। एम.ए. में पढ़ता है। आओ, मिलाएँ तुम्हें!"

ठाकुर साहब ने एक बड़ा-सा घास का तिनका तोड़कर पीछे से चुपके-से जाकर उसकी गरदन गुदगुदायी। बिसरिया चौंक उठा–पीछे मुड़कर देखा और बिगड़ गया–"यह क्या बदतमीजी है, ठाकुर साहब! मैं कितने गम्भीर विचारों में डूबा था।" और सहसा बड़े विचित्र स्वर में आँखें बन्द कर बिसरिया बोला, "आह! कैसा मनोरम प्रभात है! मेरी आत्मा में घोर अनुभूति हो रही थी...।"

कपूर बिसरिया की मुद्रा पर ठाकुर साहब की ओर देखकर मुसकराया और इशारे में बोला, "है यार शगल की चीज। छेड़ो ज़रा!"

ठाकुर साहब ने तिनका फेंक दिया और बोला, "माफ करना, भाई बिसरिया! बात यह है कि हम लोग कवि तो हैं नहीं, इसलिए समझ नहीं पाते। क्या सोच रहे थे तुम?"

बिसरिया ने आँखें खोलीं और एक गहरी साँस लेकर बोला, "मैं सोच रहा था कि आखिर प्रेम क्या होता है, क्यों होता है? कविता क्यों लिखी जाती है? फिर कविता के संग्रह उतने क्यों नहीं बिकते जितने उपन्यास या कहानी-संग्रह?"

"बात तो गम्भीर है।" कपूर बोला, "जहाँ तक मैंने समझा और पढ़ा है–प्रेम एक तरह की बीमारी होती है, मानसिक बीमारी, जो मौसम बदलने के दिनों में होती है, मसलन क्वार-कार्तिक या फागुन-चैत। उसका सम्बन्ध रीढ़ की हड्डी से होता है। और कविता एक तरह का सन्निपात होता है। मेरा मतलब आप समझ रहे हैं, मि. सिबरिया?"

"सिबरिया नहीं बिसरिया?" ठाकुर साहब ने टोका।

बिसरिया ने कुछ उजलत, कुछ परेशानी और कुछ गुस्से से उनकी ओर देखा और बोला, "क्षमा कीजिएगा, आप या तो फ्रायडवादी हैं या प्रगतिवादी और आपके विचार सर्वदा विदेशी हैं। मैं इस तरह के विचारों से घृणा करता हूँ...।"

कपूर कुछ जवाब देने ही वाला था कि ठाकुर साहब बोले, "अरे भाई, बेकार उलझ गये तुम लोग, पहले परिचय तो कर लो आपस में। ये हैं श्री चन्द्रकुमार कपूर, विश्वविद्यालय में रिसर्च कर रहे हैं और आप हैं श्री रवीन्द्र बिसरिया, इस वर्ष एम.ए. में बैठ रहे हैं। बहुत अच्छे कवि हैं।"

कपूर ने हाथ मिलाया और फिर गम्भीरता से बोला, "क्यों साहब, आपको दुनिया में और कोई काम नहीं रहा जो आप कविता करते हैं?"

बिसरिया ने ठाकुर साहब की ओर देखा और बोला, "ठाकुर साहब, यह मेरा अपमान है, मैं इस तरह के सवालों का आदी नहीं हूँ।" और उठ खड़ा हुआ।

"अरे बैठो-बैठो!" ठाकुर साहब ने हाथ खींचकर बिठा लिया, "देखो, कपूर का मतलब तुम समझे नहीं। उसका कहना यह है कि तुममें इतनी प्रतिभा है कि लोग तुम्हारी प्रतिभा का आदर करना नहीं जानते। इसलिए उन्होंने सहानुभूति में तुमसे कहा कि तुम और कोई काम क्यों नहीं करते। वरना कपूर साहब तुम्हारी कविता के बहुत शौकीन हैं। मुझसे बराबर तारीफ करते हैं।"

बिसरिया पिघल गया और बोला,"क्षमा कीजिएगा। मैंने गलत समझा, अब मेरा कविता-संग्रह छप रहा है, मैं आपको अवश्य भेंट करूँगा।" और फिर बिसरिया ठाकुर साहब की ओर मुड़कर बोला, "अब लोग मेरी कविताओं की इतनी माँग करते हैं कि मैं परेशान हो गया हूँ। अभी कल 'त्रिवेणी' के सम्पादक मिले। कहने लगे अपना चित्र दे दो। मैंने कहा कि कोई चित्र नहीं है तो पीछे पड़ गये। आखिरकार मैंने आइडेंटिटी कार्ड उठाकर दे दिया!"

"वाह!" कपूर बोला, "मान गये आपको हम! तो आप राष्ट्रीय कविताएँ लिखते हैं या प्रेम की?"

"जब जैसा अवसर हो!" ठाकुर साहब ने जड़ दिया, "वैसे तो यह वारफ्रंट का कवि-सम्मेलन, शराबबन्दी कॉन्फ्रेंस का कवि-सम्मेलन, शादी-ब्याह का कवि-सम्मेलन, साहित्य-सम्मेलन का कवि-सम्मेलन सभी जगह बुलाये जाते हैं। बड़ा यश है इनका!"

बिसरिया ने प्रशंसा से मुग्ध होकर देखा, मगर फिर एक गर्व का भाव मुँह पर लाकर गम्भीर हो गया।

कपूर थोड़ी देर चुप रहा, फिर बोला, "तो कुछ हम लोगों को भी सुनाइए न!"

"अभी तो मूड नहीं है।" बिसरिया बोला।

ठाकुर साहब बिसरिया को पिछले पाँच सालों से जानने थे, वे अच्छी तरह जानते थे कि बिसरिया किस समय और कैसे कविता सुनाता है। अत: बोले, "ऐसे नहीं कपूर, आज शाम को आओ। जरा गंगाजी चलें, कुछ बोटिंग रहे, कुछ खाना-पीना रहे तब कविता भी सुनना!"

कपूर को बोटिंग का बेहद शौक था। फौरन राजी हो गया और शाम का विस्तृत कार्यक्रम बन गया।

इतने में एक कार उधर से लाइब्रेरी की ओर गुजरी। कपूर ने देखा और बोला, "अच्छा, ठाकुर साहब, मुझे तो इजाजत दीजिए। अब चलूँ लाइब्रेरी में। वो लोग आ गये। आप कहाँ चल रहे हैं?"

"मैं जरा जिमखाने की ओर जा रहा हूँ। अच्छा भाई, तो शाम को पक्की रही।"

"बिल्कुल पक्की!" कपूर बोला और चल दिया।

लाइब्रेरी के पोर्टिको में कार रुकी थी और उसके अन्दर ही डॉक्टर साहब की लड़की बैठी थी।

"क्यों सुधा, अन्दर क्यों बैठी हो?"

"तुम्हें ही देख रही थी, चन्दर।" और वह उतर आयी। दुबली-पतली, नाटी-सी, साधारण-सी लड़की, बहुत सुन्दर नहीं, केवल सुन्दर, लेकिन बातचीत में बहुत दुलारी।

"चलो, अन्दर चलो।" चन्दर ने कहा।

वह आगे बढ़ी, फिर ठिठक गयी और बोली, "चन्दर, एक आदमी को चार किताबें मिलती हैं?"

"हाँ! क्यों?"

"तो...तो..." उसने बड़े भोलेपन से मुसकराते हुए कहा, "तो तुम अपने नाम से मेम्बर बन जाओ और दो किताबें हमें दे दिया करना बस, ज्यादा का हम क्या करेंगे?"

"नहीं!" चन्दर हँसा, "तुम्हारा तो दिमाग खराब है। खुद क्यों नहीं बनतीं मेम्बर?"

"नहीं, हमें शरम लगती है, तुम बन जाओ मेम्बर हमारी जगह पर।"

"पगली कहीं की!" चन्दर ने उसका कन्धा पकड़कर आगे ले चलते हुए कहा, "वाह रे शरम! अभी कल ब्याह होगा तो कहना, हमारी जगह तुम बैठ जाओ चन्दर! कॉलेज में पहुँच गयी लड़की; अभी शरम नहीं छूटी इसकी! चल अन्दर!"

और वह हिचकती, ठिठकती, झेंपती और मुड़-मुड़कर चन्दर की ओर रूठी हुई निगाहों से देखती हुई अन्दर चली गयी।

थोड़ी देर बाद सुधा चार किताबें लादे हुए निकली। कपूर ने कहा, "लाओ, मैं ले

लूं!" तो बाँस की पतली टहनी की तरह लहराकर बोली, "सदस्य मैं हूँ। तुम्हें क्यों दूँ किताबें?" और जाकर कार के अन्दर किताबें पटक दीं। फिर बोली, "आओ, बैठो, चन्दर!"

"मैं अब घर जाऊँगा।"

"ऊँहूँ, यह देखो!" और उसने भीतर से कागजों का एक बंडल निकाला और बोली, "देखो, यह पापा ने तुम्हारे लिए दिया है। लखनऊ में कॉन्फ्रेंस है न। वहीं पढ़ने के लिए यह निबन्ध लिखा है उन्होंने। शाम तक यह टाइप हो जाना चाहिए। जहाँ संख्याएँ हैं वहाँ खुद आपको बैठकर बोलना होगा। और पापा सुबह से ही कहीं गये हैं। समझे जनाब!" उसने बिल्कुल अल्हड़ बच्चों की तरह गरदन हिलाकर शोख स्वरों में कहा।

कपूर ने बंडल ले लिया और कुछ सोचता हुआ बोला, "लेकिन डॉक्टर साहब का हस्तलेख, इतने पृष्ठ, शाम तक कौन टाइप कर देगा?"

"इसका भी इन्तजाम है" और अपने ब्लाउज में से एक पत्र निकालकर चन्दर के हाथ में देती हुई बोली, "यह कोई पापा की पुरानी ईसाई छात्रा है। टाइपिस्ट। इसके घर मैं तुम्हें पहुँचाये देती हूँ। मुकर्जी रोड पर रहती है यह। उसी के यहाँ टाइप करवा लेना और यह खत उसे दे देना।"

"लेकिन अभी मैंने चाय नहीं पी।"

"समझ गये, अब तुम सोच रहे होगे कि इसी बहाने सुधा तुम्हें चाय भी पिला देगी। सो मेरा काम नहीं है जो मैं चाय पिलाऊँ? पापा का काम है यह! चलो, आओ!"

चन्दर जाकर भीतर बैठ गया और किताबें उठाकर देखने लगा, "अरे, चारों कविता की किताबें उठा लायी—समझ में आएँगी तुम्हारे? क्यों, सुधा?"

"नहीं!" चिढ़ाते हुए सुधा बोली, "तुम कहो, तुम्हें समझा दें। इकनॉमिक्स पढ़ने वाले क्या जानें साहित्य?"

"अरे, मुकर्जी रोड पर ले चलो, ड्राइवर!" चन्दर बोला, "इधर कहाँ चल रहे हो?"

"नहीं, पहले घर चलो!" सुधा बोली, "चाय पी लो, तब जाना!"

"नहीं, मैं चाय नहीं पिऊँगा।" चन्दर बोला।

"चाय नहीं पिऊँगा, वाह! वाह!" सुधा की हँसी में दूधिया बचपन छलक उठा—"मुँह तो सूखकर गोभी हो रहा है, चाय नहीं पीएँगे।"

बँगला आया तो सुधा ने महराजिन से चाय बनाने के लिए कहा और चन्दर को स्टडी रूम में बिठाकर प्याले निकालने के लिए चल दी।

वैसे तो यह घर, यह परिवार चन्द्र कपूर का अपना हो चुका था; जब से वह अपनी माँ से झगड़कर प्रयाग भाग आया था पढ़ने के लिए, यहाँ आकर बी.ए. में भरती हुआ था और कम खर्च के खयाल से चौक में एक कमरा लेकर रहता था, तभी डॉक्टर शुक्ला उसके सीनियर टीचर थे और उसकी परिस्थितियों से अवगत थे। चन्दर की अँग्रेजी बहुत ही अच्छी थी और डॉ. शुक्ला उससे अक्सर छोटे-छोटे लेख लिखवाकर पत्रिकाओं में भिजवाते थे। उन्होंने कई पत्रों के आर्थिक स्तम्भ का काम चन्दर को दिलवा दिया था और उसके बाद चन्दर के लिए डॉ. शुक्ला का स्थान अपने संरक्षक और पिता से भी ज्यादा हो गया था। चन्दर शरमीला लड़का था, बेहद शरमीला, कभी उसने यूनिवर्सिटी के वजीफे के लिए भी कोशिश न की थी, लेकिन जब बी.ए. में वह सारी यूनिवर्सिटी में सर्वप्रथम आया तब स्वयं इकनॉमिक्स विभाग ने उसे यूनिवर्सिटी के आर्थिक प्रकाशनों का वैतनिक सम्पादक बना दिया था। एम.ए. में भी वह सर्वप्रथम आया और उसके बाद उसने रिसर्च ले ली। उसके बाद डॉ. शुक्ला यूनिवर्सिटी से हटकर ब्यूरो में चले गये थे। अगर सच पूछा जाय तो उसके सारे करियर का श्रेय डॉ. शुक्ला को था जिन्होंने हमेशा उसकी हिम्मत बढ़ायी और उसको अपने लड़के से बढ़कर माना। अपनी सारी मदद के बावजूद डॉ. शुक्ला ने उससे इतना अपनापन बनाये रखा कि कैसे धीरे-धीरे चन्दर सारी गैरियत खो बैठा; यह उसे खुद नहीं मालूम। यहा बँगला, इसके कमरे, इसके लॉन, इसकी किताबें, इसके निवासी, सभी कुछ जैसे उसके अपने थे और सभी का उससे जाने कितने जन्मों का सम्बन्ध था।

और यह नन्ही दुबली-पतनी रंगीन चन्द्रकिरन-सी सुधा। जब आज से वर्षों पहले यह सातवीं पास करके अपनी बुआ के पास से यहाँ आयी थी तब से लेकर आज तक कैसे वह भी चन्दर की अपनी होती गयी थी, इसे चन्दर खुद नहीं जानता था। जब वह आयी थी तब वह बहुत शरमीली थी, बहुत भोली थी, आठवीं में पढ़ने के बावजूद वह खाना खाते वक्त रोती थी, मचलती थी तो अपनी कॉपी फाड़ डालती थी और जब तक डॉक्टर साहब उसे गोदी में बिठाकर नहीं मनाते थी, वह स्कूल नहीं जाती थी। तीन बरस की अवस्था में ही उसकी माँ चल बसी थी और दस साल तक वह अपनी बुआ के पास एक गाँव में रही थी। अब तेरह वर्ष की होने पर गाँव वालों ने उसकी शादी पर जोर देना और शादी न होने पर गाँव की औरतों ने हाथ नचानां और मुँह मटकाना शुरू किया तो डॉक्टर साहब ने उसे इलाहाबाद बुलाकर आठवीं में भर्ती करा दिया। जब वह आयी थी तो आधी जंगली थी, तरकारी में घी कम होने पर वह महराजिन का चौका जूठा कर देती थी और रात में फूल तोड़कर न लाने पर अक्सर उसने माली को दाँत भी काट खाया था। चन्दर से जरूर वह बेहद डरती थी, पर न जाने क्यों चन्दर भी

उससे नहीं बोलता था। लेकिन जब दो साल तक उसके ये उपद्रव जारी रहे और अक्सर डॉक्टर साहब गुस्से के मारे उसे न साथ खिलाते थे और न उससे बोलते थे, तो वह रो-रोकर और सिर पटक-पटककर अपनी जान आधी कर देती थी। तब अक्सर चन्दर ने पिता और पुत्री का समझौता कराया था, अक्सर सुधा को डाँटा था, समझाया था, और सुधा, घर-भर से अल्हड़ पुरवाई और विद्रोही झोंके की तरह तोड़-फोड़ मचाती रहने वाली सुधा, चन्दर की आँख के इशारे पर सुबह की नसीम की तरह शान्त हो जाती थी। कब और क्यों उसने चन्दर के इशारों का यह मौन अनुशासन स्वीकार कर लिया था, यह उसे खुद नहीं मालूम था, और यह सभी कुछ इतने स्वाभाविक ढंग से, इतना अपने-आप होता गया कि दोनों में से कोई भी इस प्रक्रिया से वाकिफ नहीं था, कोई भी इसके प्रति जागरूक न था, दोनों का एक-दूसरे के प्रति अधिकार और आकर्षण इतना स्वाभाविक था जैसे शरद की पवित्रता या सुबह की रोशनी।

और मजा तो यह था कि चन्दर की शक्ल देखकर छिप जाने वाली सुधा इतनी ढीठ हो गयी कि उसका सारा विद्रोह, सारी झुँझलाहट, मिजाज की सारी तेजी, सारा तीखापन और सारा लड़ाई-झगड़ा, सभी की तरफ से हटकर चन्दर की ओर केन्द्रित हो गया था। वह विद्रोहिनी अब शान्त हो गयी थी। इतनी शान्त, इतनी सुशील, इतनी विनम्र, इतनी मिष्टभाषिणी कि सभी को देखकर ताज्जुब होता था, लेकिन चन्दर को देखकर जैसे उसका बचपन फिर लौट आता था और जब तक वह चन्दर को खिझाकर, छेड़कर लड़ नहीं लेती थी उसे चैन नहीं पड़ता था। अक्सर दोनों में अनबोला रहता था, लेकिन जब दो दिन तक दोनों मुँह फुलाये रहते थे और डॉक्टर साहब के लौटने पर सुधा उत्साह से उनको ब्यूरो का हाल नहीं पूछती थी और खाते वक्त दुलार नहीं दिखाती थी तो डॉक्टर साहब फौरन पूछते, "क्या... चन्दर से लड़ाई हो गयी क्या?" फिर वह मुँह फुलाकर शिकायत करती थी और शिकायतें भी क्या-क्या होती थीं, चन्दर ने उसकी हेड मिस्ट्रेस का नाम एलीफैंटा (श्रीमती हथिनी) रखा था, या चन्दर ने उसको डिबेट के भाषण के प्वाइंट नहीं बताये, या चन्दर कहता है कि सुधा की सखियाँ कोयला बेचती हैं और जब डॉक्टर साहब कहते हैं कि वह चन्दर को डाँट देंगे तो वह खुशी से फूल उठती और चन्दर के आने पर आँखें नचाती हुई चिढ़ाती थी, "कहो, कैसी डाँट पड़ी?"

वैसे सुधा अपने घर की पुरखिन थी। किस मौसम में कौन-सी तरकारी पापा को माफिक पड़ती है, बाजार में चीजों का क्या भाव है, नौकर चोरी तो नहीं करता, पापा कितने सोसायटियों के मेम्बर हैं, चन्दर के इकनॉमिक्स के कोर्स में क्या है, यह सभी उसे मालूम था। मोटर या बिजली बिगड़ जाने पर वह थोड़ी-बहुत इंजीनियरिंग भी कर लेती थी और मातृत्व का अंश तो उसमें इतना था कि हर नौकर और नौकरानी उससे

अपना सुख-दुःख कह देते थे। पढ़ाई के साथ-साथ घर का सारा काम-काज करते हुए उसका स्वास्थ्य भी कुछ बिगड़ गया था और अपनी उम्र के हिसाब से कुछ अधिक शान्त, संयम, गम्भीर और बुजुर्ग थी, मगर अपने पापा और चन्दर, इन दोनों के सामने हमेशा उसका बचपन इठलाने लगता था। दोनों के सामने उसका हृदय उन्मुक्त था और स्नेह बाधाहीन।

लेकिन हाँ, एक बात थी। उसे जितना स्नेह और स्नेह-भरी फटकारें और स्वास्थ्य के प्रति चिन्ता अपने पापा से मिलती थी, वह सब बड़े निःस्वार्थ भाव से वह चन्दर को दे डालती थी। खाने-पीने की जितनी परवाह उसके पापा उसकी रखते थे, न खाने पर या कम खाने पर उसे जितने दुलार से फटकारते थे, उतना ही खयाल वह चन्दर का रखती थी और स्वास्थ्य के लिए जो उपदेश उसे पापा से मिलते थे, उसे और भी स्नेह में पागकर वह चन्दर को दे डालती थी। चन्दर कै बजे खाना खाता है, यहाँ से जाकर घर पर कितनी देर पढ़ता है, रात को सोते वक्त दूध पीता है या नहीं, इन सबका लेखा-जोखा उसे सुधा को देना पड़ता, और जब कभी उसके खाने-पीने में कोई कमी रह जाती तो उसे सुधा की डाँट खानी ही पड़ती थी। पापा के लिए सुधा अभी बच्ची थी; और स्वास्थ्य के मामले में सुधा के लिए चन्दर अभी बच्चा था। और कभी-कभी तो सुधा की स्वास्थ्य-चिन्ता इतनी ज्यादा हो जाती थी कि चन्दर बेचारा जो खुद तन्दुरुस्त था, घबरा उठता था। एक बार सुधा ने कमाल कर दिया। उसकी तबीयत खराब हुई और डॉक्टर ने उसे लड़कियों का एक टॉनिक पीने के लिए बताया। इम्तहान में जब चन्दर कुछ दुबला-सा हो गया तो सुधा अपनी बची हुई दवा ले आयी। और लगी चन्दर से जिद करने कि "पियो इसे!" जब चन्दर ने किसी अखबार में उसका विज्ञापन दिखाकर बताया कि लड़कियों के लिए है, तब कहीं जाकर उसकी जान बची।

इसीलिए जब आज सुधा ने चाय के लिए कहा तो उसकी रूह काँप गयी क्योंकि जब कभी सुधा चाय बनाती थी तो प्याले के मुँह तक दूध भरकर उसमें दो-तीन चम्मच चाय का पानी डाल देती थी और अगर उसने ज्यादा स्ट्रांग चाय की माँग की तो उसने खालिस दूध पीना पड़ता था। और चाय के साथ फल और मेवा और खुदा जाने क्या-क्या, और उसके बाद सुधा का इसरार, न खाने पर सुधा का गुस्सा और उसे बाद की लम्बी-चौड़ी मनुहार; इस सबसे चन्दर बहुत घबराता था। लेकिन जब सुधा उसे स्टडी रूप में बिठाकर जल्दी से चाय बना लायी तो उसे मजबूर होना पड़ा, और बैठे-बैठे निहायत बेबसी से उसने देखा कि सुधा ने प्याले में दूध डाला और उसके बाद थोड़ी-सी चाय डाल दी। उसके बाद अपने प्याले में चाय डालकर और दो चम्मच दूध डालकर आप ठाठ से पीने लगे, और बेतकल्लुफी से दूधिया चाय का प्याला चन्दर के सामने खिसकाकर बोली, "पीजिए, नाश्ता आ रहा है।"

चन्दर ने प्याले को अपने सामने रखा और उसे चारों तरफ घुमाकर देखता रहा कि किस तरफ से उसे चाय का अंश मिल सकता है। जब सभी ओर से प्याले में क्षीरसागर नज़र आया तो उसने हारकर प्याला रख दिया।

"क्यों, पीते क्यों नहीं?" सुधा ने अपना प्याला रख दिया।

"पीएँ क्या? कहीं चाय भी हो?"

"तो और क्या खालिस चाय पीजिएगा? दिमागी काम करने वालों को ऐसी ही चाय पीनी चाहिए।"

"तो अब मुझे सोचना पड़ेगा कि मैं चाय छोड़ूँ या रिसर्च। न ऐसी चाय मुझे पसन्द, न ऐसा दिमागी काम!"

"लो, आपको विश्वास नहीं होता। मेरी क्लासफेलो है गेसू काजमी; सबसे तेज लड़की है, उसकी अम्मी उसे दूध में चाय उबालकर देती है।"

"क्या नाम है तुम्हारी सखी का?"

"गेसू!"

"बड़ा अच्छा नाम है!"

"और क्या! मेरी सबसे घनिष्ठ मित्र है और उतनी ही अच्छी है जितना अच्छा नाम!"

"जरूर-जरूर" मुँह बिचकाते हुए चन्दर ने कहा, "और उतनी ही काली होगी, जितने काले गेसू।"

"धत्, शरम नहीं आती किसी लड़की के लिए ऐसा कहते हुए!"

"और हमारे दोस्तों की बुराई करती हो तब?"

"तब क्या! वे तो सब हैं ही बुरे! अच्छा तो नाश्ता, पहले फल खाओ" और वह प्लेट में छील-छीलकर सन्तरा रखने लगी। इतने में ज्यों की वह झुककर एक गिरे हुए सन्तरे को नीचे से उठाने लगी कि चन्दर ने झट से उसका प्याला अपने सामने रख लिया और अपना प्याला उधर रख दिया और शान्त चित्त से पीने लगा। सन्तरे की फाँकें उसकी ओर बढ़ाते हुए ज्यों ही उसने एक घूँट चाय ली तो वह चौंककर बोली, "अरे, यह क्या हुआ?"

"कुछ नहीं, हमने उसमें दूध डाल दिया। तुम्हें दिमागी काम बहुत रहता है!" चन्दर ने ठाठ से चाय घूँटते हुए कहा। सुधा कुढ़ गयी। कुछ बोली नहीं। चाय खत्म करके चन्दर ने घड़ी देखी।

"अच्छा लाओ, क्या टाइप कराना है? अब बहुत देर हो रही है।"

"बस यहाँ तो एक मिनट बैठना बुरा लगता है आपको! हम कहते हैं कि नाश्ते और खाने के वक्त आदमी को जल्दी नहीं करनी चाहिए। बैठिए न!"

"अरे, तो तुम्हें कॉलेज की तैयारी नहीं करनी है?"

"करनी क्यों नहीं है। आज तो गेसू को मोटर पर लेते हुए तब जाना है!"

"तुम्हारी गेसू और कभी मोटर पर चढ़ी है?"

"जी, वह साबिर हुसैन काजमी की लड़की है, उसके यहाँ दो मोटरें हैं और रोज तो उसके यहाँ दावतें होती रहती हैं।"

"अच्छा, हमारी तो दावत कभी नहीं की?"

"अहा हा, गेसू के यहाँ दावत खाएँगे! इसी मुँह से! जनाब उसकी शादी भी तय हो गयी है, अगले जाड़ों तक शायद हो भी जाय।"

"छि:, बड़ी खराब लड़की हो! कहाँ रहता है ध्यान तुम्हारा?"

सुधा ने मजाक में पराजित कर बहुत विजय-भरी मुसकान से उसकी ओर देखा। चन्दर ने झेंपकर निगाह नीची कर ली तो सुधा पास आकर चन्दर का कन्धा पकड़कर बोली–"अरे उदास हो गये, नहीं भइया, तुम्हारा भी ब्याह तय कराएँगे, घबराते क्यों हो!" और एक मोटी-सी इकनॉमिक्स की किताब उठाकर बोली, "लो, इस मुटकी से ब्याह करोगे! लो बातचीत कर लो, तब तक मैं वह निबन्ध ले आऊँ, टाइप कराने वाला।"

चन्दर ने खिसियाकर बड़ी जोर से सुधा का हाथ दबाया। "हाय रे!" सुधा ने हाथ छुड़ाकर मुँह बनाते हुए कहा, "लो बाबा, हम जा रहे हैं, काहे बिगड़ रहे हैं आप?" और वह चली गयी! डॉक्टर साहब का लिखा हुआ निबन्ध उठा लायी और बोली, "लो, यह निबन्ध की पाण्डुलिपि है।" उसके बाद चन्दर की ओर बड़े दुलार से देखती हुई बोली, "शाम को आओगे?"

"न!"

"अच्छा, हम परेशान नहीं करेंगे। तुम चुपचाप पढ़ना। जब रात को पापा आ जाएँ तो उन्हें निबन्ध की प्रतिलिपि देकर चले जाना!"

"नहीं, आज शाम को मेरी दावत है ठाकुर साहब के यहाँ।"

"तो उसके बाद आ जाना। और देखो, अब फरवरी आ गयी है, मास्टर ढूँढ़ दो हमें।"

"नहीं, ये सब झूठी बात है। हम कल सुबह आएँगे।"

"अच्छा, तो सुबह जल्दी आना और देखो, मास्टर लाना मत भूलना। ड्राइवर तुम्हें मुकर्जी रोड पहुँचा देगा।"

वह कार में बैठ गया और कार स्टार्ट हो गयी कि फिर सुधा ने पुकारा। वह फिर उतरा। सुधा बोली, "लो, यह लिफाफा तो भूल ही गये थे। पापा ने लिख दिया है। उसे दे देना।"

"अच्छा।" कहकर फिर चन्दर चला कि फिर सुधा ने पुकारा, "सुनो!"

"एक बार में क्यों नहीं कह देती सब!" चन्दर ने झल्लाकर कहा।

"अरे बड़ी गम्भीर बात है। देखो, वहाँ कुछ ऐसी-वैसी बात मत कहना लड़की से, वरना उसके यहाँ दो बड़े-बड़े बुलडॉग हैं।" कहकर उसने गाल फुलाकर, आँख फैलाकर ऐसी बुलडॉग की भंगिमा बनायी कि चन्दर हँस पड़ा। सुधा भी हँस पड़ी।

ऐसी थी सुधा, और ऐसा था चन्दर।

सिविल लाइन्स के एक उजाड़ हिस्से में एक पुराने-से बँगले के सामने आकर मोटर रुकी। बँगले का नाम था 'रोज़लान' लेकिन सामने के कम्पाउंड में जंगली घास उग रही थी और गुलाब के फूलों के बजाय अहाते में मुरगी के पंख बिखरे पड़े थे। रास्ते पर भी घास उग आयी थी और फाटक पर, जिसके एक खम्भे की कॉर्निस टूट चुकी थी, बजाय लोहे के दरवाजे के दो आड़े बाँस लगे हुए थे। फाटक के एक ओर एक छोटा-सा लकड़ी का नामपटल लगा था, जो कभी काला रहा होगा, लेकिन जिसे धूल, बरसात और हवा ने चितकबरा बना दिया था। चन्दर मोटर से उतरकर उस बोर्ड पर लिखे हुए अधमिटे सफेद अक्षरों को पढ़ने की कोशिश करने लगा, और जाने किसका मुँह देखकर सुबह उठा था कि उसे सफलता भी मिल गयी। उस पर लिखा था, 'ए.एफ. डिक्रूज'। उसने जेब से लिफाफा निकाला और पता मिलाया। लिफाफे पर लिखा था, 'मिस पी. डिक्रूज'। यही बँगला है, उसे सन्तोष हुआ।

"हॉर्न दो!" उसने ड्राइवर से कहा। ड्राइवर ने हॉर्न दिया। लेकिन किसी का बाहर आना तो दूर, एक मुरगा, जो अहाते में कुड़कुड़ा रहा था, उसने मुड़कर बड़े सन्देह और त्रास से चन्दर की ओर देखा और उसके बाद पंख फड़फड़ाते हुए, चीखते हुए जान छोड़कर भागा। "बड़ा मनहूस बँगला है, यहाँ आदमी रहते हैं या प्रेत?" कपूर ने ऊबकर कहा और ड्राइवर से बोला, "जाओ तुम, हम अन्दर जाकर देखते हैं!"

"अच्छा हुजूर, सुधा बीबी से क्या कह देंगे?"

"कह देना, पहुँचा दिया।"

कार मुड़ी और कपूर बाँस फाँदकर अन्दर घुसा। आगे का पोर्टिको खाली पड़ा था और नीचे की जमीन ऐसी थी जैसे कई साल से उस बँगले में कोई सवारी गाड़ी न आयी हो। वह बरामदे में गया। दरवाजे बन्द थे और उन पर धूल जमी थी। एक जगह चौखट और दरवाजे के बीच में मकड़ी ने जाला बुन रखा था। 'यह बँगला खाली है क्या?' कपूर ने सोचा। सुबह साढ़े आठ बजे ही वहाँ ऐसा सन्नाटा छाया था कि दिल घबरा जाय। आसपास चारों ओर आधी फर्लांग तक कोई बँगला नहीं था। उसने सोचा

बँगले के पीछे की ओर शायद नौकरों की झोंपड़ियाँ हों। वह दायें बाजू से मुड़ा और खुशबू का एक तेज झोंका उसे चूमता हुआ निकल गया। 'ताज्जुब है, यह सन्नाटा, यह मनहूसी और इतनी खुशबू!' कपूर ने कहा और आगे बढ़ा तो देखा कि बँगले के पिछवाड़े गुलाब का एक बहुत खूबसूरत बाग है। कच्ची रविशें और बड़े-बड़े गुलाब, हर रंग के। वह सचमुच 'रोज़लान' था।

वह बाग में पहुँचा। उधर से भी बँगले के दरवाजे बन्द थे। उसने खटखटाया लेकिन कोई जवाब नहीं मिला। वह बाग में घुसा कि शायद कोई माली काम कर रहा हो। बीच-बीच में ऊँचे-ऊँचे जंगली चमेली के झाड़ थे और कहीं-कहीं लोहे की छड़ों के कटघरे। बेगमबेलिया भी फूल रही थी लेकिन चारों ओर एक अजब-सा सन्नाटा था और हर फूल पर किसी खामोशी के फरिश्ते की छाँह थी। फूलों में रंग था, हवा में ताजगी थी, पेड़ों में हरियाली थी, झोंकों में खुशबू थी, लेकिन फिर भी सारा बाग एक ऐसे सितारों का गुलदस्ता लग रहा था जिनकी चमक, जिनकी रोशनी और जिनकी ऊँचाई लुट चुकी हो। लगता था जैसे बाग का मालिक मौसमी रंगीनी भूल चुका हो, क्योंकि नैस्टर्शियम या स्वीटपी या फ्लाक्स, कोई भी मौसमी फूल न था, सिर्फ गुलाब थे और जंगली चमेली थी और बेगमबेलिया थी जो सालों पहले बोये गये थे। उसके बाद उन्हीं की काट-छाँट पर बाग चल रहा था। बागवानी में कोई नवीनता और मौसम का उल्लास न था।

चन्दर फूलों का बेहद शौकीन था। सुबह घूमने के लिए उसने दरिया किनारे के बजाय अल्फ्रेड पार्क चुना था क्योंकि पानी की लहरों के बजाय उसे फूलों के बाग के रंग और सौरभ की लहरों से बेहद प्यार था। और उसे दूसरा शौक था कि फूलों के पौधों के पास से गुजरते हुए हर फूल को समझने की कोशिश करना। अपनी नाजुक टहनियों पर हँसते-मुसकराते हुए ये फूल जैसे अपने रंगों की बोली में आदमी से जिन्दगी का जाने कौन-सा राज कहना चाहते हैं। और ऐसा लगता है कि जैसे हर फूल के पास अपना व्यक्तिगत सन्देश है जिसे वह अपने दिल की पाँखुरियों में आहिस्ते से सहेज कर रखे हुए हैं कि कोई सुनने वाला मिले और वह अपनी दास्ताँ कह जाए। पौधे की ऊपरी फुनगी पर मुसकराता हुआ आसमान की तरफ मुँह किये हुए यह गुलाब जो रात-भर सितारों की मुसकराहट चुपचाप पीता रहा है, यह अपने मोतियों-पाँखुरियों के होंठों से जाने क्यों खिलखिलाता ही जा रहा है। जाने इसे कौन-सा रहस्य मिल गया है। और वह एक नीचे वाली टहनी का आधा झुका हुआ गुलाब, झुकी हुई पलकों-सी पाँखुरियाँ और दोहरे मखमली तार-सी उसकी डंडी, यह गुलाब जाने क्यों उदास है? और यह दुबली-पतली लम्बी-सी नाजुक कली जो बहुत सावधानी से हरा आँचल लपेटे है और

प्रथम ज्ञात-यौवना की तरह लाज में जो सिमटी तो सिमटी ही चली जा रही है, लेकिन जिसके यौवन की गुलाबी लपटें सात हरे परदों में से झलकी ही पड़ती हैं, झलकी ही पड़ती हैं। और फारस के शाहजादे जैसा शान से खिला हुआ पीला गुलाब! उस पीले गुलाब के पास आकर चन्दर रुक गया और झुककर देखने लगा। कातिक पूनो के चाँद से झरनेवाले अमृत को पीने के लिए व्याकुल किसी सुकुमार, भावुक परी की फैली हुई अंजलि के बराबर बड़ा-सा वह फूल जैसे रोशनी बिखेर रहा था। बेगमबेलिया के कुंज से छनकर आने वाली तोतापंखी धूप ने जैसे उस पर धान-पान की तरह खुशनुमा हरियाली बिखेर दी थी। चन्दर ने सोचा, उसे तोड़ ले लेकिन हिम्मत न पड़ी। वह झुका कि उसे सूँघ ही ले। सूँघने के इरादे से उसने हाथ बढ़ाया ही था कि किसी ने पीछे से गरजकर कहा, "हीयर यू आर, आई हैव काट रेड हैंडेड टुडे!" (यह तुम हो; आज तुम्हें मौके पर पकड़ पाया हूँ)

और उसके बाद किसी ने अपने दोनों हाथों में जकड़ लिया और उसकी गरदन पर सवार हो गया। वह उछल पड़ा और अपने को छुड़ाने की कोशिश करने लगा। पहले तो वह कुछ समझ नहीं पाया। अजब रहस्यमय है यह बँगला। एक अव्यक्त भय और एक सिहरन में उसके हाथ-पाँव ढीले हो गये। लेकिन उसने हिम्मत करके अपना एक हाथ छुड़ा लिया और मुड़कर देखा तो एक बहुत कमजोर, बीमार-सा, पीली आँखों वाला गोरा उसे पकड़े हुए था। चन्दर के दूसरे हाथ को फिर पकड़ने की कोशिश करता हुआ वह हाँफता हुआ बोला (अँग्रेजी में) "रोज-रोज यहाँ से फूल गायब होते थे। मैं कहता था, कहता था, कौन ले जाता है। हो...हो...", वह हाँफता जा रहा था, "आज मैंने पकड़ा तुम्हें। रोज चुपके से चले जाते थे..." वह चन्दर को कसकर पकड़े था लेकिन उस बीमार गोरे की साँस जैसे छूटी जा रही थी। चन्दर ने उसे झटका देकर धकेल दिया और डाँटकर बोला, "क्या मतलब है तुम्हारा! पागल है क्या! खबरदार जो हाथ बढ़ाया, अभी ढेर कर दूँगा तुझे! गोरा सूअर?" और उसने अपनी आस्तीनें चढ़ायीं।

वह धक्के से गिर गया था, धूल झाड़ते उठ बैठा और बड़ी ही रोनी आवाज में बोला, "कितना जुल्म है, कितना जुल्म है! मेरे फूल भी तुम चुरा ले गये और मुझे इतना हक भी नहीं कि तुम्हें धमकाऊँ! अब तुम मुझसे लड़ोगे! तुम जवान हो, मैं बूढ़ा हूँ। हाय रे मैं!" और सचमुच वह जैसे रोने लगा हो।

चन्दर ने उसका रोना देखा और उसका सारा गुस्सा हवा हो गया और हँसी रोककर बोला, "गलतफहमी है, जनाब! मैं बहुत दूर रहता हूँ। मैं चिट्ठी लेकर मिस डिक्रूज से मिलने आया था।"

उसका रोना नहीं रुका, "तुम बहाना बनाते हो, बहाना बनाते हो और अगर मैं विश्वास नहीं करता तो तुम मारने की धमकी देते हो? अगर मैं कमजोर न होता... तो तुम्हें पीसकर खा जाता और तुम्हारी खोपड़ी कुचलकर फेंक देता जैसे तुमने मेरे फूल फेंके होंगे?"

"फिर तुमने गाली दी! मैं उठाकर तुम्हें अभी नाले में फेंक दूँगा!"

"अरे बाप रे! दौड़ो, दौड़ो, मुझे मार डाला...पापी...टामी...अरे दोनों कुत्ते मर गये...।" उसने डर के मारे चीखना शुरू किया।

"क्या है, बर्टी? क्यों चिल्ला रहे हो?" बाथरूम के अन्दर से किसी ने चिल्लाकर कहा।

"अरे मार डाला इसने...दौड़ो-दौड़ो!"

झटके से बाथरूम का दरवाजा खुला बेदिङ्ग गाउन पहने हुए एक लड़की दौड़ती हुई आयी और चन्दर को देखकर रुक गयी।

"क्या है?" उसने डाँटकर पूछा।

"कुछ नहीं, शायद पागल मालूम देता है!"

"जबान सँभालकर बोलो, वह मेरा भाई है!"

"ओह! कोई भी हो। मैं मिस डिक्रूज से मिलने आया था। मैंने आवाज दी तो कोई नहीं बोला। मैं बाग में घूमने लगा। इतने में इसने मेरी गरदन पकड़ ली। यह बीमार और कमजोर है वरना अभी गरदन दबा देता।"

गोरा उस लड़की के आते ही फिर तनकर खड़ा हो गया और दाँत पीसकर बोला, "अरे मैं तुम्हारे दाँत तोड़ दूँगा। बदमाश कहीं का, चुपके-चुपके आया और गुलाब तोड़ने लगा। मैं चमेली की झाड़ के पीछे छिपा देख रहा था।"

"अभी मैं पुलिस बुलाती हूँ, तुम देखते रहो बर्टी इसे। मैं फोन करती हूँ।"

लड़की ने डाँटते हुए कहा।

"अरे भाई, मैं मिस डिक्रूज से मिलने आया हूँ।"

"मैं तुम्हें नहीं जानती, झूठा कहीं का। मैं मिस डिक्रूज हूँ।"

"देखिए तो यह खत!"

लड़की ने खत खोला और पढ़ा और एकदम उसने आवाज बदल दी।

"छि: बर्टी, तुम किसी दिन पागलखाने जाओगे। आपको डॉ. शुक्ला ने भेजा है। तुम तो मुझे बदनाम करा डालोगे!"

उसकी शक्ल और भी रोनी हो गयी, "मैं नहीं जानता था, मैं जानता नहीं था।" उसने और भी घबराकर कहा।

"माफ कीजिएगा!" लड़की ने बड़े मीठे स्वर में साफ हिन्दुस्तानी में कहा, "मेरे भाई का दिमाग ज़रा ठीक नहीं रहता, जब से इनकी पत्नी की मौत हो गयी।"

"इसका मतलब ये नहीं कि ये किसी भले आदमी की इज्जत उतार लें।" चन्दर ने बिगड़कर कहा।

"देखिए, बुरा मत मानिए। मैं इनकी ओर से माफी माँगती हूँ। आइए, अन्दर चलिए।" उसने चन्दर का हाथ पकड़ लिया। उसका हाथ बेहद ठंडा था। वह नहाकर आ रही थी। उसके हाथ के उस तुषार स्पर्श से चन्दर सिहर उठा और उसने हाथ झटककर कहा, "अफसोस, आपका हाथ तो बर्फ है?"

लड़की चौंक गयी। वह सद्य:स्नाता सहसा सचेत हो गयी और बोली, "अरे शैतान तुम्हें ले जाए, बर्टी! तुम्हारे पीछे मैं बेदिङ् गाउन में भाग आयी।" और बेदिङ् गाउन के दोनों कालर पकड़कर उसने अपनी खुली गरदन ढँकने का प्रयास किया और फिर अपनी पोशाक पर लज्जित होकर भागी।

अभी तक गुस्से के मारे चन्दर ने उस पर ध्यान नहीं दिया था। लेकिन उसने देखा कि वह तेईस बरस की दुबली-पतली तरुणी है। लहराता हुआ बदन, गले तक कटे हुए बाल। एंग्लो इंडियन होने के बावजूद गोरी नहीं है। चाय की तरह वह हल्की, पतली, भूरी और तुर्श थी। भागते वक्त ऐसी लग रही थी, जैसे छलकती हुई चाय।

इतने में वह गोरा उठा और चन्दर का कन्धा छूकर बोला, "माफ करना, भाई! उससे मेरी शिकायत मत करना। असल में ये गुलाब मेरी मृत पत्नी की यादगार हैं। जब इनका पहले पेड़ आया था तब मैं इतना ही जवान था जितने तुम, और मेरी पत्नी उतनी ही अच्छी थी जितनी पम्मी।"

"कौन पम्मी?"

"यह मेरी बहन प्रमिला डिक्रूज!"

"ओह! कब मरी आपकी पत्नी? माफ कीजिएगा मुझे भी मालूम नहीं था!"

"हाँ, मैं बड़ा अभागा हूँ। मेरा दिमाग कुछ खराब है; देखिए!" कहकर उसने झुककर अपनी खोपड़ी चन्दर के सामने कर दी और बहुत गिड़गिड़ाकर बोला, "पता नहीं कौन मेरे फूल चुरा ले जाता है! अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद पाँच साल से मैं इन फूलों को सँभाल रहा हूँ। हाय रे मैं! जाइए, पम्मी बुला रही है।"

पिछवाड़े के सहन का बीच का दरवाजा खुल गया था और पम्मी कपड़े पहनकर बाहर झाँक रही थी। चन्दर आगे बढ़ा और गोरा मुड़कर अपने गुलाब और चमेली की झाड़ी में खो गया। चन्दर गया और कमरे में पड़े हुए सोफा पर बैठ गया। पम्मी ट्वायलेट

कर चुकी थी और एक हल्की फ्रांसीसी खुशबू से महक रही थी। शैम्पू से धुले हुए रूखे बाल जो मचले पड़ रहे थे, खुशनुमा आसमानी रंग का एक पतला चिपका हुआ झीना ब्लाउज और ब्लाउज पर एक फ्लैनेल का फुलपैंट जिसके दो गेलिस कमर, छाती और कन्धे पर चिपके हुए थे। होंठों पर एक हल्की लिपस्टिक की झलक मात्र थी, और गले तक बहुत हल्का पाउडर, जो बहुत नजदीक से ही मालूम होता था। लम्बे नाखूनों पर हल्की गुलाबी पेंट। वह आयी, निस्संकोच भाव से उसी सोफे पर कपूर के बगल में बैठ गयी और बड़ी मुलायम आवाज में बोली, "मुझे बड़ा दु:ख है, मिस्टर कपूर! आपको बहुत तवालत उठानी पड़ी। चोट तो नहीं आयी?"

"नहीं नहीं, कोई बात नहीं!" कपूर का सारा गुस्सा हवा हो गया। कोई भी लड़की नि:संकोच भाव से, इतनी अपनायत से सहानुभूति दिखाये और माफी माँगे, तो उसके सामने कौन पानी-पानी नहीं हो जाएगा, और फिर वह भी तब जबकि उसके होंठों पर न केवल बोली अच्छी लगती हो, वरन् लिपस्टिक भी इतनी प्यारी हो। लेकिन चन्दर की एक आदत थी। और चाहे कुछ न हो, कम-से-कम वह यह अच्छी तरह जानता था कि नारी जाति से व्यवहार करते समय कहाँ पर कितनी ढील देनी चाहिए, कितना कसना चाहिए, कब सहानुभूति से उन्हें झुकाया जा सकता है, कब अकड़कर। इस वक्त जानता था कि इस लड़की से वह जितनी सहानुभूति चाहे, ले सकता है, अपने अपमान के हर्जाने के तौर पर। इसलिए कपूर साहब बोले, "लेकिन मिस डिक्रूज, आपके भाई बीमार होने के बावजूद बहुत मजबूत हैं। उफ! गरदन पर जैसे अभी तक जलन हो रही है।"

"ओहो! सचमुच मैं बहुत शर्मिन्दा हूँ। देखूँ!" और कालर हटाकर उसने गरदन पर अपनी बर्फीली अँगुलियाँ रख दीं, "लाइए, लोशन मल दूँ मैं!"

"धन्यवाद धन्यवाद, इतना कष्ट न कीजिए। आपकी अँगुलियाँ गन्दी हो जाएँगी!" कपूर ने बड़ी शालीनता से कहा।

पम्मी के होंठों पर एक हल्की-सी मुसकराहट, आँखों में हल्की-सी लाज और वक्ष में एक हल्का-सा कम्पन दौड़ गया। यह वाक्य कपूर ने चाहे शरारत में ही कहा हो, लेकिन कहा इतने शान्त और संयत स्वरों में कि पम्मी कुछ प्रतिवाद भी न कर सकी और फिर छह बरस से साठ बरस तक की कौन ऐसी स्त्री है जो अपने रूप की प्रशंसा पर बेहाश न हो जाए।

"अच्छा लाइए, वह स्पीच कहाँ है जो मुझे टाइप करनी है।" उसने विषय बदलते हुए कहा।

"यह लीजिए।" कपूर ने दे दी।

"यह तो मुश्किल से तीन-चार घण्टे का काम है?" और पम्मी स्पीच को उलट-पुलटकर देखने लगी।

"माफ कीजिएगा, अगर मैं कुछ व्यक्तिगत सवाल पूछूँ; क्या आप टाइपिस्ट हैं!" कपूर ने बहुत शिष्टता से पूछा।

"जी नहीं!" पम्मी ने उन्हीं कागजों पर नज़र गड़ाते हुए कहा, "मैंने कभी टाइपिंग और शार्टहैंड सीखी थी, और तब मैं सीनियर कैम्ब्रिज पास करके यूनिवर्सिटी गयी थी। यूनिवर्सिटी मुझे छोड़नी पड़ी, क्योंकि मैंने अपनी शादी कर ली।"

"अच्छा, आपके पति कहाँ हैं?"

"रावलपिंडी में, आर्मी में।"

"लेकिन फिर आप डिक्रूज क्यों लिखती हैं, और फिर मिस?"

"क्योंकि हम लोग अलग हो गये हैं।" और स्पीच के कागज को फिर तह करती हुई बोली–

"मिस्टर कपूर, आप अविवाहित हैं?"

"जी हाँ?"

"और विवाह करने का इरादा तो नहीं रखते?"

"नहीं।"

"बहुत अच्छे। तब तो हम लोगों में निभ जाएगी। मैं शादी से बहुत नफरत करती हूँ। शादी अपने को दिया जानेवाला सबसे पड़ा धोखा है। देखिए, ये मेरे भाई हैं न, कैसे पीले और बीमार-से हैं। ये पहले बड़े तन्दुरुस्त और टेनिस में प्रान्त के अच्छे खिलाड़ियों में से थे। एक बिशप की दुबली-पतली भावुक लड़की से इन्होंने शादी कर ली, और उसे बेहद प्यार करते थे। सुबह-शाम, दोपहर, रात कभी उसे अलग नहीं होने देते थे। हनीमून के लिए उसे लेकर सीलोन गये थे। वह लड़की बहुत कलाप्रिय थी। बहुत अच्छा नाचती थी, बहुत अच्छा गाती थी और खुद गीत लिखती थी। यह गुलाब का बाग उसी ने बनवाया था और इन्हीं के बीच में दोनों बैठकर घंटों गुजार देते थे।

"कुछ दिनों बाद दोनों में झगड़ा हुआ। क्लब में बॉल डांस था और उस दिन वह लड़की बहुत अच्छी लग रही थी। बहुत अच्छी। डांस के वक्त इनका ध्यान डांस की तरफ कम था, अपनी पत्नी की तरफ ज्यादा। इन्होंने आवेश में उसकी अँगुलियाँ जोर से दबा दीं। वह चीख पड़ी और सभी इन लोगों की ओर देखकर हँस पड़े।

"वह घर आयी और बहुत बिगड़ी, बोली, 'आप नाच रहे थे या टेनिस का मैच

खेल रहे थे, मेरा हाथ था या टेनिस का रैकट?' इस बात पर बर्टी भी बिगड़ गया, और उस दिन से जो इन लोगों में खटकी तो फिर कभी न बनी। धीरे-धीरे वह लड़की एक सार्जेंट को प्यार करने लगी। बर्टी को इतना सदमा हुआ कि वह बीमार पड़ गया। लेकिन बर्टी ने तलाक नहीं दिया, उस लड़की से कुछ कहा भी नहीं, और उस लड़की ने सार्जेंट से प्यार जारी रखा लेकिन बीमारी में बर्टी की बहुत सेवा की। बर्टी अच्छा हो गया। उसके बाद उसको एक बच्ची हुई और उसी में वह मर गयी। हालाँकि हम लोग सब जानते हैं कि वह बच्ची उस सार्जेंट की थी लेकिन बर्टी को यकीन नहीं होता कि वह सार्जेंट को प्यार करती थी। वह कहता है, 'यह दूसरे को प्यार करती होती तो मेरी इतनी सेवा कैसे कर सकती थी भला!' उस बच्ची का नाम बर्टी ने रोज रखा। और उसे लेकर दिनभर उन्हीं गुलाब के पेड़ों की बीच में बैठा करता था जैसे अपनी पत्नी को लेकर बैठता था। दो साल बाद बच्ची को साँप ने काट लिया, वह मर गयी और तब से बर्टी का दिमाग ठीक नहीं रहता। खैर, जाने दीजिए। आइए, अपना काम शुरू करें। चलिए, अन्दर के स्टडी-रूप में चलें!"

"चलिए!" चन्दर बोला। और पम्मी के पीछे-पीछे चल दिया। मकान बहुत बड़ा था और पुराने अँग्रेजों के ढंग पर सजा हुआ था। बाहर से जितना पुराना और गन्दा नज़र आता था, अन्दर से उतना ही आलीशान और सुथरा। ईस्ट इंडिया कम्पनी के जमाने की छाप थी अन्दर। यहाँ तक कि बिजली लगने के बावजूद अन्दर पुराने बड़े-बड़े हाथ से खींचे जाने वाले पंखे लगे थे। दो कमरों को पार कर वे लोग स्टडी-रूम में पहुँचे। बड़ा-कमरा जिसमें चारों तरफ आलमारियों में किताबें सजी हुई थीं। चार कोने में चार मेजें लगी हुई थीं जिनमें कुछ बस्ट और कुछ तस्वीरें स्टैंड के सहारे रखी हुई थीं। एक आलमारी में नीचे खाने में टाइपराइटर रखा था। पम्मी ने बिजली जला दी और टाइपराइटर खोल कर साफ करने लगी। चन्दर घूमकर किताबें देखने लगा। एक कोने में कुछ मराठी की किताबें रखी थीं। उसे बड़ा ताज्जुब हुआ–"अच्छा पम्मी, ओह, माफ कीजिएगा, मिस डिक्रूज..."

"नहीं, आप मुझे पम्मी पुकार सकते हैं। मुझे यही नाम अच्छा लगता है–हाँ, क्या पूछ रहे थे आप?"

"क्या आप मराठी भी जानती हैं?"

"नहीं, मैं तो नहीं, मेरी नानीजी जानती थीं। क्या आपको डॉक्टर शुक्ला ने हम लोगों के बारे में कुछ नहीं बताया?"

"नहीं!" कपूर ने कहा।

"अच्छा! ताज्जुब है!" पम्मी बोली, "आपने ट्रेनाली डिक्रूज का नाम सुना है न?"

"हाँ हाँ, डिक्रूज जिन्होंने कौशाम्बी में खुदाई करवायी थी। वह तो बहुत बड़े पुरातत्त्ववेत्ता थे?" कपूर ने कहा।

"हाँ, वही। वह मेरे सगे नाना थे। और वह अँग्रेज नहीं थे, मराठा थे और उन्होंने मेरी नानी से शादी की थी जो एक कश्मीरी ईसाई महिला थीं। उनके कारण भारत में उन्हें ईसाइयत अपनानी पड़ी। यह मेरे नाना का ही मकान है और अब हम लोगों को मिल गया है। डॉ. शुक्ला के दोस्त मिस्टर श्रीवास्तव बैरिस्टर हैं न, वे हमारे खानदान के ऐटर्नी थे। उन्होंने और डॉ. शुक्ला ने ही यह जायदाद हमें दिलवायी। लीजिए, मशीन तो ठीक हो गयी।" उसने टाइपराइटर में कार्बन और कागज लगाकर कहा, "लाइए निबन्ध!"

इसके बाद घंटे-भर तक टाइपराइटर रुका नहीं। कपूर ने देखा कि यह लड़की जो व्यवहार में इतनी सरल और स्पष्ट है, फैशन में इतनी नाजुक और शौकीन है, काम करने में उतनी ही मेहनती और तेज भी है। उसकी अँगुलियाँ मशीन की तरह चल रही थीं। और तेज इतनी कि एक घण्टा में उसने लगभग आधी पाण्डुलिपि टाइप कर डाली थी। ठीक एक घंटे के बाद उसने टाइपराइटर बन्द कर दिया, बगल में बैठे हुए कपूर की ओर झुककर कहा, "अब थोड़ी देर आराम।" और अपनी अँगुलियाँ चटखाने के बाद वह कुरसी खिसकाकर उठी और एक भरपूर अँगड़ाई ली। उसका अंग-अंग धनुष की तरह झुक गया। उसके बाद कपूर के कन्धे पर बेतकल्लुफी से हाथ रखकर बोली, "क्यों, एक प्याला चाय मँगवायी जाय?"

"मैं तो पी चुका हूँ।"

"लेकिन मुझसे तो काम होने से रहा अब बिना चाय के।" पम्मी एक अल्हड़ बच्ची की तरह बोली, और अन्दर चली गयी। कपूर ने टाइप किये हुए कागज उठाये और कलम निकालकर उनकी गलतियाँ सुधारने लगा। चाय पीकर थोड़ी देर में पम्मी वापस आयी और बैठ गयी। उसने एक सिगरेट केस कपूर के सामने किया।

"धन्यवाद, मैं सिगरेट नहीं पीता।"

"अच्छा, ताज्जुब है, आपकी इजाजत हो तो मैं सिगरेट पी लूँ!"

"क्या आप सिगरेट पीती हैं? छिः, पता नहीं क्यों औरतों का सिगरेट पीना मुझे बहुत ही नापसन्द है।"

"मेरी तो मजबूरी है मिस्टर कपूर, मैं यहाँ के समाज में मिलती-जुलती नहीं, अपने विवाह और अपने तलाक के बाद मुझे एंग्लो इंडियन समाज से नफरत हो गयी है। मैं अपने दिल से हिन्दुस्तानी हूँ। लेकिन हिन्दुस्तानियों से घुलना-मिलना हमारे लिए सम्भव नहीं। घर में अकेले रहती हूँ। सिगरेट और चाय से तबीयत बदल जाती है। किताबों का मुझे शौक नहीं।"

"तलाक के बाद आपने पढ़ाई जारी क्यों नहीं रखी?" कपूर ने पूछा।

"मैंने कहा न, कि किताबों का मुझे शौक नहीं बिल्कुल!" पम्मी बोली। "और मैं अपने को आदमियों में घुलने-मिलने के लायक नहीं पाती। तलाक के बाद साल-भर तक मैं अपने घर में बन्द रही। मैं और बर्टी। सिर्फ बर्टी से बात करने का मौका मिला। बर्टी मेरा भाई, वह भी बीमार और बूढ़ा। कहीं कोई तकल्लुफ की गुंजाइश नहीं। अब मैं हरेक से बेतकल्लुफी से बात करती हूँ तो कुछ लोग मुझ पर हँसते हैं, कुछ लोग मुझे सभ्य समाज के लायक नहीं समझते, कुछ लोग उसका गलत मतलब निकालते हैं। इसलिए मैंने अपने को अपने बँगले में ही कैद कर लिया है। अब आप ही हैं, आज पहली बार मैंने देखा आपको। मैं समझी ही नहीं कि आपसे कितना दुराव रखना चाहिए। अगर आप भलेमानस न हों तो आप इसका गलत मतलब निकाल सकते हैं।"

"अगर यही बात हो तो..." कपूर हँसकर बोला, "सम्भव है कि मैं भलेमानस बनने के बजाय गलत मतलब निकालना ज्यादा पसन्द करूँ!"

"तो सम्भव है मैं मजबूर होकर आपसे भी न मिलूँ!" पम्मी गम्भीरता से बोली।

"नहीं, मिस डिक्रूज..."

"नहीं, आप पम्मी कहिए, डिक्रूज नहीं!"

"पम्मी सही, आप गलत न समझें, मैं मजाक कर रहा था।" कपूर बोला। उसने इतनी देर में समझ लिया था कि यह साधारण ईसाई छोकरी नहीं है।

इतने में बर्टी लड़खड़ाता हुआ, हाथ में धूल सना खुरपा लिये आया और चुपचाप खड़ा हो गया और अपनी धुँधली पीली आँखों से एकटक कपूर को देखने लगा। कपूर ने एक कुरसी खिसका दी और कहा, "आइए!" पम्मी उठी और बर्टी के कन्धे पर एक हाथ रखकर उसे सहारा देकर कुरसी पर बिठा दिया। बर्टी बैठ गया और आँखें बन्द कर लीं। उसका बीमार कमजोर व्यक्तित्व जाने कैसा लगता था कि पम्मी और कपूर दोनों चुप हो गये। थोड़ी देर बाद बर्टी ने आँखें खोलीं और बहुत करुण स्वर में बोला, "पम्मी, तुम नाराज हो, मैंने जान-बूझकर तुम्हारे मित्र का अपमान नहीं किया था?"

"अरे नहीं!" पम्मी ने उठकर बर्टी का माथा सहलाते हुए कहा, "मैं तो भूल गयी और कपूर भी भूल गये?"

"अच्छा, धन्यवाद! पम्मी, अपना हाथ इधर लाओ!" और वह पम्मी के हाथ पर सिर रखकर पड़ा रहा और बोला, "मैं कितना अभागा हूँ! कितना अभागा! अच्छा पम्मी, कल रात को तुमने सुना था, वह आयी थी और पूछ रही थी, बर्टी तुम्हारी तबीयत अब ठीक है, मैंने झट अपने आँखें ढँक लीं कि कहीं आँखों का पीलापन देख न ले। मैंने कहा, तबीयत अब ठीक है, मैं अच्छा हूँ तो उठी और जाने लगी। मैंने पूछा, कहाँ चली, तो बोली सार्जेंट के साथ ज़रा क्लब जा रही हूँ। तुमने सुना था पम्मी?"

कपूर स्तब्ध-सा उन दोनों की ओर देख रहा था। पम्मी ने कपूर को आँख का इशारा करते हुए कहा, "हाँ, हमसे मिली थी वह, लेकिन बर्टी, वह सार्जेंट के साथ नहीं गयी थी!"

"हाँ, तब?" बर्टी की आँखें चमक उठीं और उसने उल्लास-भरे स्वर में पूछा।

"वह बोली, बर्टी के ये गुलाब सार्जेंट से ज्यादा प्यारे हैं।" पम्मी बोली।

"अच्छा!" मुसकराहट से बर्टी का चेहरा खिल उठा, उसकी पीली-पीली आँखें और धँस गयीं और दाँत बाहर झलकने लगे, "हूँ! क्या कहा उसने, फिर तो कहो!"

उसने कहा, "ये गुलाब सार्जेंट से ज्यादा प्यारे हैं, फिर इन्हीं गुलाबों पर नाचती रही और सुबह होते ही इन्हीं फूलों में छिप गयी! तुम्हें सुबह किसी फूल में तो नहीं मिली?"

"उहूँ, तुम्हें तो किसी फूल में नहीं मिली?" बर्टी ने बच्चों के-से भोले विश्वास के स्वरों में कपूर से पूछा।

चन्दर चौंक उठा। पम्मी और बर्टी की इन बातों पर उसका मन बेहद भर आया था। बर्टी की मुसकराहट पर उसकी नसें थरथरा उठी थीं।

"नहीं; मैंने तो नहीं देखा था।" चन्दर ने कहा।

बर्टी ने फिर मायूसी से सिर झुका लिया और आँखें बन्द कर लीं और कराहती हुई आवाज में बोला, "जिस फूल में वह छिप गयी थी, उसी को किसी ने चुरा लिया होगा!" फिर सहसा वह तनकर खड़ा हो गया और पुचकारते हुए बोला, "जाने कौन ये फूल चुराता है! अगर मुझे एक बार मिल जाए तो मैं उसका खून ऐसे पी लूँ!" उसने हाथ की अँगुली काटते हुए कहा और उठकर लड़खड़ाता हुआ चला गया।

वातावरण इतना भारी हो गया था कि फिर पम्मी और कपूर ने कोई बातें नहीं कीं। पम्मी ने चुपचाप टाइप करना शुरू किया और कपूर चुपचाप बर्टी की बातें सोचता रहा। घण्टा-भर बाद टाइपराइटर खामोश हुआ तो कपूर ने कहा–

"पम्मी, मैंने जितने लोग देखे हैं उनमें शायद बर्टी सबसे विचित्र है और शायद सबसे दयनीय!"

पम्मी खामोश रही। फिर उसी लापरवाही से अँगड़ाई लेते हुए बोली, "मुझे बर्टी की बातों पर ज़रा भी दया नहीं आती। मैं उसको दिलासा देती हूँ क्योंकि वह मेरा भाई है और बच्चे की तरह नासमझ और लाचार है।"

कपूर चौंक गया। वह पम्मी की ओर आश्चर्य से चुपचाप देखता रहा; कुछ बोला नहीं।

"क्यों, तुम्हें ताज्जुब क्यों होता?" पम्मी ने कुछ मुसकराकर कहा, "लेकिन मैं सच कहती हूँ"–वह बहुत गम्भीर हो गयी, "मुझे ज़रा तरस नहीं आता इस पागलपन पर।" क्षण-भर चुप रही, फिर जैसे बहुत ही तेजी से बोली, "तुम जानते हो उसके फूल

कौन चुराता है? मैं, मैं उसके फूल तोड़कर फेंक देती हूँ। मुझे शादी से नफरत है, शादी के बाद होने वाली आपसी धोखेबाजी से नफरत है, और उस धोखेबाजी के बाद इस झूठमूठ की यादगार और बेईमानी के पागलपन से नफरत है। और ये गुलाब के फूल, ये क्यों मूल्यवान हैं, इसलिए न कि इसके साथ बर्टी की जिन्दगी की इतनी बड़ी ट्रैजेडी गुँथी हुई है। अगर एक फूल के खूबसूरत होने के लिए आदमी की जिन्दगी में इतनी बड़ी ट्रैजेडी आना जरूरी है तो लानत है उस फूल की खूबसूरती पर! मैं उससे नफरत करती हूँ। इसीलिए मैं किताबों से नफरत करती हूँ। एक कहानी लिखने के लिए कितनी कहानियों की ट्रैजेडी बर्दाश्त करनी होती है।"

पम्मी चुप हो गयी। उसका चेहरा सुर्ख हो गया था। थोड़ी देर बाद उसका तैश उतर गया और वह अपने आवेश पर खुद शरमा गयी। उठकर वह कपूर के पास गयी और उसके कन्धों पर हाथ रखकर बोली, "बर्टी से मत कहना, अच्छा?"

कपूर ने सिर हिलाकर स्वीकृति दी और कागज समेटकर खड़ा हुआ। पम्मी ने उसके कन्धों पर हाथ रखकर उसे अपनी ओर घुमाकर कहा, "देखो, पिछले चार साल से मैं अकेली थी, और किसी दोस्त का इन्तजार कर रही थी, तुम आये और दोस्त बन गये। तो अब अक्सर आना, ऐं?"

"अच्छा!" कपूर ने गम्भीरता से कहा।

"डॉ. शुक्ला से मेरा अभिवादन कहना, कभी यहाँ जरूर आएँ।"

"आप कभी चलिए, वहाँ उनकी लड़की है। आप उससे मिलकर खुश होंगी।"

पम्मी उसके साथ फाटक तक पहुँचाने चली तो देखा बर्टी एक चमेली के झाड़ में टहनियाँ हटा-हटाकर कुछ ढूँढ़ रहा था। पम्मी को देखकर पूछा उसने—"तुम्हें याद है; वह चमेली के झाड़ में तो नहीं छिपी थी?" कपूर ने पता नहीं क्यों जल्दी पम्मी को अभिवादन किया और चल दिया। उसे बर्टी को देखकर डर लगता था।

सुधा का कॉलेज बड़ा एकान्त और खूबसूरत जगह बना हुआ था। दोनों ओर ऊँची-सी मेंड़ और बीच में से कंकड़ की एक खूबसूरत घुमावदार सड़क। दायीं ओर चने और गेहूँ के खेत, बेर और शहतूत के झाड़ और बायीं ओर ऊँचे-ऊँचे टीले और ताड़ के लम्बे-लम्बे पेड़। शहर से काफी बाहर देहात का-सा नजारा था और इतना शान्त वातावरण लगता था कि यहाँ कोई उथल-पुथल, कोई शोरगुल है ही नहीं। जगह इतनी हरी-भरी कि दर्जों के कमरों के पीछे ही महुआ चूता था और लम्बी-लम्बी घास की दुपहरिया के नीले फूलों की जंगली लतरें उलझी रहती थीं।

और इस वातावरण ने अगर किसी पर सबसे ज्यादा प्रभाव डाला था तो वह थी गेसू। उसे अच्छी तरह मालूम था कि बाँस के झाड़ के पीछे किस चीज के फूल हैं। पुराने पीपल पर गिलोय की लतर चढ़ी है और करौंदे के झाड़ के पीछे एक साही की माँद है। नागफनी की झाड़ी के पास एक बार उसने एक लोमड़ी भी देखी थी। शहर के एक मशहूर रईस साबिर हुसैन काजमी की वह सबसे बड़ी लड़की थी। उसकी माँ, जिन्हें उसके पिता अदन से ब्याह कर लाये थे, शहर की मशहूर शायरा थीं। हालाँकि उनका दीवान छपकर मशहूर हो चुका था, मगर वह किसी भी बाहरी आदमी से कभी नहीं मिलती-जुलती थीं, उनकी सारी दुनिया अपने पति और अपने बच्चों तक सीमित थी। उन्हें शायराना नाम रखने का बहुत शौक था। अपनी दोनों लड़कियों का नाम उन्होंने गेसू और फूल रखा था और अपने छोटे बच्चे का नाम हसरत। हाँ, अपने पतिदेव साबिर साहब के हुक्के से बेहद चिढ़ती थीं और उनका नाम उन्होंने रखा था, 'आतिश-फिजाँ।'

घास, फूल, लतर और शायरी का शौक गेसू ने अपनी माँ से विरासत में पाया था। किस्मत से उसका कॉलेज भी ऐसा मिला जिसमें दर्जों की खिड़कियों से आम की शाखें झाँका करती थीं इसलिए हमेशा जब कभी मौका मिलता था, क्लास से भाग कर गेसू घास पर लेटकर सपने देखने की आदी हो गयी थी। क्लास के इस महाभिनिष्क्रमण और उसके बाद लतरों की छाँह में जाकर ध्यान-योग की साधना में उसकी एकमात्र साथिन थी सुधा। आम की घनी छाँह में हरी-हरी दूब में दोनों सिर के नीचे हाथ रखकर लेट रहतीं और दुनिया-भर की बातें करतीं। बातों में छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी किस तरह की बातें करती थीं, यह वही समझ सकता है जिसने कभी दो अभिन्न सहेलियों की एकान्त वार्ता सुनी हो। गालिब की शायरी से लेकर, उनके छोटे भाई हसरत ने एक कुत्ते का पिल्ला पाला है, यह गेसू सुनाया करती थी और शरत् के उपन्यासों से लेकर यह कि उसकी मालिन ने गिलट का कड़ा बनवाया है, यह सुधा बताया करती थी। दोनों अपने-अपने मन की बातें एक-दूसरे को बता डालती थीं और जितना भावुक, प्यारा, अनजान और सुकुमार दोनों का मन था, उतनी ही भावुक और सुकुमार दोनों की बातें। हाँ भावुक, सुकुमार दोनों ही थीं, लेकिन दोनों में एक अन्तर था। गेसू शायर होते हुए भी इस दुनिया की थी और सुधा शायर न होते हुए भी कल्पनालोक की थी। गेसू अगर झाड़ियों में से कुछ फूल चुनती तो उन्हें सूँघती, उन्हें अपनी चोटी में सजाती और उन पर चन्द शे'र कहने के बाद भी उन्हें माला में पिरोकर अपनी कलाई में लपेट लेती। सुधा लतरों के बीच में सिर रखकर लेट जाती और निर्निमेष पलकों से फूलों को देखती रहती और आँखों से न जाने क्या पीकर उन्हें उन्हीं की डालों पर फूलता हुआ छोड़ देती। गेसू

हर चीज का उचित इस्तेमाल जानती थी, किसी भी चीज को पसन्द करने या प्यार करने के बाद अब उसका क्या उपयोग है, क्रियात्मक यथार्थ जीवन में उसका क्या स्थान है, यह गेसू खूब समझती थी। लेकिन सुधा किसी भी फूल के जादू में बँध जाना चाहती थी, उसी की कल्पना में डूब जाना जानती थी, लेकिन उसके बाद सुधा को कुछ नहीं मालूम था। गेसू की कल्पना और भावुक सूक्ष्मता शायरी में व्यक्त हो जाती थी, अत: उसकी जिन्दगी में काफी व्यावहारिकता और यथार्थ था, लेकिन सुधा, जो शायरी लिख नहीं सकती थी, अपने स्वभाव और गठन में खुद ही एक मासूम शायरी बन गयी थी। वह भी पिछले दो सालों में तो सचमुच ही इतनी गम्भीर, सुकुमार और भावनामयी बन गयी थी कि लगता था कि सूर के गीतों से उसके व्यक्तित्व के रेशे बुन गये हैं।

लड़कियाँ, गेसू और सुधा के इस स्वभाव और उनकी अभिन्नता से वाकिफ थीं। और इसलिए जब सुधा की मोटर आकर सायबान में रुकी और उसमें से सुधा और गेसू हाथ में फाइल लिये उतरीं तो कामिनी ने हँसकर प्रभा से कहा, "लो, चन्दा-सूरज की जोड़ी आ गयी!" सुधा ने सुन लिया। मुसकराकर गेसू की ओर फिर कामिनी और प्रभा की ओर देखकर हँस दी। सुधा बहुत कम बोलती थी, लेकिन उसकी हँसी ने उसे खुशमिजाज साबित कर रखा था और वह सभी की प्यारी थी। प्रभा ने आकर सुधा के गले में बाँह डालकर कहा, "गेसू बानो, थोड़ी देर के लिए सुधारानी को हमें दे दो। ज़रा कल के नोट्स उतारने हैं इनसे पूछकर।"

गेसू हँसकर बोली, "उसके पापा से तय कर ले, फिर तू जिन्दगी भर सुधा को पाल-पोस, मुझे क्या करना है।"

जब सुधा प्रभा के साथ चली गयी तो गेसू ने कामिनी के कन्धे पर हाथ रखा और कहा, "कम्मो रानी, अब तो तुम्हीं हमारे हिस्से में पड़ी, आओ। चलो, देखें लतर में कुन्दरू हैं?"

"कुन्दरू तो नहीं, अब चने का खेत हरिया आया है।" कम्मो बोली।

गृह-विज्ञान का पीरियड था और मिस उमालकर पढ़ा रही थीं। बीच की कतार की एक बेंच पर कामिनी, प्रभा, गेसू और सुधा बैठी थीं। हिस्सा बाँट अभी तक कायम था, अत: कामिनी के बगल में गेसू, गेसू के बगल में प्रभा और प्रभा के बाद बेंच के कोने पर सुधा बैठी थी। मिस उमालकर रोगियों के खान-पान के बारे में समझा रही थीं। मेज के बगल में खड़ी हुई, हाथ में एक किताब लिये हुए, उसी पर निगाह लगाये वह बोलती जा रही थीं। शायद अँग्रेजी की किताब में जो कुछ लिखा हुआ था, उसी का हिन्दी में उल्था करते हुए बोलती जा रही थीं, "आलू एक नुकसानदेह तरकारी है, रोग की हालत में। वह खुश्क होता है, गरम होता है और हजम मुश्किल से होता है...।"

सहसा गेसू ने एकदम बीच से पूछा, "गुरुजी, गांधीजी आलू खाते हैं या नहीं?" सभी हँस पड़े।

मिस उमालकर ने बहुत गुस्से से गेसू की ओर देखा और डाँटकर कहा, "व्हाइ टॉक ऑव गांधी? आई वांट नो पोलिटिकल डिस्कशन इन क्लास। (गांधी से क्या मतलब? मैं दर्जे में राजनीतिक बहस नहीं चाहती।)" इस पर तो सभी लड़कियों की दबी हुई हँसी फूट पड़ी। मिस उमालकर झल्ला गयीं और मेज पर किताब पटकते हुए बोली, "साइलेंस (खामोश)!" सभी चुप हो गये। उन्होंने फिर पढ़ाना शुरू किया।

"जिगर के रोगियों के लिए हरी तरकारियाँ बहुत फायदेमन्द होती हैं। लौकी, पालक और हर किस्म के हरे साग तन्दुरुस्ती के लिए बहुत फायदेमन्द होते हैं।"

सहसा प्रभा ने कुहनी मारकर गेसू से कहा, "ले, फिर क्या है, निकाल चने का हरा साग, खा-खाकर मोटे हों मिस उमालकर के घंटे में!"

गेसू ने अपने कुरते की जेब से बहुत-सा साग निकालकर कामिनी और प्रभा को दिया।

मिस उमालकर अब शक्कर के हानि-लाभ बता रही थीं, "लम्बे रोग के बाद रोगी को शक्कर कम देनी चाहिए। दूध या साबूदाने में ताड़ की मिश्री मिला सकते हैं। दूध तो ग्लूकोज के साथ बहुत स्वादिष्ट लगता है।"

इतने में जब तक सुधा के पास साग पहुँचा कि फौरन मिस उमालकर ने देख लिया। वह समझ गयीं, यह शरारत गेसू की होगी, "मिस गेसू, बीमारी की हालत में दूध काहे के साथ स्वादिष्ट लगता है?"

इतने में सुधा के मुँह से निकला, "साग काहे के साथ खाएँ?" और गेसू ने कहा, "नमक के साथ!"

"हूँ? नमक के साथ?" मिस उमालकर ने कहा, "बीमारी में दूध नमक के साथ अच्छा लगता है। खड़ी हो! कहाँ था ध्यान तुम्हारा?"

गेसू सन्न। मिस उमालकर का चेहरा मारे गुस्से के लाल हो रहा था।

"क्या बात कर रही थीं तुम और सुधा?"

गेसू सन्न!

"अच्छा, तुम लोग क्लास के बाहर जाओ, और आज हम तुम्हारे गार्जियन को खत भेजेंगे। चलो, जाओ बाहर।"

सुधा ने कुछ मुसकराते हुए प्रभा की ओर देखा और प्रभा हँस दी। गेसू ने देखा कि मिस उमालकर का पारा और भी चढ़ने वाला है तो वह चुपचाप किताब उठाकर चल दी। सुधा भी पीछे-पीछे चल दी। कामिनी ने कहा, "खत-वत भेजती रहना, सुधा!" और क्लास ठठाकर हँस पड़ी। मिस उमालकर गुस्से से नीली पड़ गयीं, "क्लास अब खत्म

होगी।" और रजिस्टर उठाकर चल दीं। गेसू अभी अन्दर ही थी कि वह बाहर चली गयीं और उनके ज़रा दूर पहुँचते ही गेसू ने बड़ी अदा से कहा, "बड़े बेआबरू होकर तेरे कूचे से हम निकले!" और सारी क्लास फिर हँसी से गूँज उठी। लड़कियाँ चिड़ियों की तरह फुर्र हो गयीं और थोड़ी ही देर में सुधा और गेसू बैडमिंटन फील्ड के पास वाले छतनार पाकड़ के नीचे लेटी हुई थीं।

बड़ी खुशनुमा दोपहरी थी। खुशबू से लटे हल्के-हल्के झोंके गेसू की ओढ़नी और गरारे की सिलवटों से आँखमिचौली खेल रहे थे। आसमान में कुछ हल्के रुपहले बादल उड़ रहे थे और जमीन पर बादलों की साँवली छायाएँ दौड़ रही थीं। घास के लम्बे-चौड़े मैदान पर बादलों की छायाओं का खेल बड़ा मासूम लग रहा था। जितनी दूर तक छाँह रहती थी, उतनी दूर तक घास का रंग गहरा काही हो जाता था, और जहाँ-जहाँ बादलों से छनकर धूप बरसने लगती थी वहाँ-वहाँ घास सुनहरे धानी रंग की हो जाती थी। दूर कहीं पर पानी बरसा था और बादल हल्के होकर खरगोश के मासूम स्वच्छन्द बच्चों की तरह दौड़ रहे थे। सुधा आँखों पर फाइल की छाँह किये हुए बादलों की ओर एकटक देख रही थी। गेसू ने उसकी ओर करवट बदली और उसकी वेणी में लगे हुए रेशमी फीते को उँगली में उमेठते हुए एक लम्बी-सी साँस भरकर कहा–

"बादशाहों की मुअत्तर ख्वाबगाहों में कहाँ
वह मजा जो भीगी-भीगी घास पर सोने में है,
मुतमइन बेफिक्र लोगों की हँसी में भी कहाँ
लुत्फ जो एक-दूसरे को देखकर रोने में है।"

सुधा ने बादलों से अपनी निगाह नहीं हटायी, बस एक करुण सपनीली मुसकराहट बिखेरकर रह गयी।

"क्या देख रही है, सुधा?" गेसू ने पूछा।

"बादलों को देख रही हूँ।" सुधा ने बेहोश आवाज में जवाब दिया। गेसू उठी और सुधा की छाती पर सिर रखकर बोली

"कैफ बरदोश, बादलों को न देख
बेखबर, तू न कुचल जाय कहीं!"

और सुधा के गाल में जोर की चुटकी काट ली। "हाय रे!" सुधा ने चीखकर कहा और उठ बैठी, "वाह वाह! कितना अच्छा शेर है! किसका है?"

"पता नहीं किसका है।" गेसू बोली, "लेकिन बहुत सच है सुधी, आस्माँ के बादलों के दामन में अपने ख्वाब टाँक लेना और उनके सहारे जिन्दगी बसर करने का

खयाल है तो बड़ा नाजुक, मगर रानी बड़ा खतरनाक भी है। आदमी बड़ी ठोकरें खाता है। इससे तो अच्छा है कि आदमी को नाजुकखयाली से साबिका ही न पड़े। खाते-पीते, हँसते-बोलते आदमी की जिन्दगी कट जाए।"

सुधा ने अपना आँचल ठीक किया, और लटों में से घास के तिनके निकालते हुए कहा, "गेसू, अगर हम लोगों को भी शादी-ब्याह के झंझट में न फँसना पड़े और इसी तरह दिन कटते जाएँ तो कितना मजा आए। हँसते-बोलते, पढ़ते-लिखते, घास में लेटकर बादलों से प्यार करते हुए कितना अच्छा लगता है, लेकिन हम लड़कियों की जिन्दगी भी क्या! मैं तो सोचती हूँ गेसू; कभी ब्याह ही न करूँ। हमारे पापा का ध्यान कौन रखेगा?"

गेसू थोड़ी देर तक सुधा की आँखों में आँखें डालकर शरारत-भरी निगाहों से देखती रही और मुसकराकर बोली, "अरे, अब ऐसी भोली नहीं हो रानी तुम! ये शबाब, ये उठान और ब्याह नहीं करेंगी, जोगन बनेंगी।"

"अच्छा, चल हट बेशरम कहीं की, खुद ब्याह करने की ठान चुकी है तो दुनिया-भर को क्यों तोहमत लगाती है!"

"मैं तो ठान ही चुकी हूँ, मेरा क्या! फिक्र तो तुम लोगों की है कि ब्याह नहीं होता तो लेटकर बादल देखती हैं।" गेसू ने मचलते हुए कहा।

"अच्छा अच्छा," गेसू की ओढ़नी खींचकर सिर के नीचे रखकर सुधा ने कहा, "क्या हाल है तेरे अख्तर मियाँ का? मँगनी कब होगी तेरी?"

"मँगनी क्या, किसी भी दिन हो जाय, बस फूफीजान के यहाँ आने-भर की कसर है। वैसे अम्मी तो फूल की बात उनसे चला रही थीं, पर उन्होंने मेरे लिए इरादा जाहिर किया। बड़े अच्छे हैं, आते हैं तो घर-भर में रोशनी छा जाती है।" गेसू ने बहुत भोलेपन से गोद में सुधा का हाथ रखकर उसकी उँगलियाँ चिटकाते हुए कहा।

"वे तो तेरे चचाजाद भाई हैं न? तुझसे तो पहले उनसे बोल-चाल रही होगी।" सुधा ने पूछा।

"हाँ-हाँ, खूब अच्छी तरह से। मौलवी साहब हम लोगों को साथ-साथ पढ़ाते थे और जब हम दोनों सबक भूल जाते थे तो एक-दूसरे का कान पकड़कर साथ-साथ उठते-बैठते थे।" गेसू कुछ झेंपते हुए बोली।

सुधा हँस पड़ी, "वाह रे! प्रेम की इतनी विचित्र शुरुआत मैंने कहीं नहीं सुनी थी। तब तो तुम लोग एक-दूसरे का कान पकड़ने के लिए अपने-आप सबक भूल जाते होंगे?"

"नहीं जी, एक बार फिर पढ़कर कौन सबक भूलता है और एक बार सबक याद होने के बाद जानती हो इश्क में क्या होता है–

मकतबे इश्क में इक ढंग निराला देखा,
उसको छुट्टी न मिली जिसको सबक याद हुआ।"

"खैर, यह सब बात जाने दे सुधा, जब तू कब ब्याह करेगी?"

"जल्दी ही करूँगी।" सुधा बोली।

"किससे?"

"तुझसे।" और दोनों खिलखिलाकर हँस पड़ीं।

बादल हट गये थे और पाकड़ की छाँह को चीरते हुए एक सुनहली रोशनी का तार झिलमिला उठा। हँसते वक्त गेसू के कान में टॉप चमक उठे और सुधा का ध्यान उधर खिंच गया। "ये कब बनवाया तूने?"

"बनवाया नहीं।"

"तो उन्होंने दिये होंगे, क्यों?"

गेसू ने शरमाकर सिर हिला दिया।

सुधा ने उठकर हाथ से छूते हुए कहा, "कितने सुन्दर कमल हैं! वाह! क्यों, गेसू! तूने सचमुच के कमल देखे हैं?"

"ना"

"मैंने देखे हैं।"

"कहाँ?"

"असल में पाँच-छह साल पहले तक तो मैं गाँव में रहती थी न! ऊँचाहार के पास एक गाँव में मेरी बुआ रहती हैं न, बचपन से मैं उन्हीं के पास रहती थी। पढ़ाई की शुरुआत मैंने वहीं की और सातवीं तक वहीं पढ़ी। तो वहाँ मेरे स्कूल के पीछे के पोखरे में बहुत-से कमल थे। रोज शाम को मैं भाग जाती थी और तालाब में घुसकर कमल तोड़ती और घर से बुआ एक लम्बा-सा सोंटा लेकर गालियाँ देती हुई आती थीं मुझे पकड़ने के लिए। जहाँ वह किनारे पहुँचतीं तो मैं कहती, अभी डूब जाएँगे बुआ, अभी डूबे, तो बहुत रबड़ी-मलाई का लालच देकर वह मिन्नत करतीं–निकल आओ, तो मैं निकलती थी। तुमने तो कभी देखा नहीं होगा हमारी बुआ को?"

"न, तूने कभी दिखाया ही नहीं।"

"इधर बहुत दिनों से आयीं ही नहीं वे। आएँगी तो दिखाऊँगी तुझे। और उनकी एक लड़की है। बड़ी प्यारी, बहुत मजे की है। उसे देखकर तो तुम उसे बहुत प्यार करोगी। वो तो अब यहीं आने वाली है। अब यहीं पढ़ेगी।"

"किस दर्जे में पढ़ती है?"

"प्राइवेट विदुषी में बैठेगी इस साल। खूब गोल-मटोल और हँसमुख है।" सुधा बोली।

इतने में घण्टा बोला और गेसू ने सुधा के पैर के नीचे दबी हुई अपनी ओढ़नी खींची।

"अरे, अब आखिरी घंटे में जाकर क्या पढ़ोगी! हाजिरी कट ही गयी। अब बैठो

यहीं बातचीत करें, आराम करें।" सुधा ने अलसाये स्वर में कहा और खड़ी होकर एक मदमाती हुई अँगड़ाई ली–गेसू ने हाथ पकड़कर उसे बिठा लिया और बड़ी गम्भीरता से कहा, "देखो, ऐसी अरसौहीं अँगड़ाई न लिया करो, इससे लोग समझ जाते हैं कि अब बचपन करवट बदल रहा है।"

"धत्!" बेहद झेंपकर और फाइल में मुँह छिपाकर सुधा बोली।

"लो, तुम मजाक समझती हो, एक शायर ने तुम्हारी अँगड़ाई के लिए कहा है–

कौन ये ले रहा है अँगड़ाई
आसमानों को नींद आती है।"

"वाह!" सुधा बोली, "अच्छा गेसू, आज बहुत-से शेर सुनाओ।"

"सुनो–

इस रिदायेतीरगी है और खाबेकायनात
डूबते जाते हैं तारे, भीगती जाती है रात!"

"पहली लाइन के क्या मतलब हैं?" सुधा ने पूछा।

"रिदायेतीरगी के माने हैं अँधेरे की चादर और खाबेकायनात के माने हैं जिन्दगी का सपना–अब फिर सुनो शेर–

इस रिदायेतीरगी है और खाबेकायनात
डूबते जाते हैं तारे, भीगती जाती है रात!"

"वाह! कितना अच्छा है–अन्धकार की चादर है, जीवन का स्वप्न है, तारे डूबते जाते हैं, रात भीगती जाती है...गेसू, उर्दू की शायरी बहुत अच्छी है।"

"तो तू खुद उर्दू क्यों नहीं पढ़ लेती?" गेसू ने कहा।

"चाहती तो बहुत हूँ, पर निभ नहीं पाता!"

"किसी दिन शाम को आओ सुधा तो अम्मीजान से तुझे शेर सुनवाएँ। यह ले तेरी मोटर तो आ गयी।"

सुधा उठी, अपनी फाइल उठायी। गेसू ने अपनी ओढ़नी झाड़ी और आगे चली। पास आकर उचककर उसने प्रिंसिपल का रूम देखा। वह खाली था। उसने दाई को खबर दी और मोटर पर बैठ गयी।

गेसू बाहर खड़ी थी। "चल तू भी न!"

"नहीं, मैं गाड़ी पर चली जाऊँगी।"

"अरे चलो, गाड़ी साढ़े चार बजे आयेगी। अभी घण्टा-भर है। घर पर चाय पिएँगे, फिर मोटर पहुँचा देगी। जब तक पापा नहीं हैं, तब तक जितना चाहो कार घिसो!"

गेसू भी आ बैठी और कार चल दी।

दूसरे दिन जब चन्दर डॉ. शुक्ला के यहाँ निबन्ध की प्रतिलिपि लेकर पहुँचा तो आठ बज चुके थे। सात बजे तो चन्दर की नींद ही खुली थी और जल्दी से वह नहा-धोकर साइकिल दौड़ाता हुआ भागा था कि कहीं भाषण की प्रतिलिपि पहुँचने में देर न हो जाए।

जब वह बँगले पर पहुँचा तो धूप फैल चुकी थी। अब धूप भली नहीं मालूम देती थी, धूप की तेजी बर्दाश्त के बाहर होने लगी थी, लेकिन सुधा नीलकाँटे के ऊँचे-ऊँचे झाड़ों की छाँह में एक छोटी-सी कुरसी डाले बैठी थी। बगल में एक छोटी-सी मेज थी जिस पर कोई किताब खुली हुई रखी थी, हाथ में क्रोशिया थी और उँगलियाँ एक नाजुक तेजी से डोरे से उलझ-सुलझ रही थीं। हल्के बादामी रंग की इकलाई की लहराती हुई धोती, नारंगी और काली तिरछी धारियों का कलफ किया चुस्त ब्लाउज और एक कन्धे पर उभरा एक उसका पफ ऐसा लग रहा था जैसे कि बाँह पर कोई रंगीन तितली आकर बैठी हुई हो और उसका सिर्फ एक पंख उठा हो! अभी-अभी शायद नहाकर उठी थी क्योंकि शरद की खुशनुमा धूप की तरह हलके सुनहले बाल पीठ पर लहरा रहे थे। नीलकाँटे की टहनियाँ उनको सुनहली लहरें समझकर अठखेलियाँ कर रही थीं।

चन्दर की साइकिल जब अन्दर दिख पड़ी तो सुधा ने उधर देखा लेकिन कुछ भी न कहकर फिर अपनी क्रोशिया बुनने में लग गयी। चन्दर सीधा पोर्टिको में गया और अपनी साइकिल रखकर भीतर चला गया डॉ. शुक्ला के पास। स्टडी-रूम में, बैठक में, सोने के कमरे में कहीं भी डॉ. शुक्ला नज़र नहीं आये। हारकर वह बाहर आया तो देखा मोटर अभी गैरज में है। तो वे जा कहाँ सकते हैं? और सुधा को तो देखिए! क्या अकड़ी हुई है आज, जैसे चन्दर को जानती ही नहीं। चन्दर सुधा के पास गया। सुधा का मुँह और भी लटक गया।

"डॉक्टर साहब कहाँ हैं?" चन्दर ने पूछा।

"हमें क्या मालूम?" सुधा ने क्रोशिया पर से बिना निगाह उठाये जवाब दिया।

"तो किसे मालूम होगा?" चन्दर ने डाँटते हुए कहा, "हर वक्त का मजाक हमें अच्छा नहीं लगता। काम की बात का उसी तरह जवाब देना चाहिए। उनके निबन्ध की लिपि देनी है या नहीं!"

"हाँ-हाँ, देनी है तो मैं क्या करूँ? नहा रहे होंगे। अभी कोई ये तो है नहीं कि तुम निबन्ध की लिपि लाये हो तो कोई नहाये-धोये न, बस सुबह से बैठा रहे कि अब निबन्ध आ रहा है, अब आ रहा है?" सुधा ने मुँह बनाकर आँखें नचाते हुए कहा।

"तो सीधे क्यों नहीं कहती कि नहा रहे हैं।" चन्दर ने सुधा के गुस्से पर हँसकर कहा। चन्दर की हँसी पर तो सुधा का मिजाज और भी बिगड़ गया और अपनी क्रोशिया उठाकर और किताब बगल में दबाकर, वह उठकर अन्दर चल दी। उसके उठते ही चन्दर आराम से उस कुरसी पर बैठ गया और मेज पर टाँग फैलाकर बोला–

"आज मुझे बहुत गुस्सा चढ़ा है, खबरदार कोई बोलना मत!"

सुधा जाते-जाते मुड़कर खड़ी हो गयी।

"हमने कह दिया चन्दर एक बार कि हमें ये सब बातें अच्छी नहीं लगतीं। जब देखो तुम चिढ़ाते रहते हो!" सुधा ने गुस्से से कहा।

"नहीं! चिढ़ाएँगे नहीं तो पूजा करेंगे! तुम अपने मौके पर छोड़ देती हो!" चन्दर ने उसी लापरवाही से कहा।

सुधा गयी नहीं। वहीं घास पर बैठ गयी और किताब खोलकर पढ़ने लगी। जब पाँच मिनट तक वह कुछ नहीं बोली तो चन्दर ने सोचा आज बात कुछ गम्भीर है।

"सुधा!" उसने बड़े दुलार से पुकारा। "सुधा!"

सुधा ने कुछ नहीं कहा मगर दो बड़े-बड़े आँसू टप से नीचे किताब पर गिर गये।

"अरे क्या बात है सुधा, नहीं बताओगी?"

"कुछ नहीं।"

"बता दो, तुम्हें हमारी कसम है।"

"कल शाम को तुम आये नहीं..." सुधा रोनी आवाज में बोली।

"बस इस बात पर इतनी नाराज हो, पगली!"

"हाँ, इस बात पर इतनी नाराज हूँ! तुम आओ चाहे हजार बार न आओ; इस पर हम क्यों नाराज होंगे! बड़े कहीं के आये, नहीं आएँगे तो जैसे हमारा घर-बार नहीं है। अपने को जाने क्या समझ लिया है!" सुधा ने चिढ़कर जवाब दिया।

"अरे तो तुम्हीं तो कह रही थीं, भाई।" चन्दर ने हँसकर कहा।

"तो बात पूरी भी सुनो। शाम को गेसू का नौकर आया था। उसके छोटे भाई हसरत की सालगिरह थी। सुबह 'कुरानखानी' होने वाली थी और उसकी माँ ने बुलाया था।"

"तो गयी क्यों नहीं?"

"गयी क्यों नहीं! किससे पूछकर जाती? आप तो इस वक्त आ रहे हैं जब सब खत्म हो गया।" सुधा बोली।

"तो पापा से पूछ के चली जाती!" चन्दर से समझाकर कहा, "और फिर गेसू के यहाँ तो यों अक्सर जाती हो तुम!"

"तो? आज तो डांस भी करने के लिए कहा था उसने। फिर बाद में तुम कहते, 'सुधा, तुम्हें ये नहीं करना चाहिए, वो नहीं करना चाहिए। लड़कियों को ऐसे रहना चाहिए, वैसे रहना चाहिए।' और बैठ के उपदेश पिलाते और नाराज होते। बिना तुमसे पूछे हम कहीं सिनेमा, पिकनिक, जलसों में गये हैं कभी?" और फिर आँसू टपक पड़े।

"पगली कहीं की! इतनी-सी बात पर रोना क्या? किसी के हाथ कुछ उपहार भेज दो और फिर किसी मौके पर चली जाना।"

"हाँ, चली जाना! तुम्हें कहते क्या लगता है! गेसू ने कितना बुरा माना होगा!" सुधा ने बिगड़ते हुए ही कहा। "इम्तहान आ रहा है, फिर कब जाएँगे?"

"कब है इम्तहान तुम्हारा?"

"चाहे जब हो! मुझे पढ़ाने के लिए कहा किसी से?"

"अरे भूल गये! अच्छा, आज देखो कहेंगे!"

"कहेंगे-कहेंगे नहीं, आज दोपहर को आप बुला लाइए, वरना हम सब किताबों में लगाये देते हैं आग। समझे कि नहीं!"

"अच्छा-अच्छा, आज दोपहर को बुला लाएँगे। ठीक, अच्छा याद आया बिसरिया से कहूँगा तुम्हें पढ़ाने के लिए। उसे रुपये की जरूरत भी है।" चन्दर ने छुटकारे का कोई रास्ता न पाकर कहा।

"आज दोपहर को जरूर से।" सुधा ने फिर आँखें नचाकर कहा। "लो, पापा आ गये नहाकर, जाओ!"

चन्दर उठा और चल दिया। सुधा उठी और अन्दर चली गयी।

डॉ. शुक्ला हल्के-साँवले रंग के ज़रा स्थूलकाय-से थे। बहुत गम्भीर अध्ययन और अध्यापन और उम्र के साथ-साथ ही उनकी नम्रता और भी बढ़ती जा रही थी।

लेकिन वे लोगों से मिलते-जुलते कम थे। व्यक्तिगत दोस्ती उनकी किसी से नहीं थी। लेकिन उत्तर भारत के प्रमुख विद्वान् होने के नाते कॉन्फ्रेंसों में, मौखिक परीक्षाओं में, सरकारी कमेटियों में वे बराबर बुलाये जाते थे और इसमें प्रमुख दिलचस्पी से हिस्सा लेते थे। ऐसी जगहों में चन्दर अक्सर उनका प्रमुख सहायक रहता था और इसी नाते चन्दर भी प्रान्त के बड़े-बड़े लोगों से परिचित हो गया था। जब वह एम.ए. पास हुआ था तब से फाइनेंस विभाग में उसे कई बार ऊँचे-ऊचे पदों का 'ऑफर' आ चुका था लेकिन डॉ. शुक्ला इसके खिलाफ थे। वे चाहते थे कि पहले वह रिसर्च पूरी कर ले। सम्भव हो तो विदेश हो आये, तब चाहे कुछ काम करे। अपने व्यक्तिगत जीवन में डॉ.

शुक्ला अन्तर्विरोधों के व्यक्ति थे। पार्टियों में मुसलमानों और ईसाइयों के साथ खाने में कोई एतराज नहीं था लेकिन कच्चा खाना वे चौके में आसन पर बैठकर, रेशमी धोती पहनकर खाते थे। सरकार को उन्होंने सलाह दी कि साधू और संन्यासियों को जबरदस्ती काम में लगाया जाए और मन्दिरों की जायदादें जब्त कर ली जाएँ, लेकिन सुबह घंटे-भर तक पूजा जरूर करते थे। पूजा-पाठ, खान-पान, जात-पाँत के पक्के हामी, लेकिन व्यक्तिगत जीवन में कभी यह नहीं जाना कि उनका कौन शिष्य ब्राह्मण है, कौन बनिया, कौन खत्री, कौन कायस्थ!

नहाकर वे आ रहे थे और दुर्गासप्तशती का कोई श्लोक गुनगुना रहे थे। कपूर को देखा तो रुक गये और बोले, "हैलो, हो गया वह टाइप!"

"जी हाँ।"

"कहाँ कराया टाइप?"

"मिस डिक्रूज के यहाँ।"

"अच्छा! वह लड़की अच्छी है। अब तो बहुत बड़ी हुई होगी? अभी शादी नहीं हुई? मैंने तो सोचा वह मिले या न मिले!"

"नहीं, वह यहीं है। शादी हुई। फिर तलाक हो गया।"

"अरे! तो अकेले रहती है?"

"नहीं, अपने भाई के साथ है, बर्टी के साथ!"

"अच्छा! और बर्टी की पत्नी अच्छी तरह है?"

"वह मर गयी।"

"राम-राम, तब तो घर ही बदल गया होगा।"

"पापा, पूजा के लिए सब बिछा दिया है।" सहसा सुधा बोली।

"अच्छा बेटी, अच्छा चन्दर, मैं पूजा कर आऊँ जल्दी से। तुम चाय पी चुके?"

"जी हाँ।"

"अच्छा तो मेरी मेज पर एक चार्ट है, ज़रा इसको ठीक तो कर दो तब तक। मैं अभी आया।"

चन्दर स्टडी-रूम में गया और मेज पर बैठ गया। कोट उतारकर उसने खूँटी पर टाँग दिया और नक्शा देखने लगा। पास में एक छोटी-सी चीनी की प्याली में चाइना इंक रखी थी और मेज पर पानी। उसने दो बूँद पानी डालकर चाइना इंक घिसनी शुरू की, इतने में सुधा कमरे में दाखिल, "ऐ सुनो!" उसने चारों ओर देखकर बड़े सशंकित स्वरों में कहा और फिर झुककर चन्दर के कान के पास मुँह लगाकर कहा, "चावल की नानखटाई खाओगे?"

"ये क्या बला है?" चन्दर ने इंक घिसते-घिसते पूछा।

"बड़ी अच्छी चीज होती है; पापा को बहुत अच्छी लगती है। आज हमने सुबह अपने हाथ से बनायी थी। ऐं, खाओगे?" सुधा ने बड़े दुलार से पूछा।

"ले आओ।" चन्दर ने कहा।

"ले आये हम, लो!" और सुधा ने अपने आँचल में लिपटी हुई दो नानखटाई निकालकर मेज पर रख दी।

"अरे तश्तीर में क्यों नहीं लायी? सब धोती में घी लग गया। इतनी बड़ी हो गयी, शऊर नहीं ज़रा-सा।" चन्दर ने बिगड़कर कहा।

"छिपा करके लाये हैं, फिर ये सकरी होती हैं कि नहीं? चौके के बाहर कैसे लाते! तुम्हारे लिये तो लाये हैं और तुम्हीं बिगड़ रहे हो। अन्धे को नोन दो, अन्धा कहे मेरी आँखें फोड़ीं।" सुधा ने मुँह बनाकर कहा, "खाना है कि नहीं?"

"हाथ में तो स्याही लगी है।" चन्दर बोला।

"हम अपने हाथ से नहीं खिलाएँगे, हमारा हाथ जूठा हो जाएगा और राम-राम! पता नहीं तुम रेस्तराँ में मुसलमान के हाथ का खाते होगे। थू-थू!"

चन्दर हँस पड़ा सुधा की इस बात पर और उसने पानी में हाथ डुबोकर बिना पूछे सुधा के आँचल में हाथ पोंछ दिये स्याही के और बेतकल्लुफी से नानखटाई उठाकर खाने लगा।

"बस, अब धोती का किनारा रंग दिया और यही पहनना है हमें दिनभर।" सुधा ने बिगड़कर कहा।

"खुद नानखटाई छिपाकर लायी और घी लग गया तो कुछ नहीं और हमने स्याही पोंछ दी तो मुँह बिगड़ गया।" चन्दर ने मैपिंग पेन में इंक लगाते हुए कहा।

"हाँ, अभी पापा देखें तो और बिगड़ें कि धोती में घी, स्याही सब लगाये रहती है। तुम्हें क्या?" और उसने स्याही लगा हुआ छोर कसकर कमर में खोंस लिया।

"छि:, वही घी में तर छोर कमर में खोंस लिया। गन्दी कहीं की!" चन्दर ने चार्ट की लाइनें ठीक करते हुए कहा।

"गन्दी हैं तो, तुमसे मतलब!" और मुँह चिढ़ाते हुए सुधा कमरे से बाहर चली गयी।

चन्दर चुपचाप बैठा चार्ट दुरुस्त करता रहा। उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिला–बलिया, आजमगढ़, बस्ती, बनारस आदि में बच्चों की मृत्यु-संख्या का ग्राफ बनाना था और एक ओर उनके नक्शे पर बिन्दुओं की एक सघनता से मृत्यु-संख्या का निर्देश करना था। चन्दर की एक आदत थी वह काम में लगता था तो भूत की तरह लगता था। फिर

उसे दीन-दुनिया, किसी की खबर नहीं रहती थी। खाना-पीना, तन-बदन, किसी का होश नहीं रहता था। इसका एक कारण था। चन्दर उन लड़कों में से था जिनकी जिन्दगी बाहर से बहुत हल्की-फुल्की होते हुए भी अन्दर से बहुत गम्भीर और अर्थमयी होती है, जिनके सामने एक स्पष्ट उद्‌देश्य, एक लक्ष्य होता है। बाहर से चाहे जैसे होने पर भी अपने आन्तरिक सत्य के प्रति घोर ईमानदारी यह इन लोगों की विशेषता होती है और सारी दुनिया के प्रति अगम्भीर और उच्छृंखल होने पर भी जो चीजें इनकी लक्ष्यपरिधि में आ जाती हैं, उनके प्रति उनकी गम्भीरता, साधना और पूजा बन जाती है। इसलिए बाहर से इतना व्यक्तिवादी और सारी दुनिया के प्रति निरपेक्ष और लापरवाह दिख पड़ने पर भी वह अन्तरतम से समाज और युग और अपने आसपास के जीवन और व्यक्तियों के प्रति अपने को बेहद उत्तरदायी अनुभव करता था। वह देशभक्त भी था और शायद समाजवादी भी, पर अपने तरीके से। वह खद्‌दर नहीं पहनता था, कांग्रेस का सदस्य नहीं था, जेल नहीं गया था, फिर भी वह अपने देश को प्यार करता था। बेहद प्यार। उसकी देशभक्ति, उसका समाजवाद, सभी उसके अध्ययन और खोज में समा गया था। वह यह जानता था कि समाज के सभी स्तम्भों का स्थान अपना अलग होता है। अगर सभी मन्दिर के कंगूरे का फूल बनने की कोशिश करने लगें तो नींव की ईंट और सीढ़ी का पत्थर कौन बनेगा? और वह जानता था कि अर्थशास्त्र वह पत्थर है जिस पर समाज के सारे भवन का बोझ है। और उसने निश्चय किया था कि अपने देश, अपने युग के आर्थिक पहलू को वह खूब अच्छी तरह से अपने ढंग से विश्लेषण करके देखेगा और उसे आशा थी कि वह एक दिन ऐसा समाधान खोज निकालेगा कि मानव की बहुत-सी समस्याएँ हल हो जाएँगी और आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्र में अगर आदमी खूँखार जानवर बन गया है तो एक दिन दुनिया उसकी एक आवाज पर देवता बन सकेगी। इसलिए जब वह बैठकर कानपुर की मिलों के मजदूरों के वेतन का चार्ट बनाता था, या उपयुक्त साधनों के अभाव में मर जाने वाली गरीब औरतों और बच्चों का लेखा-जोखा करता था तो उसके सामने अपना करियर, अपनी प्रतिष्ठा, अपनी डिग्री का सपना नहीं होता था। उसके मन में उस वक्त वैसा सन्तोष होता था जो किसी पुजारी के मन में होता है, जब वह अपने देवता की अर्चना के लिए धूप, दीप, नैवेद्य सजाता है। बल्कि चन्दर थोड़ा भावुक था, एक बार तो जब चन्दर ने अपने रिसर्च के सिलसिले में यह पढ़ा कि अँग्रेजों ने अपनी पूँजी लगाने और अपना व्यापार फैलाने के लिए किस तरह मुर्शिदाबाद से लेकर रोहतक तक हिन्दुस्तान के गरीब से गरीब और अमीर से अमीर बाशिन्दे को अमानुषिकता से लूटा, तब वह फूट-फूटकर रो पड़ा था लेकिन इसके बावजूद उसने राजनीति में कभी डूबकर हिस्सा नहीं लिया क्योंकि उसने देखा था कि

उसके जो भी मित्र राजनीति में गये, वे थोड़े दिन बाद बहुत प्रसिद्धि और प्रतिष्ठा पा गये मगर आदमीयत खो बैठे।

अपने अर्थशास्त्र के बावजूद वह यह समझता था कि आदमी की जिन्दगी सिर्फ आर्थिक पहलू तक सीमित नहीं और वह यह भी समझता था कि जीवन को सुधारने के लिए सिर्फ आर्थिक ढाँचा बदल देने-भर की जरूरत नहीं है। उसके लिए आदमी का सुधार करना होगा, व्यक्ति का सुधार करना होगा। वरना एक भरे-पूरे और वैभवशाली समाज में भी आज के-से अस्वस्थ और पाशविक वृत्तियों वाले व्यक्ति रहेंगे तो दुनिया ऐसी ही लगेगी जैसे एक खूबसूरत सजा-सजाया महल जिसमें कीड़े और राक्षस रहते हों।

वह यह भी समझता था कि वह जिस तरह की दुनिया का सपना देखता, वह दुनिया आज किसी भी एक राजनीतिक क्रान्ति या किसी भी विशेष पार्टी की सहायता मात्र से नहीं बन सकती है। उसके लिए आदमी को अपने को बदलना होगा, किसी समाज को बदलने से काम नहीं चलेगा। इसलिए वह अपने व्यक्ति के संसार में निरन्तर लगा रहता था और समाज के आर्थिक पहलू को समझने की कोशिश करता रहता था। यही कारण है कि अपने जीवन में आने वाले व्यक्तियों के प्रति वह बेहद ईमानदार रहता था और अपने अध्ययन और काम के प्रति वह सचेत और जागरूक रहता था और वह अच्छी तरह समझता था कि इस तरह वह दुनिया को उस ओर बढ़ाने में थोड़ी-सी मदद कर रहा है। चूँकि अपने में भी वह सत्य की वही चिनगारी पाता था इसलिए कवि या दार्शनिक न होते हुए भी वह इतना भावुक, इतना दृढ़-चरित्र, इतना सशक्त और इतना गम्भीर था और काम तो अपना वह इस तरह करता था जैसे वह किसी की एकाग्र उपासना कर रहा हो। इसलिए जब वह चार्ट के नक्शे कर कलम चला रहा था तो उसे मालूम नहीं हुआ कि कितनी देर से डॉ. शुक्ला आकर उसके पीछे खड़े हो गये।

"वाह, नक्शे पर तो तुम्हारा हाथ बहुत अच्छा चलता है। बहुत अच्छा! अब उसे रहने दो। लाओ, देखें, तुम्हार काम कैसा चल रहा है। आज तो इतवार है न?"

डॉ. शुक्ला पास की कुरसी पर बैठकर बोले, "चन्दर! आजकल मैं एक किताब लिखने की सोच रहा हूँ। मैंने सोचा कि भारतवर्ष की जाति-व्यवस्था का नये वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन और विश्लेषण किया जाए। तुम इसके बारे में क्या सोचते हो?"

"व्यर्थ है! जो व्यवस्था आज नहीं तो कल चूर-चूर होने जा रही है, उसके बारे में तूमार बाँधना और समय बरबाद करना बेकार है।" चन्दर ने बहुत आत्मविश्वास से कहा।

"यही तो तुम लोगों में खराबी है। कुछ थोड़ी-सी खराबियाँ जाति-व्यवस्था की देख लीं और उसके खिलाफ हो गये। एक रिसर्च स्कॉलर का दृष्टिकोण ही दूसरा होना चाहिए। फिर हमारे भारत की प्राचीन सांस्कृतिक परम्पराओं को तो बहुत ही सावधानी

से समझने की आवश्यकता है। यह समझ लो कि मानव-जाति दुर्बल नहीं है। अपने विकास-क्रम में वह उन्हीं संस्थाओं, रीति-रिवाजों और परम्पराओं को रहने देती है जो उसके अस्तित्व के लिए बहुत आवश्यक होती है। अगर वे आवश्यक न हुईं तो मानव उससे छुटकारा माँग लेता है। यह जाति-व्यवस्था जाने कितने सालों से हिन्दुस्तान में कायम है, क्या यही इस बात का प्रमाण नहीं कि यह बहुत सशक्त है, अपने में बहुत जरूरी है?"

"अरे हिन्दुस्तान की भली चलायी।" चन्दर बोला, "हिन्दुस्तान में तो गुलामी कितने दिनों से कायम है तो क्या वह भी जरूरी है।"

"बिल्कुल जरूरी है।" डॉ. शुक्ला बोले, "मुझे भी हिन्दुस्तान पर गर्व है। मैंने कभी कांग्रेस का काम किया, लेकिन मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि ज़रा-सी आजादी अगर मिलती है हिन्दुस्तानियों को, तो वे उसका भरपूर दुरुपयोग करने से बाज नहीं आते और कभी भी ये लोग अच्छे शासक नहीं निकलेंगे।"

"अरे नहीं! ऐसी बात नहीं। हिन्दुस्तानियों को ऐसा बना दिया है अँग्रेजों ने। वरना हिन्दुस्तान ने ही तो चन्द्रगुप्त और अशोक पैदा किये थे और रही जाति-व्यवस्था की बात तो मुझे तो स्पष्ट दिख रहा है कि जाति-व्यवस्था टूट रही है।" कपूर बोला, "रोटी-बेटी की कैद थी। रोटी की कैद तो करीब-करीब टूट गयी, अब बेटी की कैद भी...ब्याह-श ादियाँ भी दो-एक पीढ़ी के बाद स्वच्छन्दता से होने लगेंगी।"

"अगर ऐसा होगा तो बहुत गलत होगा। इससे जातिगत पतन होता है। ब्याह-शादी को कम-से-कम मैं भावना की दृष्टि से नहीं देखता। यह एक सामाजिक तथ्य है और उसी दृष्टिकोण से हमें देखना चाहिए। शादी में सबसे बड़ी बात होती है सांस्कृतिक समानता। और जब अलग-अलग जाति में अलग-अलग रीति-रिवाज हैं तो एक जाति की लड़की दूसरी जाति में जाकर कभी भी अपने को ठीक से सन्तुलित नहीं कर सकती। और फिर एक बनिया की व्यापारिक प्रवृत्तियों की लड़की और एक ब्राह्मण का अध्ययन वृत्ति का लड़का, इनकी सन्तान न इधर विकास कर सकती है न उधर। यह तो सामाजिक व्यवस्था को व्यर्थ के लिए असन्तुलित करना हुआ।"

"हाँ, लेकिन विवाह को आप केवल समाज के दृष्टिकोण से क्यों देखते हैं? व्यक्ति के दृष्टिकोण से भी देखिए। अगर दो विभिन्न जाति के लड़के-लड़की अपना मानसिक सन्तुलन ज्यादा अच्छा कर सकते हैं तो क्यों न विवाह की इजाजत दी जाए!"

"ओह, एक व्यक्ति के सुझाव के लिए हम समाज को क्यों नुकसान पहुँचाएँ! और इसका क्या निश्चय कि विवाह के समय यदि दोनों में मानसिक सन्तुलन है तो विवाह के बाद भी रहेगा ही। मानसिक सन्तुलन और प्रेम जितना अपने मन पर आधारित होता

है उतना ही बाहरी परिस्थितियों पर। क्या जाने ब्याह के वक्त की परिस्थिति का दोनों के मन पर कितना प्रभाव है और उसके बाद सन्तुलन रह पाता है या नहीं? और मैंने तो लव-मैरिजेज (प्रेम-विवाह) को असफल ही होते देखा है। बोलो है या नहीं?" डॉ. शुक्ला ने कहा।

"हाँ, प्रेम-विवाह अक्सर असफल होते हैं, लेकिन सम्भव है वह प्रेम न होता हो। जहाँ सच्चा प्रेम होगा वहाँ कभी असफल विवाह नहीं होंगे।" चन्दर ने बहुत साहस करके कहा।

"ओह! ये सब साहित्य की बातें हैं। समाजशास्त्र की दृष्टि से या वैज्ञानिक दृष्टि से देखो! अच्छा खैर, अभी मैंने उसकी रूप-रेखा बनायी है। लिखूँगा तो तुम सुनते चलना। लाओ, वह निबन्ध कहाँ है!" डॉ. शुक्ला बोले।

चन्दर ने उन्हें टाइप की हुई प्रतिलिपि दे दी। उलट-पुलटकर डॉ. शुक्ला ने देखा और कहा, "ठीक है। अच्छा चन्दर, अपना काम इधर ठीक-ठीक कर लो, अगले इतवार को लखनऊ कॉन्फ्रेस में चलना है।"

"अच्छा! कार पर चलेंगे या ट्रेन से?"

"ट्रेन से। अच्छा।" घड़ी देखते हुए उन्होंने कहा, "अब ज़रा मैं काम से चल रहा हूँ। तुम यह चार्ट बना डालो और एक निबन्ध लिख डालना 'पूर्वी जिलों में शिशु मृत्यु।' प्रान्त के स्वास्थ्य विभाग ने एक पुरस्कार घोषित किया है।"

डॉ. शुक्ला चले गये। चन्दर ने फिर चार्ट में हाथ लगाया।

चन्दर के जाने के ज़रा ही देर बाद पापा आये और खाने बैठे। सुधा ने रसोई की रेशमी धोती पहनी और पापा को पंखा झलने बैठ गयी। सुधा अपने पापा की सिरचढ़ी दुलारी बेटियों में से थी और इतनी बड़ी हो जाने पर भी वह दुलार दिखाने से बाज नहीं आती थी। फिर आज तो उसने पापा की प्रिय नानखटाई अपने हाथ से बनायी थी। आज तो दुलार दिखाने का उसका हक था और भली-बुरी हर तरह की जिद को मान लेना करना, यह पापा की मजबूरी थी।

मुश्किल से डॉ. साहब ने अभी दो कौर खाये होंगे कि सुधा ने कहा, "नानखटाई खाओ, पापा!"

डॉ. शुक्ला ने एक नानखटाई तोड़कर खाते हुए कहा, "बहुत अच्छी है!" खाते-खाते उन्होंने पूछा, "सोमवार को कौन दिन है, सुधा!"

"सोमवार को कौन दिन है? सोमवार को 'मंडे' है।" सुधा ने हँसकर कहा। डॉ.

शुक्ला भी अपनी भूल पर हँस पड़े। "अरे देख तो मैं कितना भुलक्कड़ हो गया हूँ। मेरा मतलब था कि सोमवार को कौन तारीख है?"

"11 तारीख।" सुधा बोली, "क्यों?"

"कुछ नहीं, 10 को कॉन्फ्रेंस है और 14 को तुम्हारी बुआ आ रही हैं।"

"बुआ आ रही हैं, और बिनती भी आएगी?"

"हाँ, उसी को तो पहुँचाने आ रही हैं। विदुषी का केन्द्र यहीं तो है।"

"आहा! अब तो बिनती तीन महीने यहीं रहेगी, पापा अब बिनती को यहीं बुला लो। मैं बहुत अकेली रहती हूँ।"

"हाँ, अब तो जून तक यहीं रहेगी। फिर जुलाई में उसकी शादी होगी।" डॉ. शुक्ला ने कहा।

"अरे, अभी से? अभी उसकी उम्र ही क्या है!" सुधा बोली।

"क्यों, तेरे बराबर है। अब तेरे लिए भी तेरी बुआ ने लिखा है।"

"नहीं पापा, हम ब्याह नहीं करेंगे।" सुधा ने मचलकर कहा।

"तब?"

"बस हम पढ़ेंगे। एफ.ए. कर लेंगे, फिर बी.ए., फिर एम.ए., फिर रिसर्च, फिर बराबर पढ़ते जाएँगे, फिर एक दिन हम भी तुम्हारे बराबर हो जाएँगे। क्यों, पापा?"

"पागल नहीं तो, बातें तो सुनो इसकी! ला, दो नानखटाई और दे।" शुक्ला हँसकर बोले।

"नहीं, पहले तो कबूल दो तब हम नानखटाई देंगे। बताओ ब्याह तो नहीं करोगे।" सुधा ने दो नानखटाइयाँ हाथ में उठाकर कहा।

"ला, रख।"

"नहीं, पहले बता दो।"

"अच्छा-अच्छा, नहीं करेंगे।"

सुधा ने दोनों नानखटाइयाँ रखकर पंखा झलना शुरू किया। इतने में फिर नानखटाइयाँ खाते हुए डॉ. शुक्ला बोले, "तेरी सास तुझे देखने आएगी तो यही नानखटाइयाँ तुमसे बनवा कर खिलाएँगे।"

"फिर वही बात!" सुधा ने पंखा पटककर कहा, "अभी तुम वादा कर चुके हो कि ब्याह नहीं करेंगे।"

"हाँ-हाँ, ब्याह नहीं करूँगा, यह तो कह दिया मैंने। लेकिन तेरा ब्याह नहीं करूँगा, यह मैंने कब कहा?"

"हाँ आँ, ये तो फिर झूठ बोल गये तुम..." सुधा बोली।

"अच्छा, ए! चलो ओहर।" महराजिन ने डाँटकर कहा, "एत्ती बड़ी बिटिया हो गयी, मारे दुलारे के बररानी जात है।" महराजिन पुरानी थी और सुधा को डाँटने का पूरा हक था उसे, और सुधा भी उसका बहुत लिहाज करती थी। वह उठी और चुपचाप जाकर अपने कमरे में लेट गयी। बारह बज रहे थे।

वह लेटी-लेटी कल रात की बात सोचने लगी। क्लास में क्या मजा आया था कल; गेसू कितनी अच्छी लड़की है! इस वक्त गेसू के यहाँ खाना-पीना हो रहा होगा और फिर सब लोग मिलकर गाएँगे। कौन जाने शायद दोपहर को कव्वाली भी हो। इन लोगों के यहाँ कव्वाली इतनी अच्छी होती है। सुधा सुन नहीं पाएगी और गेसू ने भी कितना बुरा माना होगा। और यह सब चन्दर की वजह से। चन्दर हमेशा उसके आने-जाने, उठने-बैठने में कतर-ब्योंत करता रहता है। एक बार वह अपने मन से लड़कियों के साथ पिकनिक में चली गयी। वहीं चन्दर के बहुत-से दोस्त भी थे। एक दोस्त ने जाकर चन्दर से जाने क्या कह दिया कि चन्दर उस पर बहुत बिगड़ा। और सुधा कितनी रोयी थी उस दिन। यह चन्दर बहुत खराब है। सच पूछो तो अगर कभी-कभी वह सुधा का कहना मान लेता है तो उससे दुगुना सुधा पर रोब जमाता है और सुधा को रुला-रुलाकर मार डालता है। और खुद अपने-आप दुनिया भर में घूमेंगे। अपना काम होगा तो 'चलो सुधा, अभी करो, फौरन।' और सुधा का काम होगा तो–'अरे भाई, क्या करें, भूल गये।' अब आज ही देखो, सुबह आठ बजे आये और अब देखो दो बजे भी जनाब आते हैं या नहीं? और कह गये हैं दो बजे तक के लिए तो दो बजे तक सुधा को चैन नहीं पड़ेगी। न नींद आएगी, न किसी काम में तबीयत लगेगी। लेकिन अब ऐसे काम कैसे चलेगा। इम्तहान को कितने थोड़े दिन रह गये हैं। और सुधा की तबीयत सिवा पोयट्री (कविता) के और कुछ पढ़ने में लगती ही नहीं। कब से वह चन्दर से कह रही है थोड़ा-सा इकनॉमिक्स पढ़ा दो, लेकिन ऐसा स्वार्थी है कि बस चाय पी ली, नानखटाई खा ली, रुला लिया और फिर अपने मस्त साइकिल पर घूम रहे हैं।

यही सब सोचते-सोचते सुधा को नींद आ गयी।

और तीन बजे जब गेसू आयी तो भी सुधा सो रही थी। पलंग के नीचे डी.एम.सी. का गोला खुला हुआ था और तकिये के पास क्रोशिया पड़ी थी। सुधा थी बड़ी प्यारी। बड़ी खूबसूरत। और खासतौर से उसकी पलकें तो अपराजिता के फूलों को मात करती थीं। और थी इतनी गोरी गुदकारी कि कहीं पर दबा दो तो फूल खिल जाए। मूँगिया होंठों पर जाने कैसा अछूता गुलाब मुसकराता था और बाँहें तो जैसे बेले की पाँखुरियों की बनी हों। गेसू आयी। उसके हाथ में मिठाई थी जो उसकी माँ ने सुधा के लिए भेजी थी। वह पल-भर खड़ी रही और फिर उसने मेज पर मिठाई रख दी और क्रोशिया से सुधा

की गर्दन गुदगुदाने लगी। सुधा ने करवट बदली। गेसू ने नीचे पड़ा हुआ डोरा उठाया और आहिस्ते से उसका चुटीला डोरे के एक छोर से बाँधकर दूसरा छोर मेज के पाये से बाँध दिया। और उसके बाद बोली, "सुधा, सुधा उठो।"

सुधा चौंककर उठ गयी और आँखें मलते-मलते बोली, "अब दो बजे हैं? लाये उन्हें या नहीं?"

"ओहो! उन्हें लाये या नहीं किसे बुलाया था रानी, दो बजे; ज़रा हमें भी तो मालूम हो?" गेसू ने बाँह में चुटकी काटते हुए पूछा।

"उफ्फोह!" सुधा बाँह झटककर बोली, "मार डाला! बेदर्द कहीं की! ये सब अपने उन्हीं अख्तर मियाँ को दिखाया कर!" और ज्यों ही सुधा ने सिर ढँकने के लिए पल्ला उठाया तो देखा कि चोटी डोर में बँधी हुई है। इसके पहले कि सुधा कुछ कहे, गेसू बोली, "या सनम! ज़रा पढ़ाई तो देखो, मैंने तो सुना था कि नींद न आये इसलिए लड़के अपनी चोटी खूँटी में बाँध लेते हैं पर यह नहीं मालूम था कि लड़कियाँ भी अब वही करने लगी हैं।"

सुधा ने चोटी से डोर खोलते हुए कहा, "मैं ही सताने को रह गयी हूँ। अख्तर मियाँ की चोटी बाँधकर नचाना उन्हें। अभी से बेताब क्यों हुई जाती है?"

"अरे रानी, उनके चोटी कहाँ? मियाँ हैं मियाँ?"

"चोटी न सही, दाढ़ी सही।"

"दाढ़ी, खुदा खैर करे, मगर वो दाढ़ी रख लें तो मैं उनसे मोहब्बत तोड़ लूँ।" सुधा हँसने लगी।

"ले, अम्मी ने तेरे लिए मिठाई भेजी है। तू आयी क्यों नहीं?"

"क्या बताऊँ"

"बताऊँ-वताऊँ कुछ नहीं। अब कब आएगी। तू?"

"गेसू, सुनो, इसी मंगल, नहीं-नहीं बृहस्पति को बुआ आ रही हैं। वो चली जाएँगी तब आऊँगी मैं।"

"अच्छा, अब मैं चलूँ। अभी कामिनी और प्रभा के यहाँ मिठाई पहुँचानी है।" गेसू मुड़ते हुए बोली।

"अरे बैठो भी।" सुधा ने गेसू की ओढ़नी पकड़कर उसे खींच कर बिठलाते हुए कहा, "अभी आये हो, बैठे हो, दामन सँभाला है।"

"आहा। अब तो तू भी उर्दू शायरी कहने लगी।" गेसू ने बैठते हुए कहा।

"तेरा ही मर्ज लग गया।" सुधा ने हँसकर कहा।

"देख कहीं और भी मर्ज न लग जाए, वरना फिर तेरे लिए भी इन्तजाम करना होगा!" गेसू ने पलंग पर लेटते हुए कहा।

"अरे ये वो गुड़ नहीं कि चींटे खाएँ।"

"देखूँगी, और देखूँगी क्या, देख रही हूँ। इधर पिछले दो साल से कितनी बदल गयी है तू। पहले कितना हँसती-बोलती थी, कितनी लड़ती-झगड़ती थी और अब कितना हँसने-बोलने पर भी गुमसुम हो गयी है तू। और वैसे हमेशा हँसती रहे चाहे लेकिन जाने किस खयाल में डूबी रहती है हमेशा।" गेसू ने सुधा की ओर देखते हुए कहा।

"धत् पगली कहीं की।" सुधा ने गेसू के एक हल्की-सी चपत मारकर कहा, "यह सब तेरे अपने खयाली-पुलाव हैं। मैं किसी के ध्यान में डूबूँगी, ये हमारे गुरु ने नहीं सिखाया।"

"गुरु तो किसी के नहीं सिखाते सुधा रानी, बिल्कुल सच-सच, क्या कभी तुम्हारे मन में किसी के लिए मोहब्बत नहीं जागी?" गेसू ने बहुत गम्भीरता से पूछा।

"देख गेसू, तुझसे मैंने आज तक तो कभी कुछ नहीं छिपाया, न शायद कभी छिपाऊँगी। अगर कभी कोई बात होती तो तुझसे छिपी न रहती और रहा मुहब्बत का, तो सच पूछ तो मैंने जो कुछ कहानियों में पढ़ा है कि किसी को देखकर मैं रोने लगूँ, गाने लगूँ, पागल हो जाऊँ यह सब कभी मुझे नहीं हुआ। और रहीं कविताएँ तो उनमें की बातें मुझे बहुत अच्छी लगती हैं। कीट्स की कविताएँ पढ़कर ऐसा लगा है अक्सर कि मेरी नसों का कतरा-कतरा आँसू बनकर छलकने वाला है। लेकिन वह महज कविता का असर होता है।"

"महज कविता का असर," गेसू ने पूछा, "कभी किसी खास आदमी के लिए तेरे मन में हँसी या आँसू नहीं उमड़ते! कभी अपने मन को जाँचकर तो देख, कहीं तेरी नाजुक-खयाली के परदे में किसी एक की सूरत तो नहीं छिपी है।"

"नहीं गेसू बानो, नहीं, इसमें मन को जाँचने की क्या बात है। ऐसी बात होती और मन किसी के लिए झुकता तो क्या खुद मुझे नहीं मालूम होता?" सुधा बोली, "लेकिन तुम ऐसा क्यों सोचती हो?"

"बात यह है, सुधी!" गेसू ने सुधा को अपनी गोद में खींचते हुए कहा, "देखो, तुम मुझसे इल्म में ऊँची हो, तुमने अँग्रेजी शायरी छान डाली है लेकिन जिन्दगी से जितना मुझे साबिका पड़ चुका है, अभी तुम्हें नहीं पड़ा। अक्सर कब, कहाँ और कैसे मन अपने को हार बैठता है, यह खुद हमें पता नहीं लगता। मालूम तब होता है जब जिसके कदम पर हमने सिर रखा है, वह झटके से अपने कदम घसीट ले। उस वक्त हमारी नींद टूट जाती है और तब हम जाकर देखते हैं कि अरे हमारा सिर तो किसी के कदमों पर रखा हुआ था और उनके सहारे आराम से सोते हुए हम सपना देख रहे थे कि हमारा सिर कहीं झुका ही नहीं। और मुझे जाने तेरी आँखों में इधर क्या दीख रहा है कि मैं

बेचैन हो उठी हूँ। तूने कभी कुछ नहीं कहा, लेकिन मैंने देखा कि नाजुक अशआर तेरे दिल को उस जगह छू लेते हैं जिस जगह उसी को छू सकते हैं जो अपना दिल किसी के कदमों पर चढ़ा चुका हो। और मैं यह नहीं कहती कि तूने मुझसे छिपाया है। कौन जानता है तेरे दिल ने खुद तुझसे यह राज छिपा रखा हो।" और सुधा के गाल थपथपाते हुए गेसू बोली, "लेकिन मेरी एक बात मानेगी तू? तू कभी इस दर्द को मोल न लेना, बहुत तकलीफ होती है।"

सुधा हँसने लगी, "तकलीफ की क्या बात? तू तो है ही। तुझसे पूछ लूँगी उसका इलाज।"

"मुझसे पूछकर क्या कर लेगी–

'दर्दे दिल क्या बाँटने की चीज है?
बाँट लें अपने पराये दर्दे दिल?'

नहीं, तू बड़ी सुकुँवार है। तू इन तकलीफों के लिए बनी नहीं मेरी चम्पा!" और गेसू ने उसका सिर अपनी छाती में छिपा लिया।

टन से घड़ी ने साढ़े तीन बजाये।

सुधा ने अपना सिर उठाया और घड़ी की ओर देखकर कहा–

"ओफ्फोह, साढ़े तीन बजे गये और अभी तक गायब!"

"किसके इन्तजार में बेताब है तू?" गेसू ने उठकर पूछा।

"बस दर्दे दिल, मुहब्बत, इन्तजार, बेताबी, तेरे दिमाग में तो यही सब भरा रहता है आज कल, वही तू सबको समझती है। इन्तजार-विन्तजार नहीं, चन्दर अभी मास्टर लेकर आएँगे। अब इम्तहान कितना नजदीक है।"

"हाँ, ये तो सच है और अभी तक मुझसे पूछ, क्या पढ़ाई हुई है। असल बात तो यह है कि कॉलेज में पढ़ाई हो तो घर में पढ़ने में मन लगे और राजा-कॉलेज में पढ़ाई नहीं होती। इससे अच्छा सीधे यूनिवर्सिटी में बी.ए. करते तो अच्छा था। मेरी तो अम्मी ने कहा कि वहाँ लड़के पढ़ते हैं, वहाँ नहीं भेजूँगी, लेकिन तू क्यों नहीं गयी, सुधा?"

"मुझे भी चन्दर ने मना कर दिया था।" सुधा बोली।

सहसा गेसू ने एक क्षण को सुधा की ओर देखा और कहा, "सुधी, तुझसे एक बात पूछूँ!"

"हाँ!"

"अच्छा जाने दे!"

"पूछो न!"

"नहीं, पूछना क्या, खुद जाहिर है।"

"क्या?"

"कुछ नहीं।"

"पूछो न!"

"अच्छा, फिर कभी पूछ लेंगे। अब देर हो रही है। आधा घण्टा हो गया। कोचवान बाहर खड़ा है।"

सुधा गेसू को पहुँचाने बाहर तक आयी।

"कभी हसरत को लेकर आओ।" सुधा बोली।

"अब पहले तुम आओ।" गेसू ने चलते-चलते कहा।

"हाँ, हम तो बिनती को लेकर आएँगे। और हसरत से कह देना तभी उसके लिए तोहफा लाएँगे!"

"अच्छा, सलाम..."

और गेसू की गाड़ी मुश्किल से फाटक के बाहर गयी होगी कि साइकिल पर चन्दर आते हुए दीख पड़ा। सुधा ने बहुत गौर से देखा कि उसके साथ कौन है, मगर वह अकेला था।

सुधा सचमुच झल्ला गयी। आखिर लापरवाही की हद होती है। चन्दर को दुनिया भर के काम याद रहते हैं, एक सुधा से जाने क्या खार खाये बैठा है कि सुधा का काम कभी नहीं करेगा। इस बात पर सुधा कभी-कभी दु:खी हो जाती है और घर में किससे वह कहे काम के लिए। खुद कभी बाजार नहीं जाती। नतीजा यह होता है कि वह छोटी-से-छोटी चीज के लिए मोहताज होकर बैठ जाती है। और काम नौकरों से करवा भी ले, पर अब मास्टर तो नौकर से नहीं ढुँढ़वाया जा सकता? ऊन तो नौकर नहीं पसन्द कर सकता? किताबें तो नौकर नहीं ला सकता? और चन्दर का यह हाल है। इसी बात पर कभी-कभी उसे रुलाई आ जाती है।

चन्दर ने आकर बरामदे में साइकिल रखी और सुधा का चेहरा देखते ही वह समझ गया। "काहे मुँह बना रखा है, पाँच बजे मास्टर साहब आएँगे तुम्हारे। अभी उन्हीं के यहाँ से आ रहे हैं। बिसरिया को जानती हो, वही आएँगे।" और उसके बाद चन्दर सीधा स्टडी-रूम में पहुँच गया। वहाँ जाकर देखा तो आराम-कुर्सी पर बैठे-ही-बैठे डॉ. शुक्ला सो रहे हैं अत: उसने अपना चार्ट और पेन उठाया और ड्राइंगरूप में आकर चुपचाप काम करने लगा।

बड़ा गम्भीर था वह। जब इंक घोलने के लिए उसने सुधा से पानी नहीं माँगा और खुद गिलास लाकर आँगन में पानी लेने लगा, तब सुधा समझ गयी कि आज दिमाग

कुछ बिगड़ा है। वह एकदम तड़प उठी। क्या करे वह! वैसे चाहे वह चन्दर से कितना ही ढीठ क्यों न हो पर चन्दर गुस्सा रहता था तब सुधा की रूह काँप उठती थी। उसकी हिम्मत नहीं पड़ती थी कि वह कुछ भी कहे। लेकिन अन्दर-ही-अन्दर वह इतनी परेशान हो उठती थी कि बस।

कई बार वह किसी-न-किसी बहाने से ड्राइंगरूप में आयी, कभी गुलदस्ता बदलने, कभी मेजपोश बदलने, कभी आलमारी में कुछ रखने, कभी आलमारी में से कुछ निकालने, लेकिन चन्दर अपने चार्ट में निगाह गड़ाये रहा। उसने सुधा की ओर देखा तक नहीं। सुधा की आँख में आँसू छलक आये और वह चुपचाप अपने कमरे में चली गयी और लेट गयी। थोड़ी देर वह पड़ी रही, पता नहीं क्यों वह फूट-फूटकर रो पड़ी। खूब रोयी, खूब रोयी और फिर मुँह धोकर आकर पढ़ने की कोशिश करने लगी। जब हर अक्षर में उसे चन्दर का उदास चेहरा नज़र आने लगा तो उसने किताब बन्द करके रख दी और ड्राइंगरूम में गयी। चन्दर ने चार्ट बनाना भी बन्द कर दिया था और कुरसी पर सिर टेके छत की ओर देखता हुआ जाने क्या सोच रहा था।

वह जाकर सामने बैठ गयी तो चन्दर ने चौंककर सिर उठाया और फिर चार्ट को सामने खिसका लिया। सुधा ने बड़ी हिम्मत करके कहा–

"चन्दर!"

"क्या!" बड़े भर्राये गले से चन्दर बोला।

"इधर देखो!" सुधा ने बहुत दुलार से कहा।

"क्या है!" चन्दर ने उधर देखते हुए कहा, "अरे सुधा! तुम रो क्यों रही हो?"

"हमारी बात पर नाराज हो गये तुम। हम क्या करें, हमारा स्वभाव ही ऐसा हो गया। पता नहीं क्यों तुम पर इतना गुस्सा आ जाता है।" सुधा के गाल पर दो बड़े-बड़े मोती ढलक आये।

"अरे पगली! मालूम होता है तुम्हारा तो दिमाग बहुत जल्दी खराब हो जाएगा, हमने तुमसे कुछ कहा है?"

"कह लेते तो हमें सन्तोष हो जाता। हमने कभी कहा तुमसे कि तुम कहा मत करो। गुस्सा मत हुआ करो। मगर तुम तो फिर गुस्सा मन-ही-मन में छिपाने लगते हो। इसी पर हमें रुलाई आ जाती है।"

"नहीं सुधी, तुम्हारी बात नहीं थी और हम गुस्सा भी नहीं थे। पता नहीं क्या मन बड़ा भारी-सा था।"

"क्या बात है, अगर बता सको तो बताओ, वरना हम कौन हैं तुमसे पूछने वाले।" सुधा ने बड़े करुण स्वर में कहा।

"तो तुम्हारा दिमाग खराब हुआ। हमने कभी तुमसे कोई बात छिपायी? जाओ, अच्छी लड़की की तरह मुँह धो आओ।"

सुधा उठी और मुँह धोकर आकर बैठ गयी।

"अब बताओ, क्या बात थी?"

"कोई एक बात हो तो बताएँ। पता नहीं तुम्हारे घर से गये तो एक-न-एक ऐसी बात होती गयी कि मन बड़ा उदास हो गया।"

"आखिर फिर भी कोई बात तो हुई ही होगी!"

"बात यह हुई कि तुम्हारे यहाँ से मैं घर गया खाना खाने। वहाँ देखा चाचाजी आये हुए हैं, उनके साथ एक कोई साहब और हैं। खैर बड़ी खुशी हुई। खाना-वाना खाकर जब बैठे तब मालूम हुआ कि चाचाजी मेरा ब्याह तय करने के लिए आये हैं और साथ वाले साहब मेरे होनेवाले ससुर हैं। जब मैंने इनकार कर दिया तो बहुत बिगड़कर चले गये और बोले हम आज से तुम्हारे लिए मर गये और तुम हमारे लिए मर गये।"

"तुम्हारी माताजी कहाँ हैं?"

"प्रतापगढ़ में, लेकिन वो तो सौतेली हैं और वे तो चाहती ही नहीं कि मैं घर लौटूँ, लेकिन चाचाजी जरूर आज तक मुझसे कुछ मुहब्बत करते थे। आज वह भी नाराज होकर चले गये।"

सुधा कुछ देर तक सोचनी रही, फिर बोली, "तो चन्दर, तुम शादी कर क्यों नहीं लेते?"

"नहीं सुधा, शादी नहीं करती है मुझे। मैंने देखा कि जिसकी शादी हुई, कोई भी सुखी नहीं हुआ। सभी का भविष्य बिगड़ गया। और क्यों एक तवालत पाली जाए? जाने कैसी लड़की हो, क्या हो?"

"तो उसमें क्या? पापा से कहो उस लड़की को जाकर देख लें। हम भी पापा के साथ चले जाएँगे। अच्छी हो तो कर लो न, चन्दर। फिर यहीं रहना। हमें अकेला भी नहीं लगेगा। क्यों?"

"नहीं जी, तुम तो समझती नहीं हो। जिन्दगी निभानी है कि कोई गाय-भैंस खरीदना है!" चन्दर ने हँसकर कहा, "आदमी एक-दूसरे को समझे, बूझे, प्यार करे, तब ब्याह के भी कोई माने हैं।"

"तो उसी से कर लो जिससे प्यार करते हो!"

चन्दर ने कुछ जवाब नहीं दिया।

"बोलो! चुप क्यों हो गये! अच्छा, तुमने किसी को प्यार किया, चन्दर!"

"क्यों?"

"बताओ न!"

"शायद नहीं!"

"बिल्कुल ठीक, हम भी यही सोच रहे थे अभी।" सुधा बोली।

"क्यों, ये क्यों सोच रही थी?"

"इसलिए कि तुमने किया होता तो तुम हमसे थोड़े ही छिपाते, हमें जरूर बताते, और नहीं बताया तो हम समझ गये कि अभी तुमने किसी से प्यार नहीं किया।"

"लेकिन तुमने यह पूछा क्यों, सुधा! यह बात तुम्हारे मन में उठी कैसे?"

"कुछ नहीं, अभी गेसू आयी थी। वह बोली–सुधा, तुमने किसी से कभी प्यार किया है, असल में वह अख्तर को प्यार करती है। उससे उसका विवाह होने वाला है। हाँ, तो उसने पूछा कि तूने किसी से प्यार किया है, हमने कहा, नहीं। बोली, तू अपने से छिपाती है। तो हम मन-ही-मन में सोचने रहे कि तुम आओगे तो तुमसे पूछेंगे कि हमने कभी प्यार तो नहीं किया है। क्योंकि तुम्हीं एक हो जिससे हमारा मन कभी कोई बात नहीं छिपाता, अगर कोई बात छिपाई भी होती हमने, तो तुम्हें जरूर बता देती। फिर हमने सोचा, शायद कभी हमने प्यार किया हो और तुम्हें बताया हो, फिर हम भूल गये हों। अभी उसी दिन देखो, हम पापा की दवाई का नाम भूल गये और तुम्हें याद रहा। शायद हम भूल गये हों और तुम्हें मालूम हो। कभी हमने प्यार तो नहीं किया न?"

"नहीं, हमें तो कभी नहीं बताया।" चन्दर बोला।

"तब तो हमने प्यार-वार नहीं किया। गेसू यूँ ही गप्प उड़ा रही थी।" सुधा ने सन्तोष की साँस लेकर कहा, "लेकिन बस! चाचाजी के नाराज होने पर तुम इतने दुःखी हो गये हो! हो जाने दो नाराज। पापा तो हैं अभी, क्या पापा मुहब्बत नहीं करते तुमसे?"
"सो क्यों नहीं करते, तुमसे ज्यादा मुझसे करते हैं लेकिन उनकी बात से मन तो भारी हो ही गया। उसके बाद गये बिसरिया के यहाँ। बिसरिया ने कुछ बड़ी अच्छी कविताएँ सुनायीं। और भी मन भारी हो गया।" चन्दर ने कहा।

"लो, तब तो चन्दर, तुम प्यार करते होगे! जरूर से?" सुधा ने हाथ पटककर कहा।

"क्यों?"

"गेसू कह रही थी–शायरी पर जो उदास हो जाता है वह जरूर मुहब्बत-वुहब्बत करता है।" सुधा ने कहा, "अरे यह पोर्टिको में कौन है?"

चन्दर ने देखा, "लो बिसरिया आ गया!"

चन्दर उसे बुलाने उठा तो सुधा ने कहा, "अभी बाहर बिठलाना उन्हें, मैं तब तक कमरा ठीक कर लूँ।"

बिसरिया को बाहर बिठाकर चन्दर भीतर आया, अपना चार्ट वगैरह समेटने के

लिए, तो सुधा ने कहा, "सुनो!"

चन्दर रुक गया।

सुधा ने पास आकर कहा, "तो अब तो उदास नहीं हो तुम। नहीं चाहते मत करो शादी, इसमें उदास क्या होना। और कविता-वविता पर मुँह बनाकर बैठे तो अच्छी बात नहीं होगी।"

"अच्छा!" चन्दर ने कहा।

"अच्छा-वच्छा नहीं बताओ, तुम्हें मेरी कसम है, उदास मत हुआ करो फिर हमसे कोई काम नहीं होता।"

"अच्छा, उदास नहीं होंगे, पगली!" चन्दर ने हल्की-सी चपत मारकर कहा और बरबस उसके मुँह से एक ठंडी साँस निकली। उसने चार्ट उठाकर स्टडी रूम में रखा। देखा डॉक्टर साहब अभी सो रहे हैं। सुधा कमरा ठीक कर रही थी। वह आकर बिसरिया के पास बैठ गया।

थोड़ी देर में कमरा ठीक करके सुधा आकर कमरे के दरवाजे पर खड़ी हो गयी। चन्दर से पूछा "क्यों, सब ठीक है?"

उसने सिर हिला दिया, कुछ बोली नहीं।

"यही हैं आपकी शिष्या। सुश्री सुधा शुक्ला। इस साल बी.ए. फाइनल का इम्तहान देंगी।"

बिसरिया ने बिना आँखें उठाये ही हाथ जोड़ लिये। सुधा ने हाथ जोड़े फिर बहुत ही सकुचा-सी गयी। चन्दर उठा और बिसरिया को लाकर उसने अन्दर बिठा दिया। बिसरिया के सामने सुधा और उसकी बगल में चन्दर।

चुप। सभी चुप।

अन्त में चन्दर बोला–"लो, तुम्हारे मास्टर साहब आ गये। अब बताओ न, तुम्हें क्या-क्या पढ़ना है?"

सुधा चुप। बिसरिया कभी यह पुस्तक उलटता, कभी वह। थोड़ी देर बाद वह बोला–"आपके क्या विषय हैं?"

"जी!" बड़ी कोशिश से बोलते हुए सुधा ने कहा–"हिन्दी, इकनॉमिक्स और गृह-विज्ञान।" और उसके माथे पर पसीना झलक आया।

"आपको हिन्दी कौन पढ़ाता है?" बिसरिया ने किताब में ही निगाह गड़ाये हुए कहा।

सुधा ने चन्दर की ओर देखा और मुसकराकर फिर मुँह झुका लिया।

"बोलो न तुम खुद, ये राजा गर्ल्स कॉलेज में हैं। शायद मिस पवार हिन्दी पढ़ाती हैं।" चन्दर ने कहा–"अच्छा, अब आप पढ़ाइए, मैं अपना काम करूँ।" चन्दर उठकर

चल दिया। स्टडी रूप में मुश्किल से चन्दर दरवाजे तक पहुँचा होगा कि सुधा ने बिसरिया से कहा–

"जी, मैं पेन ले आऊँ!" लपकती हुई चन्दर के पास पहुँची।

"ए सुनो, चन्दर!" चन्दर रुक गया और उसका कुरता पकड़कर छोटे बच्चों की तरह मचलते हुए सुधा बोली–"तुम चलकर बैठो तो हम पढ़ेंगे। ऐसे शरम लगती है।"

"जाओ, चलो! हर वक्त वही बचपना!" चन्दर ने डाँटकर कहा–"चलो, पढ़ो सीधे से। इतनी बड़ी हो गयी, अभी तक वही आदतें!"

सुधा चुपचाप मुँह लटकाकर खड़ी हो गयी और फिर धीरे-धीरे पढ़ने लग गयी। चन्दर स्डटी रूम में जाकर चार्ट बनाने लगा। डॉक्टर साहब अभी तक सो रहे थे। एक मक्खी उड़कर उनके गले पर बैठ गयी और उन्होंने बायें हाथ से मक्खी मारते हुए नींद में कहा–"मैं इस मामले में सरकार की नीति का विरोध करता हूँ।"

चन्दर ने चौंककर पीछे देखा। डॉक्टर साहब जग गये थे और जमुहाई ले रहे थे।

"जी, आपने मुझसे कुछ कहा?" चन्दर ने पूछा।

"नहीं, क्या मैंने कुछ कहा था? ओह! मैं सपना देख रहा था कै बज गये?"

"साढ़े पाँच।"

"अरे बिल्कुल शाम हो गयी!" डॉक्टर साहब ने बाहर देखकर कहा–"अब रहने दो कपूर, आज काफी काम किया है तुमने। चाय मँगवाओ। सुधा कहाँ है?"

"पढ़ रही है। आज से उसके मास्टर साहब आने लगे हैं।"

"अच्छा-अच्छा, जाओ उन्हें भी बुला लाओ, और चाय भी मँगवा लो। उसे भी बुला लो–सुधा को।"

चन्दर जब ड्राइंग रूम में पहुँचा तो देखा सुधा किताबें समेट रही है और बिसरिया जा चुका है। उसने सुधा से कहना चाहा लेकिन सुधा का मुँह देखते ही उसने अनुमान किया कि सुधा लड़ने के मूड में है, अत: वह स्वयं ही जाकर महराजिन से कह आया कि तीन प्याला चाय पढ़ने के कमरे में भेज दो। जब वह लौटने लगा तो खुद सुधा ही उसके रास्ते में खड़ी हो गयी और धमकी के स्वर में बोली–"अगर कल से साथ नहीं बैठोगे तुम, तो हम नहीं पढ़ेंगे।"

"हम साथ नहीं बैठ सकते, चाहे तुम पढ़ो या न पढ़ो।" चन्दर ने ठंडे स्वर में कहा और आगे बढ़ा।

"तो फिर हम नहीं पढ़ेंगे।" सुधा ने जोर से कहा।

"क्या बात है? क्यों लड़ रहे हो तुम लोग?" डॉ. शुक्ला अपने कमरे से बोले। चन्दर कमरे में जाकर बोला, "कुछ नहीं, ये कह रही हैं कि..."

"पहले हम कहेंगे," बात काटकर सुधा बोली–"पापा, हमने इनसे कहा कि तुम पढ़ाते वक्त बैठा करो, हमें बहुत शरम लगती है, ये कहते हैं पढ़ो चाहे न पढ़ो, हम नहीं बैठेंगे।"

"अच्छा-अच्छा, जाओ चाय लाओ।"

जब सुधा चाय लेने गयी तो डॉक्टर साहब बोले–"कोई विश्वासपात्र लड़का है? अपने घर की लड़की समझकर सुधा को सौंपना पढ़ने के लिए। सुधा अब बच्ची नहीं है।"

"हाँ-हाँ, अरे यह भी कोई कहने की बात है!"

"हाँ, वैसे अभी तक सुधा तुम्हारी ही निगहबानी में रही है। तुम खुद ही अपनी जिम्मेवारी समझते हो। लड़का हिन्दी में एम.ए. है?"

"हाँ, एम.ए. कर रहा है।"

"अच्छा है, तब तो बिनती आ रही है, उसे भी पढ़ा देगा।"

सुधा चाय लेकर आ गयी थी।

"पापा, तुम लखनऊ कब जाओगे?"

"शुक्रवार को, क्यों?"

"और ये भी जाएँगे?"

"हाँ।"

"और हम अकेले रहेंगे?"

"क्यों, महराजिन यहीं सोएगी और अगले सोमवार को हम लौट आएँगे।" डॉ. शुक्ला ने चाय का प्याला मुँह से लगाते हुए कहा।

एक गमकदे की शाम, मन उदास, तबीयत उचटी-सी, सितारों की रोशनी फीकी लग रही थी। मार्च की शुरुआत थी और फिर भी जाने शाम इतनी गरम थी, या सुधा को ही इतनी बेचैनी लग रही थी। पहले वह जाकर सामने के लॉन में बैठी लेकिन सामने के मौलसिरी के पेड़ में छोटी-छोटी गौरैयों ने मिलकर इतनी जोर से चहचहाना शुरू किया कि उसकी तबीयत घबरा उठी। वह इस वक्त एकान्त चाहती थी और सबसे बढ़कर सन्नाटा चाहती थी जहाँ कोई न बोले, कोई बात न करे, सभी खामोशी में डूबे हुए हों।

वह उठकर टहलने लगी और जब लगा कि पैरों में ताकत ही नहीं रही तो फिर लेट गयी, हरी-हरी घास पर। मंगलवार की शाम थी और अभी तक पापा नहीं आये थे। आना तो दूर, पापा या चन्दर के हाथ के एक पुरजे के लिए तरस गयी थी। किसी ने यह भी नहीं लिखा कि वे लोग कहाँ रह रहे हैं, या कब तक आएँगे। किसी को

भी सुधा का खयाल नहीं। शनिवार या इतवार को तो वह हर रोज खाना खाते वक्त रोयी, चाय पीना तो उसने उसी दिन से छोड़ दिया था और सोमवार को सुबह पापा नहीं आये तो वह इतना फूट-फूटकर रोयी कि महराजिन को सिंकती हुई रोटी छोड़कर चूल्हे की आँच निकालकर सुधा को समझाने आना पड़ा। और सुधा की रुलाई देखकर तो महराजिन के हाथ-पाँव ढीले हो गये थे। उसकी सारी डाँट हवा हो गयी थी और वह सुधा का मुँह-ही-मुँह देखती थी। कल से कॉलेज भी नहीं गयी थी। और दोनों दिन इन्तजार करती रही कि कहीं दोपहर को पापा न आ जाएँ। गेसू से भी दो दिन से मुलाकात नहीं हुई थी।

लेकिन मंगल को दोपहर तक जब कोई खबर न आयी तो उसकी घबराहट बेकाबू हो गयी। इस वक्त उसने बिसरिया से कोई भी बात नहीं की। आधा घण्टा पढ़ने के बाद उसने कहा कि उसके सिर में दर्द हो रहा है और उसके बाद खूब रोयी, खूब रोयी। उसके बाद उठी, चाय पी, मुँह-हाथ धोया और सामने के लॉन में टहलने लगी। और फिर लेट गयी हरी-हरी घास पर।

बड़ी ही उदास शाम थी। और क्षितिज की लाली के होठ भी स्याह पड़ गये थे। बादल साँस रोके पड़े थे और खामोश सितारे टिमटिमा रहे थे। बगुलों की धुँधली-धुँधली कतारें पर मारती हुई गुजर रही थीं। सुधा ने एक लम्बी साँस लेकर सोचा कि अगर वह चिड़िया होती तो एक क्षण में उड़कर जहाँ चाहती वहाँ की खबर ले आती। पापा इस वक्त घूमने गये होंगे। चन्दर अपने दोस्तों की टोली में बैठा रँगरेलियाँ कर रहा होगा। वहाँ भी दोस्त बना ही लिये होंगे उसने। बड़ा बातूनी है चन्दर और बड़ा मीठे स्वभाव का। आज तक किसी से सुधा ने उसकी बुराई नहीं सुनी। सभी उसको प्यार करते थे। यहाँ तक कि महराजिन, जो सुधा को हमेशा डाँटती रहती थी, चन्दर का हमेशा पक्ष लेती थी। और सुधा हरेक से पूछ लेती थी कि चन्दर के बारे में उसकी क्या राय है? लेकिन सब लोग जितनी चन्दर की तारीफ करते वह उतना अच्छा उसे नहीं समझती थी। आदमी की परख तब होती है जब दिन-रात बरते। चन्दर उसका ऊन कभी नहीं लाकर देता था, बादामी रंग का मँगाओ तो केसरिया रंग का ला देता था। इतने नक्शे बनाता रहता था, और सुधा ने हमेशा उससे कहा कि मेजपोश की कोई डिजाइन बना दो तो उसने कभी नहीं बनायी। एक बार सुधा ने बहुत अच्छी वायल कानपुर से मँगवायी और चन्दर ने कहा, "लाओ, यह बहुत अच्छी है इस पर हम किनारे की डिजाइन बना देंगे।" और उसके बाद उसने उसमें तमाम पान-जैसा जाने क्या बना दिया और जब सुधा ने पूछा, "यह क्या है?" तो बोला, "लंका का नक्शा है।" जब सुधा बिगड़ी तो बोला, "लड़कियों के हृदय में रावण से मेघनाद तक करोड़ों राक्षसों का वास होता है, इसलिए

उनकी पोशाक में लंका का नक्शा ज्यादा सुशोभित होता है।" मारे गुस्से के सुधा ने वह धोती अपनी मालिन को दे डाली थी। यह सब बातें तो किसी को मालूम नहीं। उनके सामने तो ज़रा-सा कपूर साहब हँस दिये, चार मजाक की बातें कर दीं, छोटे-मोटे उनके काम कर दिये, मीठी बातें कर लीं और सब समझे कपूर साहब तो बिल्कुल गुलाब के फूल हैं। लेकिन कपूर साहब एक तीखे काँटे हैं जो दिन-रात सुधा के मन में चुभते रहते हैं, यह तो दुनिया को नहीं मालूम। दुनिया क्या जाने कि सुधा कितनी परेशान रहती है चन्दर की आदतों से! अगर दुनिया को मालूम हो जाए तो कोई चन्दर की ज़रा भी तारीफ न करे, सब सुधा को ही ज्यादा अच्छा कहें, लेकिन सुधा कभी किसी से कुछ नहीं कहती, मगर आज उसका मन हो रहा था कि किसी से चन्दर की जी भरकर बुराई कर ले तो उसका मन हल्का हो जाए।

"चलो बिटिया रानी, तई खाय लेव, फिर भीतर लेटो। अबहिन लेटे का बखत नहीं आवा!" सहसा महराजिन ने आकर सुधा की स्वप्न-शृंखला तोड़ते हुए कहा।

"अब हम नहीं खाएँगे, भूख नहीं।" सुधा ने अपने सुनहले सपनों ही में डूबी हुई बेहोश आवाज में जवाब दिया।

"खाय लेव बिटिया, खाय-पियै छोड़ै से कसस काम चली, आव उठौ!" महराजिन ने बड़े दुलार से कहा। सुधा पीछा छूटने की कोई आशा न देखकर उठ गयी और चल दी खाने। कौर उठाते ही उसकी आँख में आँसू छलक आये, लेकिन अपने को रोक लिया उसने। दूसरों के सामने अपने को बहुत शान्त रखना आता था उसे। दो कौर खाने के बाद वह महराजिन से बोली, "आज कोई चिट्ठी तो नहीं आयी?"

"नहीं बिटिया, आज तो दिन भर घरै में रह्यो!" महराजिन ने पराँठे उलटते हुए जवाब दिया–"काहे बिटिया, बाबूजी कुछौ नाही लिखिन तो छोटे बाबू तो लिख देते।"

"अरे महराजिन, यही तो हमारी जान का रोना है। हम चाहे रो-रोकर मर जाएँ मगर न पापा को खयाल, न पापा के शिष्य को। और चन्दर तो ऐसे खराब हैं कि हम क्या करें। ऐसे स्वार्थी हैं, अपने मतलब के कि बस! सुबह-शाम आएँ और हम या पापा न मिलें तो आफत ढा देंगे–बहुत घूमने लगी हो तुम, बहुत बाहर कदम निकल गया है तुम्हारा–और सच पूछो तो चन्दर की वजह से हमने सब जगह आना-जाना बन्द कर दिया और खुद हैं कि आज लखनऊ, कल कलकत्ता और एक चिट्ठी भेजने तक का वक्त नहीं मिलता! अभी हम ऐसा करते तो हमारी जान नोच खाते! और पापा को देखो, उनके दुलारे उनके साथ हैं तो बस और किसी की फिक्र ही नहीं। अब तुम महराजिन, चन्दर को तो कभी कुछ चाय-वाय बना के मत देना।"

"काहे बिटिया, काहे कोसत हो। कैसा चाँद-से तो हैं छोटे बाबू, और कैसा हँस के बातें करत हैं। माई का जाने कैसे हियाव पड़ा कि उन्हें अलग कै दिहिस। बेचारा होटल में जाने कैसे रोटी खात होई। उन्हें हिंयई बुलाय लेव तो अपने हाथ की खिलाय के दुई महीना माँ मोटा कै देईं। हमें तोसे ज्यादा उसकी ममता लगत है।"

"बीबीजी, बाहर एक मेम पूछत हैं–हिंया कोने डाकदर रहत हैं? हम कहा, नाहीं, हिंया तो बाबूजी रहत हैं तो कहत हैं, नहीं यही मकान आय।" मालिन ने सहसा आकर बहुत स्वतन्त्र स्वरों में कहा।

"बैठाओ उन्हें, हम आते हैं।" सुधा ने कहा और जल्दी-जल्दी खाना शुरू किया और जल्दी-जल्दी खत्म कर दिया।

बाहर जाकर उसने देखा तो नीलकाँटे के झाड़ से टिकी हुई एक बाइसिकिल रखी थी और एक ईसाई लड़की लॉन पर टहल रही है। होगी करीब चौबीस-पच्चीस बरस की, लेकिन बहुत अच्छी लग रही थी।

"कहिए, आप किसे पूछ रही हैं?" सुधा ने अँग्रेजी में पूछा।

"मैं डॉक्टर शुक्ला से मिलने आयी हूँ।" उसने शुद्ध हिन्दुस्तानी में कहा।

"वे तो बाहर गये हैं और कब आएँगे, कुछ पता नहीं। कोई खास काम है आपको?" सुधा ने पूछा।

"नहीं, यूँ ही मिलने आ गयी। आप उनकी लड़की हैं?" उसने साइकिल उठाते हुए कहा।

"जी हाँ, लेकिन अपना नाम तो बताती जाइए।"

"मेरा नाम कोई महत्त्वपूर्ण नहीं है। मैं उनसे मिल लूँगी। और हाँ, आप उसे जानती हैं, मिस्टर कपूर को?"

"आहा! आप पम्मी हैं, मिस डिक्रूज!" सुधा को एकदम खयाल आ गया–"आइए, आइए; हम आपको ऐसे नहीं जाने देंगे। चलिए, बैठिए।" सुधा ने बड़ी बेतकल्लुफी से उसकी साइकिल पकड़ ली।

"अच्छा-अच्छा, चलो!" कहकर पम्मी जाकर ड्राइंग रूम में बैठ गयी।

"मिस्टर कपूर रहते कहाँ हैं?" पम्मी ने बैठने से पहले पूछा।

"रहते तो वे चौक में हैं, लेकिन आजकल तो वे भी पापा के साथ बाहर गये हैं। वे तो आपकी एक दिन बहुत तारीफ कर रहे थे, बहुत तारीफ। इतनी तारीफ किसी लड़की की करते तो हमने सुना नहीं।"

"सचमुच!" पम्मी का चेहरा लाल हो गया। "वह बहुत अच्छे हैं, बहुत अच्छे हैं!"

थोड़ी देर पम्मी चुप रही, फिर बोली–"क्या बताया था उन्होंने हमारे बारे में?"

"ओह तमाम! एक दिन शाम को तो हम लोग आप ही के बारे में बातें करते रहे। आपके भाई के बारे में बताते रहे। फिर आपके काम के बारे में बताया कि कितनी तेज टाइप करती हैं, फिर आपकी रुचियों के बारे में बताया कि आपको साहित्य से बहुत शौक नहीं है और आप शादी से बेहद नफरत करती हैं और आप ज्यादा मिलती-जुलती नहीं, बाहर आती-जाती नहीं और मिस डिक्रूज..."

"न, आप पम्मी कहिए मुझे?"

"हाँ, तो मिस पम्मी, शायद इसलिए आप उसे इतनी अच्छी लगीं कि आप कहीं आती-जाती नहीं, वह लड़कियों का आना-जाना और आजादी बहुत नापसन्द करता है।" सुधा बोली।

"नहीं, वह ठीक सोचता है।" पम्मी बोली–"मैं शादी और तलाक के बाद इसी नतीजे पर पहुँची हूँ कि चौदह बरस से चौंतीस बरस तक लड़कियों को बहुत शासन में रखना चाहिए।" पम्मी ने गम्भीरता से कहा।

एक ईसाई मेम के मुँह से यह बात सुनकर सुधा दंग रह गयी।

"क्यों?" उसने पूछा।

"इसलिए कि इस उम्र में लड़कियाँ बहुत नादान होती हैं और जो कोई भी चार मीठी बातें करता है, तो लड़कियाँ समझती हैं कि इससे ज्यादा प्यार उन्हें कोई नहीं करता। और इस उम्र में जो कोई भी ऐरा-गैरा उनके संसर्ग में आ जाता है, उसे वे प्यार का देवता समझने लगती हैं और नतीजा यह होता है कि वे ऐसे जाल में फँस जाती हैं कि जिन्दगी भर उससे छुटकारा नहीं मिलता। मेरा तो यह विचार है कि या तो लड़कियाँ चौंतीस बरस के बाद शादियाँ करें जब वे अच्छा-बुरा समझने के लायक हो जाएँ, नहीं तो मुझे तो हिन्दुओं का कायदा सबसे ज्यादा पसन्द आता है कि चौदह वर्ष के पहले ही लड़की की शादी कर दी जाए और उसके बाद उसका संसर्ग उसी आदमी से रहे जिससे उसे जिन्दगी भर निबाह करना है और अपने विकास-क्रम से दोनों ही एक-दूसरे को समझते चलें। लेकिन यह तो सबसे भद्दा तरीका है कि चौदह और चौंतीस बरस के बीच में लड़की की शादी हो, या उसे आजादी दी जाए। मैंने तो स्वयं अपने ऊपर बन्धन बाँध लिये थे।...तुम्हारी तो शादी अभी नहीं हुई?"

"नहीं।"

"बहुत ठीक, तुम चौंतीस बरस के पहले शादी मत करना, अच्छा हाँ, और क्या बताया चन्दर ने मेरे बारे में?"

"और तो कुछ खास नहीं; हाँ, यह कह रहा था, आपको चाय और सिगरेट बहुत

अच्छी लगती है। ओहो, देखिए मैं भूल ही गयी, लीजिए सिगरेट मँगवाती हूँ।" और सुधा ने घंटी बतायी।

"रहने दीजिए, मैं सिगरेट छोड़ रही हूँ।"

"क्यों?"

"इसलिए कि कपूर को अच्छा नहीं लगता और अब वह मेरा दोस्त बन गया है, और दोस्ती में एक-दूसरे से निबाह ही करना पड़ता है। उसने आपसे यह नहीं बताया कि मैंने उसे दोस्त मान लिया है?" पम्मी ने पूछा।

"जी हाँ, बताया था, अच्छा तो चाय लीजिए!"

"हाँ-हाँ, चाय मँगवा लीजिए। आपका कपूर से क्या सम्बन्ध है?" पम्मी ने पूछा।

"कुछ नहीं। मुझसे भला क्या सम्बन्ध होगा उनका, जब देखिए तब बिगड़ते रहते हैं मुझ पर; और बाहर गये हैं और आज तक कोई खत नहीं भेजा। ये कहीं सम्बन्ध हैं?"

"नहीं, मेरा मतलब आप उनसे घनिष्ठ हैं!"

"हाँ, कभी वह छिपाते तो नहीं मुझसे कुछ! क्यों?"

"तब तो ठीक है, सच्चे दिल के आदमी मालूम पड़ते हैं। आप तो यह बता सकती हैं कि उन्हें क्या-क्या चीजें पसन्द हैं?"

"हाँ...उन्हें कविता पसन्द है। बस कविता के बारे में बात न कीजिए, कविता सुना दीजिए उन्हें या कविता की किताब दे दीजिए उन्हें और उनको सुबह घूमना पसन्द है। रात को गंगाजी की सैर करना पसन्द है। सिनेमा तो बहुत पसन्द है। और, और क्या, चाय की पत्ती का हलुआ पसन्द है।"

"यह क्या होता है?"

"मेरा मतलब बिना दूध की चाय उन्हें पसन्द है।"

"अच्छा, अच्छा। देखिए आप सोगेंगी कि मैं इस तरह से मि. कपूर के बारे में पूछ रही हूँ जैसे मैं कोई जासूस होऊँ, लेकिन असल बात मैं आपको बता दूँ। मैं पिछले दो-तीन साल से अकेली रहती रही। किसी से नहीं मिलती-जुलती थी। उस दिन मिस्टर कपूर गये तो पता नहीं क्यों मुझ पर प्रभाव पड़ा। उनको देखकर ऐसा लगा कि यह आदमी है जिसमें दिल की सच्चाई है, जो आदमियों में बिल्कुल नहीं होती। तभी मैंने सोचा, इनसे दोस्ती कर लूँ। लेकिन चूँकि एक बार दोस्ती करके विवाह, और विवाह के बाद अलगाव, मैं भोग चुकी हूँ इसलिए इनके बारे में पूरी जाँच-पड़ताल कर लेना चाहती हूँ। लेकिन दोस्त तो अब बना ही चुकी हूँ।" चाय आ गयी थी और पम्मी ने सुधा के प्याले में चाय ढाली।

"न, मैं तो अभी खाना खा चुकी हूँ।" सुधा बोली।

पम्मी ने दो-तीन चुस्कियों के बाद कहा—"आपके बारे में चन्दर ने मुझसे कहा था।"

"कहा होगा!" सुधा मुँह बिगाड़कर बोली—"मेरी बुराई कर रहे होंगे और क्या?"

पम्मी चाय के प्यारे से उठते हुए धुएँ को देखती हुई अपने ही खयाल में डूबी थी। थोड़ी देर बाद बोली, "मेरा अनुमान गलत नहीं होता। मैंने कपूर को देखते ही समझ लिया था कि यही मेरे लिए उपयुक्त मित्र हैं। मैंने कविता पढ़नी बहुत दिनों से छोड़ दी लेकिन किसी कवयित्री ने, शायद मिसेज ब्राउनिंग ने कहीं लिख था, कि वह मेरी जिन्दगी में रोशनी बनकर आया, उसे देखते ही मैं समझ गयी कि यह वह आदमी है जिसके हाथ में मेरे दिल के सभी राज़ सुरक्षित रहेंगे। वह खेल नहीं करेगा, और प्यार भी नहीं करेगा। जिन्दगी में आकर भी जिन्दगी से दूर और सपनों में बँधकर भी सपनों से अलग...यह बात कपूर पर बहुत लागू होती है। माफ करना मिस सुधा, मैं आपसे इसलिए कह रही हूँ कि आप इनकी घनिष्ठ हैं और आप उन्हें बतला देंगी कि मेरा क्या खयाल है उनके बारे में। अच्छा, अब मैं चलूँगी।"

"बैठिए न!" सुधा बोली।

"नहीं, मेरा भाई अकेला खाने के लिए इन्तजार कर रहा होगा।" उठते हुए पम्मी ने कहा।

"आप बहुत अच्छी हैं। इस वक्त आप आयीं तो मैं थोड़ी-सी चिन्ता भूल गयी वरना मैं तीन दिन से उदास थी। बैठिए, कुछ और चन्दर के बारे में बताइए न!"

"अब नहीं। वह अपने ढंग का अकेला आदमी है, यह मैं कह सकती हूँ...ओह तुम्हारी आँखें बड़ी सुन्दर हैं। देखूँ।" और छोटे बच्चे की तरह उसके मुँह को हथेलियों से ऊपर उठाकर पम्मी ने कहा, "बहुत सुन्दर आँखें हैं। माफ करना, मैं कपूर से भी इतनी ही बेतकल्लुफ हूँ!"

सुधा झेंप गयी। उसने आँखें नीची कर लीं।

पम्मी ने अपनी साइकिल उठाते हुए कहा—"कपूर के साथ आप आइएगा। और आपने कहा था कपूर को कविता पसन्द है।"

"जी हाँ, गुडनाइट।"

जब पम्मी बँगले पर पहुँची तो उसकी साइकिल के करियर में अँग्रेजी कविता के पाँच-छह ग्रन्थ बँथे।

आठ बज चुके थे। सुधा जाकर अपने बिस्तरे पर लेटकर पढ़ने लगी। अँग्रेजी कविता पढ़ रही थी। अँग्रेजी लड़कियाँ कितनी आजाद और स्वच्छन्द होती होंगी! जब पम्मी, जो ईसाई है, इतनी आजाद है, उसने सोचा और पम्मी कितनी अच्छी है उसकी बेतकल्लुफी में भोलापन तो नहीं है, पर सरलता बेहद है। बड़ा साफ दिल है, कुछ छिपाना नहीं जानती।

और सुधा से सिर्फ पाँच-छह साल बड़ी है, लेकिन सुधा उसके सामने बच्ची लगती है। कितना जानती है पम्मी और कितनी अच्छी समझ है उसकी। और चन्दर की तारीफ करते नहीं थकती। चन्दर के लिए उसने सिगरेट छोड़ दी। चन्दर उसका दोस्त है, इतनी पढ़ी-लिखी लड़की के लिए रोशनी का देवदूत है। सचमुच चन्दर पर सुधा को गर्व है। और उसी चन्दर से वह लड़-झगड़ लेती है, इतनी मान-मनुहार कर लेती है और चन्दर सब बर्दाश्त कर लेता है वरना चन्दर के इतने बड़े-बड़े दोस्त हैं और चन्दर की इतनी इज्जत है। अगर चन्दर चाहे तो सुधा की रत्ती भर परवाह न करे लेकिन चन्दर सुधा की भली-बुरी बात बर्दाश्त कर लेता है। और वह कितना परेशान करती रहती है चन्दर को।

कभी अगर सचमुच चन्दर बहुत नाराज हो गया और सचमुच हमेशा के लिए बोलना छोड़ दे तब क्या होगा? या चन्दर यहाँ से कहीं चला जाए तब क्या होगा? खैर, चन्दर जाएगा तो नहीं इलाहाबाद छोड़कर, लेकिन अगर वह खुद कहीं चली गयी तब क्या होगा? वह कहाँ जाएगी! अरे पापा को मनाना तो बायें हाथ का खेल है, और ऐसा प्यार वह करेगी नहीं कि शादी करनी पड़े।

लेकिन यह सब तो ठीक है। पर चन्दर ने चिट्ठी क्यों नहीं भेजी? क्या नाराज होकर गया है? जाते वक्त सुधा ने परेशान तो बहुत किया था। होलडॉल की पेटी का बक्सुआ खोल दिया था और उठाते ही चन्दर के हाथ से सब कपड़े बिखर गये। चन्दर कुछ बोला नहीं लेकिन जाते समय उसने सुधा को डाँटा भी नहीं और न यही समझाया कि घर का खयाल रखना, अकेले घूमना मत, महराजिन से लड़ना मत, पढ़ती रहना। इससे सुधा समझ तो गयी थी कि वह नाराज है, लेकिन कुछ कहा नहीं।

लेकिन चन्दर को खत तो भेजना चाहिए था। चाहे गुस्से का ही खत क्यों न होता? बिना खत के मन उसका कितना घबरा रहा है। और क्या चन्दर को मालूम नहीं होगा। यह कैसे हो सकता है? जब इतनी दूर बैठे हुए सुधा को मालूम हो गया कि चन्दर नाखुश है तो क्या चन्दर को नहीं मालूम होगा कि सुधा का मन उदास हो गया है। जरूर मालूम होगा। सोचते-सोचते उसे जाने कब नींच आ गयी और नींद में उसे पापा या चन्दर की चिट्ठी मिली या नहीं, यह तो नहीं मालूम, लेकिन इतना जरूर है कि जैसे यह सारी सृष्टि एक बिन्दु से बनी और एक बिन्दु में समा गयी, उसी तरह सुधा की यह भादों की घटाओं जैसी फैली हुई बेचैनी और गीली उदासी एक चन्दर के ध्यान से उठी और उसी में समा गयी।

दूसरे दिन सुबह सुधा आँगन में बैठी हुई आलू छील रही थी और चन्दर का इन्तजार कर रही थी। उसी दिन रात को पापा आ गये थे और दूसरे दिन सुबह बुआजी और बिनती।

"सुधी!" किसी ने इतने प्यार से पुकारा कि हवाओं में रस भर गया।

"अच्छा! आ गये चन्दर!" सुधा आलू छोड़कर उठ बैठी, "क्या लाये हमारे लिए लखनऊ से?"

"बहुत कुछ, सुधा!"

"के है सुधा!" सहसा कमरे में से कोई बोला।

"चन्दर हैं।" सुधा ने कहा, "चन्दर, बुआ आ गयीं।" और कमरे से बुआजी बाहर आयीं।

"प्रणाम, बुआजी!" चन्दर बोला और पैर छूने के लिए झुका।

"हाँ, हाँ, हाँ!" बुआजी तीन कदम पीछे हट गयीं। "देखत्यों नैं हम पूजा की धोती पहने हैं। ई के है, सुधा!"

सुधा ने बुआ की बात का कुछ जवाब नहीं दिया–"चन्दर, चलो अपने कमरे में; यहाँ बुआ पूजा करेंगी।"

चन्दर अलग हटा। बुआ ने हाथ के पंचपात्र से वहाँ पानी छिड़का और जमीन फूँकने लगीं। "सुधा, बिनती को भेज देव।" बुआजी ने धूपदानी में महराजिन से कोयला लेते हुए कहा।

सुधा अपने कमरे में पहुँचकर चन्दर को खाट पर बिठाकर नीचे बैठ गयी।

"अरे, ऊपर बैठो।"

"नहीं, हम यहीं ठीक हैं।" कहकर वह बैठ गयी और चन्दर की पैंट पर पेंसिल से लकीरें खींचने लगीं।

"अरे यह क्या कर रही हो?" चन्दर ने पैर उठाते हुए कहा।

"तो तुमने इतने दिन क्यों लगाये?" सुधा ने दूसरे पाँयचे पर पेंसिल लगाते हुए कहा।

"अरे, बड़ी आफत में फँस गये थे, सुधा। लखनऊ से हम लोग गये बरेली। वहाँ एक उत्सव में हम लोग भी गये और एक मिनिस्टर भी पहुँचे। कुछ सोशलिस्ट, कम्युनिस्ट और मजदूरों ने विरोध प्रदर्शन किया। फिर तो पुलिस वालों और मजदूरों में जमकर लड़ाई हुई। वह तो कहो एक बेचारा सोशलिस्ट लड़का था कैलाश मिश्रा, उसने हम लोगों की जान बचायी, वर्ना पापा और हम, दोनों ही अस्पताल में होते..."

"अच्छा! पापा ने हमें कुछ बताया नहीं!" सुधा घबराकर बोली और बड़ी देर तक बरेली, उपद्रव और कैलाश मिश्रा की बात करती रही।

"अरे ये बाहर गा कौन रहा है?" चन्दर से सहसा पूछा।

बाहर कोई गाता हुआ आ रहा था, "आँचल में क्यों बाँध लिया मुझ परदेशी का प्यार...आँचल में क्यों..." और चन्दर को देखते ही उस लड़की ने चौंककर कहा,

"अरे?" क्षण-भर स्तब्ध, और फिर शरम से लाल होकर भागी बाहर।

"अरे, भागती क्यों है? यही तो हैं चन्दर।" सुधा ने कहा।

लड़की बाहर रुक गयी और गरदन हिलाकर इशारे से कहा, "मैं नहीं आऊँगी। मुझे शरम लगती है।"

"अरे चली आ, देखो हम अभी पकड़ लाते हैं, बड़ी झक्की है यह।" कहकर सुधा उठी, वह फिर भागी। सुधा पीछे-पीछे भागी। थोड़ी देर बाद सुधा अन्दर आयी तो सुधा के हाथ में उस लड़की की चोटी और वह बेचारी बुरी तरह अस्त-व्यस्त थी। दाँत से अपने आँचल का छोर दबाये हुए थी बाल की तीन-चार लटें मुँह पर झुक रही थीं और लाज के मारे सिमटी जा रही थी और आँखें थीं कि मुस्काये या रोये, यह तय ही नहीं कर पायी थीं।

"देखो...चन्दर...देखो।" सुधा हाँफ रही थी–"यही है बिनती मोटकी कहीं की, इतनी मोटी है कि दम निकल गया हमारा।" सुधा बुरी तरह हाँफ रही थी।

चन्दर ने देखा–बेचारी की बुरी हालत थी। मोटी तो बहुत नहीं थी पर हाँ, गाँव की तन्दुरुस्ती थी, लाल चेहरा, जिसे शरम ने तो दूना बना दिया था। एक हाथ से अपनी चोटी पकड़ थी, दूसरे से अपने कपड़े ठीक कर रही थी और दाँत से आँचल पकड़े।

"छोड़ दो उसे, यह क्या है सुधा! बड़ी जंगली हो तुम।" चन्दर ने डाँटकर कहा।

"जंगली मैं हूँ या यह?" चोटी छोड़कर सुधा बोली–"यह देखो, दाँत काट लिया है इसने।" सचमुच सुधा के कन्धे पर दाँत के निशान बने हुए थे।

चन्दर इस सम्भावना पर बेतहाशा हँसने लगा कि इतनी बड़ी लड़की दाँत काट सकती है–"क्यों जी, इतनी बड़ी हो गयी और दाँत काटती हो?" उसकी हँसी रुक नहीं रही थी। "सचमुच यह तो बड़े मजे की लड़की है। बिनती है इसका नाम? क्यों रे, महुआ बीनती थी क्या वहाँ, जो बुआजी ने बिनती नाम रखा है?"

वह पल्ला ठीक से ओढ़ चुकी थी। बोली, "नमस्ते।"

चन्दर और सुधा दोनों हँस पड़े। "अब इतनी देर बाद याद आयी।" चन्दर और भी हँसने लगा।

"बिनती! ए बिनती!" बुआ की आवाज आयी। बिनती ने सुधा की ओर देखा और चली गयी।

"और कहो सुधी," चन्दर बोला–"क्या हाल-चाल रहा यहाँ?"

"फिर भी एक चिट्ठी भी तो नहीं लिखी तुमने।" सुधा बड़ी शिकायत के स्वर में बोली, "हमें रोज रुलाई आती थी। और तुम्हारी वो आयी थी।"

"हमारी वो?" चन्दर ने चौंककर पूछा।

"अरे हाँ, तुम्हारी पम्मी रानी।"

"अच्छा वो आयी थीं। क्या बात हुई?"

"कुछ नहीं; तुम्हारी तसवीर देख-देखकर रो रही थीं।" सुधा ने उँगलियाँ नचाते हुए कहा।

"मेरी तसवीर देखकर! अच्छा, और थी कहाँ मेरी तसवीर?"

"अब तुम तो बहस करने लगे, हम कोई वकील हैं! तुम कोई नयी बात बताओ।" सुधा बोली।

"हम तो तुम्हें बहुत-बहुत बात बताएँगे। पूरी कहानी है।"

इतने में बिनती आयी। उसके हाथ में एक तश्तरी थी और एक गिलास। तश्तरी में कुछ मिठाई थी, और गिलास में शरबत। उसने लाकर तश्तरी चन्दर के सामने रख दी।

"ना भई, हम नहीं खाएँगे।" चन्दर ने इनकार किया।

बिनती ने सुधा की ओर देखा।

"खा लो। लगे नखरा करने। लखनऊ से आ रहे हैं न, तकल्लुफ न करें तो मालूम कैसे हो?" सुधा ने मुँह चिढ़ाते हुए कहा। चन्दर मुसकराकर खाने लगा।

"दीदी के कहने पर खाने लगे आप!" बिनती ने अपने हाथ की अँगूठी की ओर देखते हुए कहा।

चन्दर हँस दिया, कुछ बोला नहीं। बिनती चली गयी।

"बड़ी अच्छी लड़की मालूम पड़ती है यह।" चन्दर बोला।

"बहुत प्यारी है। और पढ़ने में हमारी तरह नहीं है, बहुत तेज है।"

"अच्छा! तुम्हारी पढ़ाई कैसी चल रही है?"

"मास्टर साहब बहुत अच्छा पढ़ाते हैं। और चन्दर, अब हम खूब बात करते हैं उनसे दुनिया-भर की और वे बस हमेशा सरे नीचे किये रहते हैं। एक दिन पढ़ते वक्त हम गरी पास में रखकर खाते गये, उन्हें मालूम ही नहीं हुआ। उनसे एक दिन कविता सुनवा दो।" सुधा बोली।

चन्दर ने कुछ जवाब नहीं दिया और डॉ. साहब के कमरे में जाकर किताबें उलटने लगा।

इतने में बुआजी का तेज स्वर आया–"हमैं मालूम होता कि ई मुँह-झौंसी हमके ऐसी नाच नचइहै तो हम पैदा होते गला घोंट देइत। हरे राम! अक्काश सिर पर उठाये है। कै घंटे से नरियात-नरियात गटई फट गयी। इ बोलतै नाहीं जैसे साँप सूँघ गवा होय।"

प्रोफेसर शुक्ला के घर में वह नया सांस्कृतिक तत्त्व था। कितनी शालीनता और

शिष्टता से वह रहते थे। कभी इस तरह की भाषा भी उनके घर में सुनने को मिलेगी, इसकी चन्दर को ज़रा भी उम्मीद न थी। चन्दर चौंककर उधर देखने लगा। डॉ. शुक्ला समझ गये। कुछ लज्जित-से और मुसकराकर ग्लानि छिपाते हुए-से बोले, "मेरी विधवा बहन है, कल गाँव से आयी है लड़की को पहुँचाने।"

उसके बाद कुछ पटकने का स्वर आया, शायद किसी बरतन के। इतने में सुधा आयी, गुस्से से लाल-"सुना पापा तुमने, बुआ बिनती को मार डालेंगी।"

"क्या हुआ आखिर?" डॉ. शुक्ला ने पूछा।

"कुछ नहीं, बिनती ने पूजा का पंचपात्र उठाकर ठाकुरजी के सिंहासन के पीछे रख दिया था। उन्हें दिखाई नहीं पड़ा, तो गुस्सा बिनती पर उतार रही हैं।"

इतने में फिर उनकी आवाज आयी-"पैदा करते बखत बहुत अच्छा लाग रहा, पालत बखत टें बोल गये। मर गये रह्यो तो आपन सन्तानौ अपने हाथ लै जात्यौ। हमारे मूड़ पर ई हत्या काहे डाल गयौ। ऐसी कुलच्छनी है कि पैदा होतेहिन बाप को खाय गयी।"

"सुना पापा तुमने?"

"चलो हम चलते हैं।" डॉ. शुक्ला ने कहा। सुधा वहीं रह गयी। चन्दर से बोली, "ऐसा बुरा स्वभाव है बुआ का कि बस। बिनती ऐसी है कि इतना बर्दाश्त कर लेती है।"

बुआ ने ठाकुर जी का सिंहासन साफ करते हुए कहा, "रोवत काहे हो, कौन तुम्हारे माई-बाप को गरियावा है कि ई अँसुआ ढरकाय रही हो। ई सब चोचला अपने ओ को दिखाओ जायके। दुई महीना और हैं-अबहिन से उधियानी न जाओ।"

अब अभद्रता सीमा पार कर चुकी थी।

"बिनती, चलो कमरे के अन्दर, हटो सामने से।" डॉ. शुक्ला ने डाँटकर कहा, "अब ये चरखा बन्द होगा या नहीं। कुछ शरम-हया है या नहीं तुममें?"

बिनती सिसकते हुए अन्दर गयी। स्टडी रूप में देखा कि चन्दर है तो उलटे पाँव लौट आयी सुधा के कमरे में और फूट-फूटकर रोने लगी।

डॉ. शुक्ला लौट आये-"अब हम ये सब करें कि अपना काम करें! अच्छा कल से घर में महाभारत मचा रखा है। कब जाएँगी ये, सुधा?"

"कल जाएँगी। पापा अब बिनती को कभी मत भेजना इनके पास।" सुधा ने गुस्सा-भरे स्वर में कहा।

"अच्छा-जाओ, हमारा खाना परसो। चन्दर, तुम अपना काम यहाँ करो। यहाँ शोर ज्यादा हो तो तुम लाइब्रेरी में चले जाना। आज भर की तकलीफ है।"

चन्दर ने अपनी कुछ किताबें उठायीं और उसने चला जाना ही ठीक समझा। सुधा खाना परोसने चली गयी। बिनती रो-रोकर और तकिये पर सिर पटककर अपनी कुण्ठा और दुःख उतार रही थी। बुआ घंटी बजा रही थीं, दबी जबान जाने क्या बकती जा रही थीं, यह घंटी के भक्ति-भावना-भरे मधुर स्वर में सुनायी नहीं देता था।

लेकिन बुआजी दूसरे दिन गयीं नहीं। जब तीन-चार दिन बाद चन्दर गया तो देखा बाहर के सेहन में डॉ. शुक्ला बैठे हुए हैं और दरवाजा पकड़कर बुआजी खड़ी बातें कर रही हैं। लेकिन इस वक्त बुआजी काफी गम्भीर थीं और किसी विषय पर मन्त्रणा कर रही थीं। चन्दर के पास पहुँचने पर फौरन वे चुप हो गयीं और चन्दर की ओर सशंकित नेत्रों से देखने लगीं। डॉ. शुक्ला बोले, "आओ चन्दर, बैठो।" चन्दर बगल की कुर्सी खींचकर बैठ गया तो डॉक्टर साहब बुआजी से बोले, "हाँ, हाँ, बात करो, अरे ये तो घर के आदमी हैं। इनके बारे में सुधा ने नहीं बताया तुम्हें? ये चन्दर हैं हमारे शिष्य, बहुत अच्छा लड़का है।"

"अच्छा, अच्छा, भइया बइठो, तू तो एक दिन अउर आये रह्यो, बी.ए. में पढ़त हौ सुधा के संगे।"

"नहीं बुआजी, मैं रिसर्च कर रहा हूँ।"

"वाह, बहुत खुशी भई तोको देख के–हाँ तो सुकुल!" वे अपने भाई से बोलीं, "फिर यही ठीक होई। बिनती का बियाह टाल देव और अगर ई लड़का ठीक हुई जाय तो सुधा का बियाह अषाढ़-भर में निपटाय देव। अब अच्छा नाहीं लागत। ठूँठ ऐसी बिटिया, सूनी माँग लिये छररावा करत है एहर-ओहर!" बुआ बोलीं।"

"हाँ, ये तो ठीक है।" डॉ. शुक्ला बोले, "मैं खुद सुधा का ब्याह अब टालना नहीं चाहता। बी.ए. तक की शिक्षा काफी है वरना फिर हमारी जाति में तो लड़के नहीं मिलते। लेकिन ये जो लड़का तुम बता रही हो तो घर वाले कुछ एतराज तो नहीं करेंगे! और फिर, लड़का तो हमें अच्छा लगा लेकिन घरवाले पता नहीं कैसे हों?"

"अरे तो घरवालन से का करै का है तोको। लड़का तो अलग है, अपने-आप पढ़ रहा है और लड़की अलग रहिए, न सास का डर, न ननद की धौंस। हम पत्री मँगवाये देइत ही, मिलवाय लेव।"

डॉ. शुक्ला ने स्वीकृति में सिर हिला दिया।

"तो फिर बिनती के बारे में का कहत हौ? अगहन तक टाल दिया जाय न?" बुआजी ने पूछा।

"हाँ-हाँ," डॉ. शुक्ला ने विचार में डूबे हुए कहा।

"तो फिर तुम ही इन जूतापिटऊ, बड़नक्कू से कह दियौ; आय के कल से हमरी छाती पर मूँग दलत हैं।" बुआजी ने चन्दर की ओर किसी को निर्देशित करते हुए कहा और चली गयीं।

चन्दर चुपचाप बैठा था। जाने क्या सोच रहा था। शायद कुछ भी नहीं सोच रहा था! मगर फिर भी अपनी विचार-शून्यता में ही खोया हुआ-सा था। जब डॉ. शुक्ला उसकी ओर मुड़े और कहा, "चन्दर!" तो वह एकदम से चौंक गया और जाने किस दुनिया से लौट आया। डॉ. साहब ने कहा, "अरे! तुम्हारी तबीयत खराब है क्या?"

"नहीं तो।" एक फीकी हँसी हँसकर चन्दर ने कहा।

"तो मेहनत बहुत कर रहे होगे। कितने अध्याय लिखे अपनी थीसिस के? अब मार्च खत्म हो रहा है और पूरा अप्रैल तुम्हें थीसिस टाइप कराने में लगेगा और मई में हर हाल में जमा हो जानी चाहिए।"

"जी, हाँ।" बड़े थके स्वर में चन्दर ने कहा, "दस अध्याय हो ही गये हैं। तीन अध्याय और होने हैं और अनुक्रमणिका बनानी है। अप्रैल के पहले सप्ताह तक खत्म हो ही जायेगा। अब सिवा थीसिस के और करना ही क्या है?" एक बहुत गहरी साँस लेते हुए चन्दर ने कहा और माथा थामकर बैठ गया।

"कुछ तबीयत ठीक नहीं है तुम्हारी। चाय बनवा लो! लेकिन सुधा तो है नहीं, न महराजिन है।" डॉक्टर साहब बोले।

अरे सुधा, सुधा के नाम पर चन्दर चौंक गया। हाँ, अभी वह सुधा के ही बारे में सोच रहा था, जब बुआजी बात कर रही थीं। क्या सोच रहा था। देखा...उसने याद करने की कोशिश की पर कुछ याद ही नहीं आ रहा था, पता नहीं क्या सोच रहा था। पता नहीं था...कुछ सुधा के ब्याह की बात हो रही थी शायद। क्या बात हो रही थी...?

"कहाँ गयी है सुधा?" चन्दर ने पूछा।

"आज शायद साबिर साहब के यहाँ गयी है। उनकी लड़की उनके साथ पढ़ती है न, वहीं गयी है बिनती के साथ।"

"अब इम्तहान को कितने दिन रह गये हैं, अभी घूमना बन्द नहीं हुआ उनका?"

"नहीं, दिन-भर पढ़ने के बाद उठी थी, उसके भी सिर में दर्द था, चली गयी। घूम-फिर लेने दो बेचारी को, अब तो जा ही रही है।" डॉ. शुक्ला बोले, एक हँसी के साथ जिसमें आँसू छलके पड़ते थे।

"कहाँ तय हो रही है सुधा की शादी?"

"बरेली में। अब उसकी बुआ ने बताया है। जन्मपत्री दी है मिलवा लो, फिर तुम

ज़रा सब बातें देख लेना। तुम तो थीसिस में व्यस्त रहोगे; मैं जाकर लड़का देख आऊँगा। फिर मई के बाद जुलाई तक सुधा का ब्याह कर देंगे। तुम्हें डॉक्टरेट मिल जाए और यूनिवर्सिटी में जगह मिल जाए। बस हम तो लड़का-लड़की दोनों से फारिग।" डॉ. शुक्ला बहुत अजब-से स्वरों में बोले।

चन्दर चुप रहा।

"बिनती को देखा तुमने?" थोड़ी देर बाद डॉक्टर ने पूछा।

"हाँ, वही न जिनको डाँट रही थीं ये उस दिन?"

"हाँ, वही। उसके ससुर आये हुए हैं; उनसे कहना है कि अब शादी अगहन-पूस के लिए टाल दें। पहले सुधा की हो जाए, वह बड़ी है और हम चाहते हैं कि बिनती को तब तक विदुषी का दूसरा खंड भी दिला दें। आओ, उनसे बात कर लें अभी।" डॉ. शुक्ला उठे। चन्दर भी उठा।

और उसने अन्दर जाकर बिनती के ससुर के दिव्य दर्शन प्राप्त किये। वे एक पलंग पर बैठे थे, लेकिन वह अभागा पलंग उनके उदर के ही लिए नाकाफी था। वे चित पड़े थे और साँस लेते थे तो पुराणों की उस कथा का प्रदर्शन हो जाता था कि धीरे-धीरे पृथ्वी का गोला वाराह के मुँह पर कैसे ऊपर उठा होगा। सिर पर छोटे-छोटे बाल और कमर में एक अँगोछे के अलावा सारा शरीर दिगम्बर। सुबह शायद गंगा नहाकर आये थे क्योंकि पेट तक में चन्दन, रोली लगी हुई थी।

डॉ. शुक्ला जाकर बगल में कुर्सी पर बैठ गये; "कहिए दुबेजी, कुछ जलपान किया आपने?"

पलंग चरमराया। उस विशाल मांस-पिंड में एक भूडोल आया और दुबेजी जलपाल की याद करके गद्गद होकर हँसने लगे। एक थलथलाहट हुई और कमरे की दीवारें गिरते-गिरते बचीं। दुबेजी ने उठकर बैठने की कोशिश की लेकिन असफल होकर लेटे-ही-लेटे कहा, "हो-हो! सब आपकी कृपा है। खूब छकके मिष्टान्न पाया। अब ज़रा सरबत-उरबत कुछ मिलै तो जो कुछ पेट में जलन है, सो शान्त होय!" उन्होंने पेट पर अपना हाथ फेरते हुए कहा।

"अच्छा, अरे भाई ज़रा शरबत बना देना।" डॉ. शुक्ला ने दरवाजे की ओट में खड़ी हुई बुआजी से कहा। बुआजी की आवाज सुनाई पड़ी, "बाप रे! ई ढाई मन की लहास कम-से-कम मसक-भर के शरबत तो उलीचै लैईंहैं।" चन्दर को हँसी आ गयी, डॉ. शुक्ला मुसकराने लगे लेकिन दुबेजी के दिव्य मुखमंडल पर कहीं क्षोभ या उल्लास की रेखा तक न आयी। चन्दर मन-ही-मन सोचने लगा, प्राचीन काल के ब्रह्मानन्द सिद्ध महात्मा ऐसे ही होते होंगे।

बुआ एक गिलास में शरबत ले आयीं। दुबेजी काँख-काँखकर उठे और एक साँस में शरबत गले से नीचे उतारकर, गिलास नीचे रख दिया।

"दुबेजी, एक प्रार्थना है आपसे!" डॉ. शुक्ला ने हाथ जोड़कर बड़े बिनीत स्वर में कहा।

"नहीं! नहीं!" बात काटकर दुबेजी बोले, "बस अब हम कुछ न खावैं। आप बहुत सत्कार किये। हम एही से छक गये। आपके देखके तो हमें बड़ी प्रसन्नता भई। आप सचमुच दिव्य पुरुष हौ! और फिर आप तो लड़की के मामा हो, और बियाह-शादी में जो है सो मामा का पक्ष देखा जाता है। ई तो भगवान् ऐसा जोड़ मिलाइन हैं कि वरपक्ष अउर कन्यापक्ष दुइन के मामा बड़े ज्ञानी हैं। आप हैं तौन कालिज में पुरफेसर और ओहर हमार सार—लड़का केर मामा जौन हैं तौन डाकघर में मुंशी हैं, आपकी किरपा से।" दुबेजी ने गर्व से कहा। चन्दर मुसकराने लगा।

"अरे सो तो आपकी नम्रता है लेकिन मैं सोच रहा हूँ कि गरमियों में अगर ब्याह न रखकर जाड़े में रखा जाए तो ज्यादा अच्छा होगा। तब तक आपके सत्कार की हम कुछ तैयारी भी कर लेंगे।" शुक्ला बोले।

दुबेजी इसके लिए तैयार नहीं थे। वे बड़े अचरज में भरकर उनकी ओर देखने लगे। लेकिन बहुत कहने-सुनने के बाद अन्त में वे इस शर्त पर राजी हुए कि अगहन तक हर तीज-त्योहार पर लड़के के लिए कुरता-धोती का कपड़ा और ग्यारह-बारह रुपये नज़राना जाएगा और अगहन में अगर ब्याह हो रहा है तो सास-ननद और जिठानी की गरम साड़ी जाएगी और जब-जब दुबेजी गंगा नहाने प्रयागराज आएँगे तो उनका रोचना एक थाल, कपड़े और एक स्वर्णमण्डित जौ से होगा। जब डॉ. शुक्ला ने यह स्वीकार कर लिया तो दुबेजी ने उठकर अपना झालम-झोला कुरता गले में अटकाया और अपनी गठरी हाथ में उठाकर बोले—

"अच्छा तो अब आज्ञा देव, हम चली अब, और ई रुपिया लड़की को दै दियो, अब बात पक्की है।" और अपनी टेंट से उन्होंने एक मुड़ा-मुड़ाया तेल लगा हुआ पाँच रुपये का नोट निकाला और डॉ. साहब को दे दिया।

"चन्दर एक ताँगा कर दो, दुबेजी को। अच्छा, आओ हम भी चलें।"

जब ये लोग लौटे तो बुआजी एक थैली से कुछ धर-निकाल रही थीं। डॉ. शुक्ला ने नोट बुआजी को देते हुए कहा, "लो, ये दे गये तुम्हारे समधी जी, लड़की को।"

पाँच का नोट देखा तो बुआजी सुलग उठीं—"न गहना न गुरिया, बियाह पक्का कर गये ई कागज के टुकड़े से। अपना-आप तो सोना और रुपिया और कपड़ा सब लीलै

को तैयार और देत के दाँई पेट पिराता है जूता-पिटऊ का। अरे राम चाही तो जमदूत ई लहास की बोटी-बोटी करके रामजी के कुत्तन को खिलइहैं।"

चन्दर हँसी के मारे पागल हो गया।

बुआजी ने थैली का मुँह बाँधा और बोलीं, "अबहिन तक बिनती का पता नै, और ऊ तुरकन-मलेच्छन के हियाँ कुछ खा-पी लिहिस तो फिर हमरे हियाँ गुजारा नाहि न ओका। बड़ी आजाद हुई गयी है सुधा की सह पाय के। आवै देव, आज हम भद्र उतारित ही।"

डॉ. शुक्ला अपने कमरे में चले गये। चन्दर को प्यास लगी थी। उसने बुआजी से एक गिलास पानी माँगा। बुआ ने एक गिलास में पानी दिया और बोलीं, "बैठ के पियो बेटा; बैठ के। कुछ खाय का देई?"

"नहीं, बुआजी!" बुआ बैठकर हँसिया से कटहल छीलने लगीं और चन्दर पानी पीता हुआ सोचने लगा, बुआजी सभी से इतनी मीठी बात करती हैं तो आखिर बिनती से ही इतनी कटु क्यों हैं?

इतने में अन्दर चप्पलों की आहट सुनाई पड़ी। चन्दर ने देखा। सुधा और बिनती आ गयी थीं। सुधा अपनी चप्पल उतारकर अपने कमरे में चली गयी और बिनती आँगन में आयी। बुआजी के पास आकर बोली, "लाओ, हम तरकारी काट दें।"

"चल हट ओहर। पहिले नहाव जाय के। कुछ खाय तो नै रह्यो। एत्ती देर कहाँ घूमति रह्यो? हम खूब अच्छी तरह जानित ही तूँ हमार नाक कटाइन के रहबो। पतुरियन के ढँग सीखे हैं!"

बिनती चुप। एक तीखी वेदना का भाव उसके मुँह पर आया। उसने आँखें झुका लीं। रोयी नहीं और चुपचाप सिर झुकाये हुए सुधा के कमरे में चली गयी।

चन्दर क्षण-भर खड़ा रहा। फिर सुधा के पास गया। सुधा के कमरे में अकेले बिनती खाट पर पड़ी थी—औंधे मुँह, तकिया में मुँह छिपाये। चन्दर को जाने कैसा लगा। उसके मन में बेहद तरस आ रहा था इस बेचारी लड़की के लिए, जिसके पिता हैं ही नहीं और जिसे प्रताड़ना के सिवा कुछ नहीं मिला। चन्दर को बहुत ही ममता लग रही थी इस अभागिनी के लिए। वह सोचने लगा, कितना अन्तर है दोनों बहनों में। एक बचपन से ही कितने असीम दुलार, वैभव और स्नेह में पली है और दूसरी प्रताड़ना और कितने अपमान में पली और वह भी अपनी ही सगी माँ से जो दुनिया भर के प्रति स्नेहमयी है, अपनी लड़की को छोड़कर।

वह कुर्सी पर बैठकर चुपचाप यही सोचने लगा–लब आगे भी इस बेचारी को क्या सुख मिलेगा। ससुराल कैसी है, यह तो ससुर को देखकर ही मालूम देता है।

इतने में सुधा कपड़े बदलकर हाथ में किताब लिये, उसे पढ़ती हुई, उसी में डूबी हुई आयी और खाट पर बैठ गयी। "अरे! बिनती! कैसे पड़ी हो? अच्छा तुम हो चन्दर! बिनती! उठो!" उसने बिनती की पीठ पर हाथ रखकर कहा।

बिनती जो अभी तक निश्चेष्ट पड़ी थी, सुधा के ममता-भरे स्पर्श पर फूट-फूटकर रो पड़ी। तो सुधा ने चन्दर से कहा, "क्या हुआ बिनती रानी को।" और बिनती भी जोरों से सिसकियाँ भरने लगी तो सुधा ने चन्दर से कहा, "कुछ तुमने कहा होगा। चौदह दिन बाद आये और आते ही लगे रुलाने उसे। कुछ कहा होगा तुमने! समझ गये। घूमने के लिए उसे भी डाँटा होगा। हम साफ-साफ बताये देते हैं चन्दर, हम तुम्हारी डाँट सह लेते हैं इसके ये मतलब नहीं कि अब तुम इस बेचारी पर भी रोब झाड़ने लगो। इससे कभी कुछ कहा तो अच्छी बात नहीं होगी!"

"तुम्हारे दिमाग का कोई पुरजा ढीला हो गया है क्या? मैं क्यों कहूँगा बिनती को कुछ!"

"बस फिर यही बात तुम्हारी बुरी लगती है।" सुधा बिगड़कर बोली, "क्यों नहीं कहोगे बिनती को कुछ? जब हमें कहते हो तो उसे क्यों नहीं कहोगे? हम तुम्हारे अपने हैं तो क्या वो तुम्हारी अपनी नहीं है?"

चन्दर हँस पड़ा–"सो क्यों नहीं है, लेकिन तुम्हारे साथ न ऐसे निबाह, न वैसे निबाह।"

"ये सब कुछ हम नहीं जानते! क्यों रो रही है यह?" सुधा बोली धमकी के स्वर में।

"बुआजी ने कुछ कहा था।" चन्दर बोला।

"अरे तो उसके लिए क्या रोना! इतना समझाया तुझे कि उनकी तो आदत है। हँसकर टाल दिया कर। चल उठ! हँसती है कि गुदगुदाऊँ।" सुधा ने गुदगुदाते हुए कहा। बिनती ने उसका हाथ पकड़कर झटक दिया और फिर सिसकियाँ भरने लगी।

"नहीं मानेगी तू?" सुधा बोली, "अभी ठीक करती हूँ तुझे मैं। चन्दर, पकड़ो तो इसका हाथ।"

चन्दर चुप रहा।

"नहीं उठे। उठो, तुम इसका हाथ पकड़ लो तो हम अभी इसे हँसाते हैं।" सुधा ने चन्दर का हाथ पकड़कर बिनती की ओर बढ़ते हुए कहा। चन्दर ने अपना हाथ खींच लिया और बोला, "वह तो रो रही है और तुम बजाय समझाने के उसे परेशान कर रही हो।"

"अरे जानते हो, क्यों रो रही है? अभी इसके ससुर आये थे, वो बहुत मोटे थे तो ये सोच रही है कहीं 'वो' भी मोटे हों!" सुधा ने फिर उसकी गरदन गुदगुदाकर कहा।

बिनती हँस पड़ी। सुधा उछल पड़ी–"लो, ये तो हँस पड़ी, अब रोओगी?" अब फिर सुधा ने गुदगुदाना शुरू किया। बिनती पहले तो हँसी से लोट गयी फिर पल्ला सँभालते हुए बोली, "छिः, दीदी! वो बैठे हैं कि नहीं!" और उठकर बाहर जाने लगी।

"कहाँ चली?" सुधा ने पूछा।

"जा रही हूँ नहाने।" बिनती पल्लू से सिर ढँकते हुए चल दी।

"क्यों, मैंने तेरा बदन छू दिया इसलिए?" सुधा हँसकर बोली, "ऐ चन्दर, वो गेसू का छोटा भाई है न–हसरत, मैंने उसे छू लिया तो फौरन उसने जाकर अपना मुँह साबुन से धोया और अम्मीजान से बोला, "मेरा मुँह जूठा हो गया।" और आज हमने गेसू के अख्तर मियाँ को देखा। बड़े मजे के हैं। मैं तो गेसू से बात करती रही लेकिन बिनती और फूल ने बहुत छेड़ा उन्हें। बेचारे घबरा गये। फूल बहुत चुलबुली है और बड़ी नाजुक है। बड़ी बोलने वाली है और बिनती और फूल का खूब जोड़ मिला। दोनों खूब गाती हैं।"

"बिनती गाती भी है?" चन्दर ने पूछा, "हमने तो रोते ही देखा।"

"अरे बहुत अच्छा गाती है। इसने एक गाँव का गाना बहुत अच्छा गाया था।... अरे देखो वह सब बताने में हम तुम पर गुस्सा होना तो भूल ही गये। कहाँ रहे चार रोज? बोलो, बताओ जल्दी से।"

"व्यस्त थे सुधा, अब थीसिस तीन हिस्सा लिख गयी। इधर हम लगातार पाँच घंटे से बैठकर लिखते थे!" चन्दर बोला।

"पाँच घंटे!" सुधा बोली, "दूध आजकल पीते हो कि नहीं?"

"हाँ-हाँ, तीन गायें खरीद ली हैं...।" चन्दर बोला।

"नहीं, मजाक नहीं, कुछ खाते-पीते रहना, कहीं तबीयत खराब हुई तो अब हमारा इम्तहान है, पड़े-पड़े मक्खी मारोगो और अब हम देखने भी नहीं आ सकेंगे।"

"अब कितना कोर्स बाकी है तुम्हारा?"

"कोर्स तो खत्म था हमारा। कुछ कठिनाइयाँ थीं सो पिछले दो-तीन हफ्ते में मास्टर साहब ने बता दी थीं। अब दोहराना है। लेकिन बिनती का इम्तहान मई में है, उसे भी तो पढ़ाना है।"

"अच्छा, अब चलें हम।"

"अरे बैठो! फिर जाने कै दिन बाद आओगे। आज बुआ तो चली जाएँगी फिर कल से यहीं पढ़ो न। तुमने बिनती के ससुर को देखा था?"

"हाँ, देखा था!" चन्दर उनकी रूपरेखा याद करके हँस पड़ा–"बाप रे! पूरे टैंक थे वे तो।"

"बिनती की ननद से तुम्हारा ब्याह करवा दें। करोगे?" सुधा बोली, "लड़की इतनी ही मोटी है। उसे कभी डाँट लेना तो देखेंगे तुम्हारी हिम्मत।"

ब्याह! एकदम से चन्दर को याद आ गया। अभी बुआ ने बात की थी सुधा के ब्याह की। तब उसे कैसा लगा था? कैसा लगा था? उसका दिमाग घूम गया था। लगा जैसे एक असहनीय दर्द था या क्या था–जो उसकी नस-नस को तोड़ गया। एकदम...।

"क्या हुआ, चन्दर? अरे चुप क्यों हो गये? डर गये मोटी लड़की के नाम से?" सुधा ने चन्दर का कन्धा पकड़कर झकझोरते हुए कहा।

चन्दर एक फीकी हँसी हँसकर रह गया और चुपचाप सुधा की ओर देखने लगा। सुधा चन्दर की निगाह से सहम गयी। चन्दर की निगाह में जाने क्या था, एक अजब-सा पथराया सूनापन, एक जाने किस दर्द की अमंगल छाया, एक जाने किसी पीड़ा की मूक आवाज, एक जाने कैसी पिघलती हुई-सी उदासी और वह भी गहरी, जाने कितनी गहरी...और चन्दर था कि एकटक देखता जा रहा था, एकटक अपलक...।

सुधा को जाने कैसा लगा। ये अपना चन्दर तो नहीं, ये अपने चन्दर की निगाह तो नहीं है। चन्दर तो ऐसी निगाह से, इस तरह अपलक तो सुधा को कभी नहीं देखता था। नहीं, यह चन्दर की निगाह तो नहीं। इस निगाह में न शरारत है, न डाँट, न दुलार और न करुणा। इसमें कुछ ऐसा है जिससे सुधा बिल्कुल परिचित नहीं, जो आज चन्दर में पहली बार दिखाई पड़ रहा है। सुधा को जैसा डर लगने लगा, जैसे वह काँप उठी। नहीं, यह कोई दूसरा चन्दर है जो उसे इस तरह देख रहा है। यह कोई अपरिचित है, कोई अजनबी, किसी दूसरे देश का कोई व्यक्ति जो सुधा को...

"चन्दर, चन्दर! तुम्हें क्या हो गया!" सुधा की आवाज मारे डर के काँप रही थी, उसका मुँह पीला पड़ गया, उसकी साँस बैठने लगी थी–"चन्दर..." और जब उसका कुछ बस न चला तो उसकी आँखों में आँसू छलक आये।

हाथों पर एक गरम-गरम बूँद आकर पड़ते ही चन्दर चौंक गया। "अरे सुधी! रोओ मत। नहीं पगली। हमारी तबीयत कुछ ठीक नहीं है, एक गिलास पानी तो ले आओ।"

सुधा अब भी काँप रही थी। चन्दर की आवाज में अभी भी मुलायमियत नहीं आ पायी थी। वह पानी लाने के लिए उठी।

"नहीं, तुम कहीं जाओ मत, तुम बैठो यहीं।" उसने उसकी हथेली अपने माथे पर रखकर जोर से अपने हाथों में दबा ली और कहा, "सुधा!..."

"क्यों, चन्दर!"

"कुछ नहीं!" चन्दर ने आवाज दी लेकिन लगता था वह आवाज चन्दर की नहीं थी। न जाने कहाँ से आ रही थी...

"क्या सिर में दर्द है? बिनती, एक गिलास पानी लाओ जल्दी से।"

सुधा ने आवाज दी। चन्दर जैसे पहले-सा हो गया–"अरे! अभी मुझे क्या हो गया था? तुम क्या बात कर रही थीं सुधा?"

"पता नहीं तुम्हें अभी क्या हो गया था?" सुधा ने घबरायी हुई गौरैया की तरह सहमकर कहा।

चन्दर स्वस्थ हो गया–"कुछ नहीं सुधा! मैं ठीक हूँ। मैं तो यूँ ही तुम्हें परेशान करने के लिए चुप था।" उसने हँसकर कहा।

"हाँ, चलो रहने दो। तुम्हारे सिर में दर्द है जरूर से।" सुधा बोली। बिनती पानी लेकर आ गयी थी।

"लो, पानी पियो!"

"नहीं, हमें कुछ नहीं चाहिए।" चन्दर बोला।

"बिनती, ज़रा पेनबाम ले आओ।" सुधा ने गिलास जबर्दस्ती उसके मुँह से लगाते हुए कहा। बिनती पेनबाम ले आयी थी–"बिनती, तू ज़रा लगा दे इनके। अरे खड़ी क्यों है? कुर्सी के पीछे खड़ी होकर माथे पर ज़रा हल्की उँगली से लगा दे।"

बिनती आज्ञाकारी लड़की की तरह आगे बढ़ी, लेकिन फिर हिचक गयी। किसी अजनबी लड़के के माथे पर कैसे पेनबाम लगा दे। "चलती है या अभी काट के गाड़ देंगे यहीं। मोटकी कहीं की! खा-खाकर मुटानी है। ज़रा-सा काम नहीं होता।"

बिनती ने हारकर पेनबाम लगाया। चन्दर ने उसका हाथ हटा दिया तो सुधा ने बिनती के हाथ से पेनबाम लेकर कहा, "आओ, हम लगा दें।" बिनती पेनबाम देकर चली गयी तो चन्दर बोला, "अब बताओ, क्या बात कर रही थीं? हाँ, बिनती के ब्याह की। ये उनके ससुर तो बहुत ही भद्दे मालूम पड़ रहे थे। क्या देखकर ब्याह कर रही हो तुम लोग?"

"पता नहीं क्या देखकर ब्याह कर रही हैं बुआ। असल में बुआ पता नहीं क्यों बिनती से इतनी चिढ़ती हैं, वह तो चाहती हैं किसी तरह से बोझ टले सिर से। लेकिन चन्दर, यह बिनती बड़ी खुश है। यह तो चाहती है कि किसी तरह जल्दी से ब्याह हो!" सुधा मुसकराती हुई बोली।

"अच्छा, यह खुद ब्याह करना चाहती है!" चन्दर ने ताज्जुब से पूछा।

"और क्या? अपने ससुर की खूब सेवा कर रही थी सुबह। बल्कि पापा तो कह रहे थे कि अभी यह बी.ए. कर ले तब ब्याह करो। हमसे पापा ने कहा इससे पूछने को। हमने पूछा तो कहने लगी बी.ए. करके भी वही करना होगा। तो बेकार टालने से क्या फायदा। फिर पापा हमसे बोले कि कुछ वजहों से अगहन में ब्याह होगा, तो बड़े ताज्जुब से बोली, अगहन में?"

"सुधी, तुम जानती हो अगहन में उसका ब्याह क्यों टल रहा है? पहले तुम्हारा ब्याह

होगा।" चन्दर हँसकर बोला। वह पूर्णतया शान्त था और उसके स्वर में कम-से-कम बाहर सिवा चुहल के और कुछ भी न था।

"मेरा ब्याह, मेरा ब्याह!" आँखें फाड़कर, मुँह फैलाकर, हाथ नचाकर, कुतूहल-भरे आश्चर्य से सुधा ने कहा और फिर हँस पड़ी, खूब हँसी—"कौन करेगा मेरा ब्याह? बुआ? पापा करने ही नहीं देंगे। हमारे बिना पापा का काम नहीं चलेगा और बाबूसाहब, तुम किस पर आकर रंग जमाओगे? ब्याह मेरा। हूँ!" सुधा ने मुँह बिचकाकर उपेक्षा से कहा।

"नहीं सुधा, मैं गम्भीरता से कह रहा हूँ। तीन-चार महीने के अन्दर तुम्हारा ब्याह हो जाएगा।" चन्दर उसे विश्वास दिलाते हुए बोला।

"अरे जाओ!" सुधा ने हँसते हुए कहा, "ऐसे हम तुम्हारे बनाने में आ जाएँ तो हो चुका।"

"अच्छा जाने दो। तुम्हारे पास कोई पोस्टकार्ड है? लाओ ज़रा इस कॉमरेड को एक चिट्ठी तो लिख दें।" चन्दर बात बदलकर बोला। पता नहीं क्यों इस विषय की बात के चलने में उसे कैसा लगता था।

"कौन कॉमरेड?" सुधा ने पूछा, "तुम भी कम्युनिस्ट हो गये क्या?"

"नहीं, जी, वो बरेली का सोशलिस्ट लड़का कैलाश जिसने झगड़े में हम लोगों की जान बचायी थी। हमने तुम्हें बताया नहीं था, सब किस्सा उस झगड़े का, जब हम और पापा बाहर गये थे!"

"हाँ-हाँ, बताया था। उसे जरूर खत लिख दो!" सुधा ने पोस्टकार्ड देते हुए कहा, "तुम्हें पता मालूम है?"

चन्दर जब पोस्टकार्ड लिख रहा था तो सुधा ने कहा, "सुनो, उसे लिख देना कि पापा की सुधा, पापा की जान बचाने के एवज में आपकी बहुत कृतज्ञ है और कभी अगर हो सके तो आप इलाहाबाद जरूर आएँ!...लिख दिया?"

"हाँ!" चन्दर ने पोस्टकार्ड जेब में रखते हुए कहा।

"चन्दर, हम भी सोशलिस्ट पार्टी के मेम्बर होंगे!" सुधा ने मचलते हुए कहा।

"चलो, अब तुम्हें नयी सनक सवार हुई। तुम क्या समझ रही हो सोशलिस्ट पार्टी को। राजनीतिक पार्टी है वह। यह मत करना कि सोशलिस्ट पार्टी में जाओ और लौटकर आओ तो पापा से कहो—अरे हम तो समझे पार्टी है, वहाँ चाय-पानी मिलेगा। वहाँ तो सब लोग लेक्चर देते हैं।"

"धत्, हम कोई बेवकूफ हैं क्या?" सुधा ने बिगड़कर कहा।

"नहीं, सो तो तुम बुद्धिसागर हो, लेकिन लड़कियों की राजनीतिक बुद्धि कुछ ऐसी ही होती है!" चन्दर बोला।

"अच्छा रहने दो। लड़कियाँ न हों तो काम ही न चले।" सुधा ने कहा।

"अच्छा, सुधा! आज कुछ रुपये दोगी। हमारे पास पैसे खतम हैं। और सिनेमा देखना है ज़रा।" चन्दर ने बहुत दुलार से कहा।

"हाँ-हाँ, जरूर देंगे तुम्हें। मतलबी कहीं के!" सुधा बोली, "अभी-अभी तुम लड़कियों की बुराई कर रहे थे न?"

"तो तुम और लड़कियों में से थोड़े ही हो। तुम तो हमारी सुधा हो। सुधा महान्।"

सुधा पिघल गयी–"अच्छा, कितना लोगे?" अपनी पॉकेट में से पाँच रुपये का नोट निकालकर बोली, "इससे काम चल जाएगा?"

"हाँ-हाँ, आज ज़रा सोच रहे हैं पम्मी के यहाँ जाएँ, तब सेकेंड शो जाएँ।"

"पम्मी रानी के यहाँ जाओगे। समझ गये, तभी तुमने चाचाजी से ब्याह करने से इनकार कर दिया। लेकिन पम्मी तुमसे तीन साल बड़ी है। लोग क्या कहेंगे?" सुधा ने छेड़ा।

"ऊँह, तो क्या हुआ जी! सब यों ही चलता है!" चन्दर हँसकर टाल गया।

"तो फिर खाना यहीं खाये जाओ और कार लेते जाओ।" सुधा ने कहा।

"मँगाओ!" चन्दर से पलंग पर पैर फैलाते हुए कहा। खाना आ गया। और जब तक चन्दर खाता रहा, सुधा सामने बैठी रही और बिनती दौड़-दौड़कर पूड़ी लाती रही।

जब चन्दर पम्मी के बँगले पर पहुँचा तो शाम होने में देर नहीं थी। लेकिन अभी फर्स्ट शो शुरू होने में देरी थी। पम्मी गुलाबों के बीच में टहल रही थी और बर्टी एक अच्छा-सा सूट पहने लॉन पर बैठा था और घुटनों पर ठुड्डी रखे कुछ सोच-विचार में पड़ा था। बर्टी के चेहरे पर का पीलापन भी कुछ कम था। वह देखने में इतना भयंकर नहीं मालूम पड़ता था। लेकिन उसकी आँखों का पागलपन अभी वैसा ही था और खूबसूरत सूट पहनने पर भी उसका हाल यह था कि एक कालर अन्दर था और एक बाहर।

पम्मी ने चन्दर को आते देखा तो खिल गयी। "हल्लो, कपूर! क्या हाल है? पता नहीं क्यों आज सुबह से मेरा मन कह रहा था कि आज मेरे मित्र जरूर आएँगे। और शाम के वक्त तुम तो इतने अच्छे लगते हो जैसे वह जगमग सितारा जिसे देखकर कीट्स ने अपनी आखिरी सानेट लिखी थी।" पम्मी ने एक गुलाब तोड़ा और चन्दर के कोट के बटन होल में लगा दिया। चन्दर ने बड़े भय से बर्टी की ओर देखा कि कहीं गुलाब तोड़े जाने पर वह फिर चन्दर की गरदन पर सवार न हो जाए। लेकिन बर्टी कुछ बोला नहीं। बर्टी ने सिर्फ हाथ उठाकर अभिवादन किया और फिर बैठकर सोचने लगा।

पम्मी ने कहा, "आओ, अन्दर चलें।" और चन्दर और पम्मी दोनों ड्राइंग रूम में बैठ गये।

चन्दर ने कहा, "मैं तो डर रहा था कि तुमने गुलाब तोड़कर मुझे दिया तो कहीं बर्टी नाराज न हो जाए, लेकिन वह कुछ बोला नहीं।"

पम्मी मुसकरायी, "हाँ, अब वह कुछ कहता नहीं और पता नहीं क्यों गुलाबों से उसकी तबीयत भी इधर हट गयी। अब वह उतनी परवाह भी नहीं करता।"

"क्यों?" चन्दर ने ताज्जुब से पूछा।

"पता नहीं क्यों। मेरी तो समझ में यह आता है कि उसका जितना विश्वास अपनी पत्नी पर था वह इधर धीरे-धीरे हट गया और इधर वह यह विश्वास करने लगा है कि सचमुच वह सार्जेंट को प्यार करती थी। इसलिए उसने फूलों को प्यार करना छोड़ दिया।"

"अच्छा! लेकिन यह हुआ कैसे? उसने तो अपने मन में इतना गहरा विश्वास जमा रखा था कि मैं समझता था कि मरते दम तक उसका पागलपन न छूटेगा।"

"नहीं, बात यह हुई कि तुम्हारे जाने के दो-तीन बाद मैंने एक दिन सोचा कि मान लिया जाए अगर मेरे और बर्टी के विचारों में मतभेद है तो इसका मतलब यह नहीं कि मैं उसके गुलाब चुराकर उसे मानसिक पीड़ा पहुँचाऊँ और उसका पागलपन और बढ़ाऊँ। बुद्धि और तर्क के अलावा भावना और सहानुभूति का भी एक महत्त्व मुझे लगा और मैंने फूल चुराना छोड़ दिया। दो-तीन दिन वह बेहद खुश रहा, बेहद खुश और मुझे भी बड़ा सन्तोष हुआ कि लो अब बर्टी शायद ठीक हो जाए। लेकिन तीसरे दिन सहसा उसने अपना खुरपा फेंक दिया, कई गुलाब के पौधे उखाड़कर फेंक दिये और मुझसे बोला, "अब तो कोई फूल भी नहीं चुराता, अब भी वह इन फूलों में नहीं मिलती। वह जरूर सार्जेंट के साथ जाती है। वह मुझे प्यार नहीं करती, हरगिज नहीं करती, और वह रोने लगा।" बस उसी दिन से वह गुलाबों के पास नहीं जाता और आजकल बहुत अच्छे-अच्छे सूट पहनकर घूमता है और कहता है-"क्या मैं सार्जेंट से कम सुन्दर हूँ! और इधर वह बिल्कुल पागल हो गया है। पता नहीं किससे अपने-आप लड़ता रहता है।"

चन्दर ने ताज्जुब से सिर हिलाया।

"हाँ, मुझे बड़ा दु:ख हुआ!" पम्मी बोली, "मैंने तो, हमदर्दी की कि फूल चुराने बन्द कर दिये और उसका नतीजा यह हुआ। पता नहीं क्यों कपूर, मुझे लगता है कि हमदर्दी करना इस दुनिया में सबसे बड़ा पाप है। आदमी से हमदर्दी कभी नहीं करनी चाहिए।"

चन्दर ने सहसा अपनी घड़ी देखी।

"क्यों, अभी तुम नहीं जा सकते। बैठो और बातें सुनो, इसलिए मैंने तुम्हें दोस्त बनाया है। आज दो-तीन साल हो गये, मैंने किसी से बातें ही नहीं की हैं और तुमसे इसलिए मैंने मित्रता की है कि बातें करूँगी।"

चन्दर हँसा, "आपने मेरा अच्छा उपयोग ढूँढ़ निकाला।"

"नहीं, उपयोग नहीं, कपूर! तुम मुझे गलत न समझना। जिन्दगी ने मुझे इतनी बातें बतायी हैं और यह किताबें जो मैं इधर पढ़ने लगी हूँ, इन्होंने मुझे इतनी बातें बतायी हैं कि मैं चाहती हूँ कि उन पर बातचीत करके अपने मन का बोझ हल्का कर लूँ। और तुम्हें बैठकर सुननी होंगी सभी बातें!"

"हाँ, मैं तैयार हूँ लेकिन किताबें पढ़नी कब से शुरू कर दीं तुमने?" चन्दर ने ताज्जुब से पूछा।

"अभी उस दिन मैं डॉ. शुक्ला के यहाँ गयी। उनकी लड़की से मालूम हुआ कि तुम्हें कविता पसन्द है। मैंने सोचा, उसी पर बातें करूँ और मैंने कविताएँ पढ़नी शुरू कर दीं।"

"अच्छा, तो देखता हूँ कि दो-तीन हफ्ते में भाई और बहन दोनों में कुछ परिवर्तन आ गये।"

पम्मी कुछ बोली नहीं, हँस दी।

"मैं सोचता हूँ पम्मी कि आज सिनेमा देखने जाऊँ। कार है साथ में, अभी पन्द्रह मिनट बाकी है। चाहो तो चलो।"

"सिनेमा! आज चार साल से मैं कहीं नहीं गयी हूँ। सिनेमा, हौजी, बाल डांस–सभी जगह जाना बन्द कर दिया है मैंने। मेरा दम घुटेगा हॉल के अन्दर लेकिन चलो देखें, अभी भी कितने ही लोग वैसे ही खुशी से सिनेमा देखते होंगे।" एक गहरी साँस लेकर पम्मी बोली, "बर्टी को ले चलोगे?"

"हाँ, हाँ! तो चलो उठो, फिर देर हो जाएगी!" चन्दर ने घड़ी देखते हुए कहा।

पम्मी फौरन अन्दर के कमरे में गयी और एक जार्जेट का हल्का भूरा गाउन पहनकर आयी। इस रंग से वह जैसे निखर आयी। चन्दर ने उसकी ओर देखा, तो वह लजा गयी और बोली, "इस तरह से मत देखो। मैं जानती हूँ यह मेरा सबसे अच्छा गाउन है। इसमें कुछ अच्छी लगती होऊँगी। चलो!" और आकर उसने बेतकल्लुफी से उसके कन्धे पर हाथ रख दिया।

दोनों बाहर आये तो बर्टी लॉन पर घूम रहा था। उसके पैर लड़खड़ा रहे थे। लेकिन वह बड़ी शान से सीना ताने था। "बर्टी, आज मिस्टर कपूर मुझे सिनेमा दिखाने जा रहे हैं। तुम भी चलोगे?"

"हूँ!" बर्टी ने सिर हिलाकर जोर से कहा, "सिनेमा जाऊँगा? कभी नहीं। भूलकर भी नहीं। तुमने मुझे क्या समझा है? मैं सिनेमा जाऊँगा?" धीरे-धीरे उसका स्वर मन्द पड़ गया... "अगर सिनेमा में वह सार्जेंट के साथ मिल गयी तो! तो मैं उसका गला घोंट दूँगा।" अपने गले को दबाते हुए बर्टी बोला और इतनी जोर से दबा दिया अपना

गला कि आँखें लाल हो गयीं और खाँसने लगा। खाँसी बन्द हुई तो बोला, "वह मुझे प्यार नहीं करती। वह सार्जेंट को प्यार करती है। वह उसी के साथ घूमती है। अगर वह मिल जाएगी सिनेमा में तो उसकी हत्या कर डालूँगा, तो पुलिस आएगी और खेल खत्म हो जाएगा। तुम जानते हो मि. कपूर, मैं उससे कितना नफरत करता हूँ...और...और लेकिन नहीं, कौन जानता है मैं नफरत करता होऊँ और वह मुझे...कुछ समझ में नहीं आता, मैं पागल हूँ, ओफ।" और वह सिर थाम कर बैठ गया।

पम्मी ने चन्दर का हाथ पकड़कर कहा, "चलो, यहाँ रहने से उसका दिमाग और खराब होगा। आओ!"

दोनों जाकर कार में बैठे। चन्दर खुद ही ड्राइव कर रहा था। पम्मी बोली, "बहुत दिन से मैंने कार नहीं ड्राइव की है। लाओ, आज ड्राइव करूँ।"

पम्मी ने स्टीयरिंग अपने हाथ में ले ली। चन्दर इधर बैठ गया।

थोड़ी देर में कार रीजेंट के सामने जा पहुँची। चित्र था–'सेलामी, ह्वेयर शी डांस्ड' ('सेलामी, जहाँ वह नाची थी')। चन्दर ने टिकट लिया और दोनों ऊपर बैठ गये। अभी न्यूज रील चल रही थी। सहसा पम्मी ने कहा, "कपूर, सेलामी की कहानी मालूम है?"

"न! क्या यह कोई उपन्यास है!" चन्दर ने पूछा।

"नहीं, यह बाइबिल की एक कहानी है। असल में एक राजा था हैराद। उसने अपने भाई को मारकर उसकी पत्नी से अपनी शादी कर ली। उसकी भतीजी थी सेलामी, जो बहुत सुन्दर थी और बहुत अच्छा नाचती थी। हैराद उस पर मुग्ध हो गया। लेकिन सेलामी एक पैगम्बर पर मुग्ध थी। पैगम्बर ने सेलामी के प्रणय को ठुकरा दिया। एक बार हैराद ने सेलामी से कहा कि यदि तुम नाचो तो मैं तुम्हें कुछ दे सकता हूँ। सेलामी नाची और पुरस्कार में उसने अपना अपमान करने वाले पैगम्बर का सिर माँगा! हैराद वचनबद्ध था। उसने पैगम्बर का सिर तो दे दिया लेकिन बाद में इस भय से कि कहीं राज्य पर कोई आपत्ति न आये, उसने सेलामी को भी मरवा डाला।"

चन्दर को यह कहानी बहुत अच्छी लगी। तब तो चित्र बहुत ही अच्छा होगा, उसने सोचा। सुधा की परीक्षा है वरना सुधा को भी दिखला देता। लेकिन क्या नैतिकता है इन पाश्चात्य देशों की कि अपनी भतीजी पर ही हैराद मुग्ध हो गया। उसने कहा पम्मी से–

"लेकिन हैराद अपनी भतीजी पर ही मुग्ध हो गया?"

"तो क्या हुआ! यह तो सैक्स है मि. कपूर। सेक्स कितनी भयंकर शक्तिशाली भावना है, यह भी शायद तुम नहीं समझते। अभी तुम्हारी आँखों में बड़ा भोलापन है। तुम रूप की आग के संसार से दूर मालूम पड़ते हो, लेकिन शायद दो-एक साल बाद तुम भी

जानोगे कि यह कितनी भयंकर चीज है। आदमी के सामने वक्त-बेवक्त, नाता-रिश्ता, मर्यादा-अमर्यादा कुछ भी नहीं रह जाता। वह अपनी भतीजी पर मोहित हुआ तो क्या? मैंने तो तुम्हारे यहाँ एक पौराणिक कहानी पढ़ी थी कि महादेव अपनी लड़की सरस्वती पर मुग्ध हो गये।"

"महादेव नहीं, ब्रह्मा।" चन्दर बोला।

"हाँ-हाँ ब्रह्मा। मैं भूल गयी थी। तो यह तो सेक्स है। आदमी को कहाँ ले जाता है, यह अन्दाज भी नहीं किया जा सकता। तुम तो अभी बच्चों की तरह भोले हो और ईश्वर न करे तुम कभी इस प्याले का शरबत चखो। मैं भी तो तुम्हारी इसी पवित्रता को प्यार करती हूँ।" पम्मी ने चन्दर की ओर देखकर कहा, "तुम जानते हो, मैंने तलाक क्यों दिया? मेरा पति मुझे बहुत चाहता था लेकिन मैं विवाहित जीवन के वासनात्मक पहलू से घबरा उठी! मुझे लगने लगा, मैं आदमी नहीं हूँ बस मांस का लोथड़ा हूँ जिसे मेरा पति जब चाहे मसल दे, जब चाहे...ऊब गयी थी! एक गहरी नफरत थी मेरे मन में। तुम आये तो तुम बड़े पवित्र लगे। तुमने आते ही प्रणय-याचना नहीं की। तुम्हारी आँखों में भूख नहीं थी। हमदर्दी थी, स्नेह था, कोमलता थी, निश्छलता थी। मुझे तुम काफी अच्छे लगे। तुमने मुझे अपनी पवित्रता देकर जिला दिया..."

चन्दर को एक अजब-सा गौरव अनुभव हुआ और पम्मी के प्रति एक बहुत ऊँची आदर-भावना। उसने पवित्रता देकर जिला दिया। सहसा चन्दर के मन में आया—लेकिन यह उसके व्यक्तित्व की पवित्रता किसकी दी हुई है। सुधा की ही न! उसी ने तो उसे सिखाया है कि पुरुष और नारी में कितने ऊँचे सम्बन्ध रह सकते हैं।

"क्या सोच रहे हो?" पम्मी ने अपना हाथ कपूर की गोद में रख दिया।

कपूर सिहर गया लेकिन शिष्टाचारवश उसने अपना हाथ पम्मी के कन्धे पर रख दिया। पम्मी ने दो क्षण के बाद अपना हाथ हटा लिया और बोली, "कपूर, मैं सोच रही हूँ अगर यह विवाह-संस्था हट जाए तो कितना अच्छा हो। पुरुष और नारी में मित्रता हो। बौद्धिक मित्रता और दिल की हमदर्दी। यह नहीं कि आदमी औरत को वासना की प्यास बुझाने का प्याला समझे और औरत आदमी को अपना मालिक। असल में बँधने के बाद ही, पता नहीं क्यों सम्बन्धों में विकृति आ जाती है। मैं तो देखती हूँ कि प्रणय विवाह भी होते हैं तो वह असफल हो जाते हैं क्योंकि विवाह के पहले आदमी औरत को ऊँची निगाह से देखता है, हमदर्दी और प्यार की चीज समझता है और विवाह के बाद सिर्फ वासना की। मैं तो प्रेम में भी विवाह-पक्ष में नहीं हूँ और प्रेम में भी वासना का विरोध करती हूँ।"

"लेकिन हर लड़की ऐसी थोड़े ही होती है!" चन्दर बोला, "तुम्हें वासना से नफरत हो लेकिन हर एक को तो नहीं।"

"हर एक को होती है। लड़कियाँ बस वासना की झलक, एक हल्की सिहरन, एक गुदगुदी पसन्द करती हैं। बस, उसी के पीछे उन पर चाहे जो दोष लगाया जाय लेकिन अधिकतर लड़कियाँ कम वासनाप्रिय होती हैं, लड़के ज्यादा।"

चित्र शुरू हो गया। वह चुप हो गयी। लेकिन थोड़ी ही देर में मालूम हुआ कि चित्र भ्रमात्मक था। वह बाइबिल की सेलामी की कहानी नहीं थी। वह एक अमेरिकन नर्तकी और कुछ डाकुओं की कहानी थी। पम्मी ऊब गयी। अब जब डाकू पकड़कर सेलामी को एक जंगल में ले गये तो इंटरवल हो गया और पम्मी ने कहा, "अब चलो, आधे ही चित्र से तबीयत ऊब गयी।"

दोनों उठ खड़े हुए और नीचे आये।

"कपूर, अबकी बार तुम ड्राइव करो!" पम्मी बोली।

"नहीं, तुम्हीं ड्राइव करो!" कपूर बोला।

"कहाँ चलें!" पम्मी ने स्टार्ट करते हुए कहा।

"जहाँ चाहो।" कपूर ने विचारों में डूबे हुए कहा।

पम्मी ने गाड़ी खूब तेज चला दी। सड़कें साफ थीं। पम्मी का कालर फहराने लगा और उड़कर चन्दर के गाले पर थपकियाँ लगाने लगा। चन्दर दूर खिसक गया। पम्मी ने चन्दर की ओर देखा और बजाय कालर ठीक करने के, गले का एक बटन और खोल दिया और चन्दर को पास खींच लिया। चन्दर चुपचाप बैठ गया। पम्मी ने एक हाथ स्टीयरिंग पर रखा और एक हाथ से चन्दर का हाथ पकड़े रही जैसे वह चन्दर को दूर नहीं जाने देगी। चन्दर के बदन में एक हल्की सिहरन नाच रही थी। क्यों? शायद इसलिए कि हवा ठंडी थी या शायद इसलिए कि...उसने पम्मी का हाथ अपने हाथ से हटाने की कोशिश की। पम्मी ने हाथ खींच लिया और कार के अन्दर की बिजली जला दी।

कपूर चुपचाप ठाकुर साहब के बारे में सोचता रहा। कार चलती रही। जब चन्दर का ध्यान टूटा तो उसने देखा कार मैकफर्सन लेक के पास रुकी है।

दोनों उतरे। बीच में सड़क थी, इधर नीचे उतरकर झील और उधर गंगा बह रही थी। आठ बजा होगा। रात हो गयी थी, चारों तरफ सन्नाटा था। बस सितारों की हल्की रोशनी थी। मैकफर्सन झील काफी सूख गयी थी। किनारे-किनारे मछली मारने के मचान बने थे।

"इधर आओ!" पम्मी बोली। और दोनों नीचे उतरकर मचान पर जा बैठे। पानी का धरातल शान्त था। सिर्फ कहीं-कहीं मछलियों के उछलने या साँस लेने से पानी हिल जाता था। पास ही के नीवाँ गाँव में किसी के यहाँ शायद शादी थी जो शहनाई का हल्का स्वर हवाओं की तरंगों पर हिलता-डुलता हुआ आ रहा था। दोनों चुपचाप थे। थोड़ी

देर बाद पम्मी ने कहा, "कपूर, चुपचाप रहो, कुछ बात मत करना। उधर देखो पानी में। सितारों का प्रतिबिम्ब देख रहे हो। चुप्पे से सुनो, ये सितारे क्या बातें कर रहे हैं।"

पम्मी सितारों की ओर देखने लगी। कपूर चुपचाप पम्मी की ओर देखता रहा। थोड़ी देर बाद सहसा पम्मी एक बाँस से टिककर बैठ गयी। उसके गले के दो बटन खुले हुए थे। और उसमें से रूप की चाँदनी फटी पड़ती थी। पम्मी आँखें बन्द किये बैठी थी। चन्दर ने उसकी ओर देखा और फिर जाने क्यों उससे देखा नहीं गया। वह सितारों की ओर देखने लगा। पम्मी के कालर के बीच से सितारे टूट-टूटकर बरस रहे थे।

सहसा पम्मी ने आँखें खोल दीं और चन्दर का कन्धा पकड़कर बोली, "कितना अच्छा हो अगर आदमी हमेशा सम्बन्धों में एक दूरी रखे। सेक्स न आने दे। ये सितारे हैं, देखो कितने नजदीक हैं। करोड़ों बरस से साथ हैं, लेकिन कभी भी एक दूसरे को छूते तक नहीं, तभी तो संग निभ जाता है।" सहसा उसकी आवाज में जाने क्या छलक आया कि चन्दर जैसे मदहोश हो गया–बोली वह–"बस ऐसा हो कि आदमी अपने प्रेमास्पद को निकटतम लाकर छोड़ दे, उसको बाँधे न। कुछ ऐसा हो कि होंठों के पास खींचकर छोड़ दे।" और पम्मी ने चन्दर का माथा होंठों तक लाकर छोड़ दिया। उसकी गरम-गरम साँसें चन्दर की पलकों पर बरस गयीं..."कुछ ऐसा हो कि आदमी उसे अपने हृदय तक खींचकर फिर हटा दे।" और चन्दर को पम्मी ने अपनी बाँहों में घेरकर अपने वक्ष तक खींचकर छोड़ दिया। वक्ष की गरमाई चन्दर के रोम-रोम में सुलग उठी, वह बेचैन हो उठा। उसके मन में आया कि वह अभी यहाँ से चला जाए। जाने कैसा लग रहा था उसे। सहसा पम्मी बोली, "लेकिन नहीं, हम लोग मित्र हैं और कपूर, तुम बहुत पवित्र हो, निष्कलंक हो और तुम पवित्र रहोगे। मैं जितनी दूरी, जितना अन्तर, जितनी पवित्रता पसन्द करती हूँ, वह तुममें है और हम लोगों में हमेशा निभेगी जैसे इन सितारों में हमेशा निभती आयी है।"

चन्दर चुपचाप सोचने लगा, "वह पवित्र है। एकाएक उसका मन जैसे ऊबने लगा। जैसे एक विहग शिशु घबराकर अपने नीड़ के लिए तड़प उठता है, वैसे ही वह इस वक्त तड़प उठा सुधा के पास जाने के लिए–क्यों? पता नहीं क्यों? यहाँ कुछ है जो उसे जकड़ लेना चाहता है। वह क्या करे?"

पम्मी उठी, वह भी उठा। बाँस का मचान हिला। लहरों में हरकत हुई। करोड़ों साल से अलग और पवित्र सितारे हिले, आपस में टकराये और चूर-चूर होकर बिखर गये।

रात-भर चन्दर को ठीक से नींद नहीं आयी। अब गरमी काफी पड़ने लगी थी। एक सूती चादर से ज्यादा नहीं ओढ़ा जाता था और चन्दर ने वह भी ओढ़ना छोड़ दिया था, लेकिन उस दिन रात को अक्सर एक अजब-सी कँपकँपी उसे झकझोर जाती थी और वह कसकर चादर लपेट लेता था, फिर जब उसकी तबीयत घुटने लगती तो वह उठ बैठता था। उसे रात-भर नींद नहीं आयी; बार-बार झपकी आयी और लगा कि खिड़की के बाहर सुनसान अँधेरे में से अजब-सी आवाजें आती हैं और नागिन बनकर उसकी साँसों में लिपट जाती हैं। वह परेशान हो उठता है, इतने में फिर कहीं से कोई मीठी सतरंगी संगीत की लहर आती है और उसे सचेत और सजग कर जाती है। एक बार उसने देखा कि सुधा और गेसू कहीं चली जा रही हैं। उसने गेसू को भी कभी नहीं देखा था लेकिन उसने सपने में गेसू को पहचान लिया। लेकिन गेसू तो पम्मी की तरह गाउन पहने हुए थी! फिर देखा बिनती रो रही है और इतना बिलख-बिलखकर रो रही है कि तबीयत घबरा जाए। घर में कोई नहीं है। चन्दर समझ नहीं पाता कि वह क्या करे! अकेले घर में एक अपरिचित लड़की से बोलने का साहस भी नहीं होता उसका। किसी तरह हिम्मत करके वह समीप पहुँचा तो देखा अरे, यह तो सुधा है। सुधा लुटी हुई-सी मालूम पड़ती है। वह बहुत हिम्मत करके सुधा के पास बैठ गया। उसने सोचा, सुधा को आश्वासन दे लेकिन उसके हाथों पर जाने कैसे सुकुमार जंजीरें कसी हुई हैं। उसके मुँह पर किसी की साँसों का भार है। वह निश्चेष्ट है। उसका मन अकुला उठा। वह चौंककर जाग गया तो देखा वह पसीने से तर है। वह उठकर टहलने लगा। वह जाग गया था लेकिन फिर भी उसका मन स्वस्थ नहीं था। कमरे में ही टहलते-टहलते वह फिर लेट गया। लगा जैसे सामने की खुली खिड़की से सैकड़ों तारे टूट-टूटकर भयानक तेजी से आ रहे हैं और उसके माथे से टकरा-टकराकर चूर-चूर हो जाते हैं। एक मर्मान्तक पीड़ा उसकी नसों में खौल उठी और लगा जैसे उसके अंग-अंग में चिताएँ धधक रही हैं।

जैसे-तैसे रात कटी और सुबह उठते ही वह यूनिवर्सिटी जाने से पहले सुधा के यहाँ गया। सुधा लेटी हुई पढ़ रही थी। डॉ. शुक्ला पूजा कर रहे थे। बुआजी शायद रात को चली गयी थीं। क्योंकि बिनती बैठी तरकारी काट रही थी और खुश नज़र आ रही थी। चन्दर सुधा के कमरे में गया। देखते ही सुधा मुसकरा पड़ी। बोली कुछ नहीं लेकिन आते ही उसने चन्दर के अंग-अंग को अपनी निगाहों के स्वागत में समेट लिया। चन्दर सुधा के पैरों के पास बैठ गया।

"कल रात को तुम कार लेकर वापस आये तो चुप्पे से चले गये!" सुधा बोली, "कहो, कल कौन-सा खेल देखा?"

"कल बहुत बड़ा खेल देखा; बहुत बड़ा खेल, सुधी!" चन्दर व्याकुलता से बोला,

"अरे जाने कैसा मन हो गया कि रात-भर नींद ही नहीं आयी।" और उसके बाद चन्दर सब बता गया। कैसे वह सिनेमा गया। उसने पम्मी से क्या बात की। उसके बाद कैसे कार पर उसने चन्दर को पास खींच लिया। कैसे वे लोग मैकफर्सन झील गये और वहाँ पम्मी पागल हो गयी। फिर कैसे चन्दर को एकदम सुधा की याद आने लगी और फिर रात-भर चन्दर को कैसे-कैसे सपने आये। सुधा बहुत गम्भीर होकर मुँह में पेंसिल दबाये कुहनी टेके बस चुपचाप सुनती रही और अन्त में बोली, "तो तुम इतने परेशान क्यों हो गये, चन्दर! उसने तो अच्छी ही बात कही थी। यह तो अच्छा ही है कि ये सब जिसे तुम सेक्स कहते हो, यह सम्बन्धों में न आए। उसमें क्या बुराई है? क्या तुम चाहते हो कि सेक्स आए?"

"कभी नहीं, तुम मुझे अभी तक नहीं समझ पायीं।"

"तो ठीक है, तुम भी नहीं चाहते कि सेक्स आए और वह भी नहीं चाहती कि सेक्स आए तो झगड़ा क्या है? क्यों, तुम उदास क्यों हो इतने?" सुधा बोली बड़े अचरज से।

"लेकिन उसका व्यवहार कैसा है?" चन्दर ने सुधा से कहा।

"ठीक तो है। उसने बता दिया तुम्हें कि इतना अन्तर होना चाहिए। समझ गये। तुम लालची आदमी, चाहते होगे यह भी अन्तर न रहे! इसीलिए तुम उदास हो गये, छि:!" होंठों में मुसकराहट और आँखों में शरारत की झलक छिपाते हुए सुधा बोली।

"तुम तो मजाक करने लगी।" चन्दर बोला।

सुधा सिर्फ चन्दर की ओर देखकर मुसकराती रही। चन्दर सामने लगी हुई तसवीर की ओर देखता रहा। फिर उसने सुधा के कबूतरों-जैसे उजले मासूम नन्हे पैर अपने हाथ में ले लिये और भर्रायी हुई आवाज में बोला, "सुधा, तुम कभी हम पर विश्वास न हार बैठना।"

सुधा ने किताब बन्द करके रख दी और उठकर बैठ गयी। उसने चन्दर के दोनों हाथ अपने हाथों में लेकर कहा, "पागल कहीं के! हमें कहते हो, अभी सुधा में बचपन है और तुममें क्या है! वाह रे छुईमुई के फूल! किसी ने हाथ पकड़ लिया, किसी ने बदन छू लिया तो घबरा गये! तुमसे अच्छी लड़कियाँ होती हैं।" सुधा ने उसके दोनों हाथ झकझोरते हुए कहा।

"नहीं सुधी, तुम नहीं समझतीं। मेरी जिन्दगी में एक ही विश्वास की चट्टान है। वह हो तुम। मैं जानता हूँ कि कितने ही जल-प्रलय हों लेकिन तुम्हारे सहारे मैं हमेशा ऊपर रहूँगा। तुम मुझे डूबने नहीं दोगी। तुम्हारे ही सहारे मैं लहरों से खेल भी सकता हूँ। लेकिन तुम्हारा विश्वास अगर कभी हिला तो मैं किन अँधेरी गहराइयों में डूब जाऊँगा, यह कभी मैं सोच नहीं पाता।" चन्दर ने बड़े कातर स्वर में कहा।

सुधा बहुत गम्भीर हो गयी। क्षण-भर वह चन्दर के चेहरे की ओर देखती रही, फिर चन्दर के माथे पर झूलती हुई एक लट को ठीक करती हुई बोली, "चन्दर, और मैं किसके विश्वास पर चल रही हूँ, बोलो! लेकिन मैंने तो कभी नहीं कहा कि चन्दर अपना विश्वास मत हारना! और क्या कहूँ। मुझे अपने चन्दर पर पूरा विश्वास है। मरते दम तक विश्वास रहेगा। फिर तुम्हारा मन इतना डगमगा क्यों गया? बुरी बात है न?"

चन्दर ने सुधा के कन्धे पर अपना सिर रख दिया। सुधा ने उसका हाथ लेकर कहा, "लाओ, यहाँ छुआ था पम्मी ने तुम्हें!" और उसका हाथ होंठों तक ले गयी। चन्दर काँप गया, आज सुधा को यह क्या हो गया है। लेकिन होंठों तक हाथ ले जाकर झाड़ने-फूँकने वाली की तरह सुधा ने फूँककर कहा, "जाओ, तुम्हारे हाथ से पम्मी के स्पर्श का जहर उतर गया। अब तो ठीक हो गये! पवित्र हो गये! छू-मन्तर!"

चन्दर हँस पड़ा। उसका मन शान्त हो गया। सुधा में जादू था। सचमुच जादू था। बिनती चाय ले आयी। दो प्याले। सुधा बोली, "अपने लिए भी लाओ।" बिनती ने सिर हिलाया।

सुधा ने चन्दर की ओर देखकर कहा, "ये पगली जाने क्यों तुमसे झेंपती है?"

"झेंपती कहाँ हूँ?" बिनती ने प्रतिवाद किया और प्याला भी ले आयी और जमीन पर बैठ गयी। सुधा ने प्याला मुँह से लगाया और बोली, "चन्दर, तुमने पम्मी को गलत समझा है। पम्मी बहुत अच्छी लड़की है। तुमसे बड़ी भी है और तुमसे ज्यादा समझदार, और उसी तरह व्यवहार भी करती है। तुम अगर कुछ सोचते हो तो गलत सोचते हो। मेरा मतलब समझ गये न।"

"जी हाँ, गुरुआनीजी, अच्छी तरह से!" चन्दर ने हाथ जोड़कर विनम्रता से कहा। बिनती हँस पड़ी और उसकी चाय छलक गयी। नीचे रखी हुई चन्दर की जरीदार पेशावरी सैंडिल भी गयी। बिनती ने झुककर एक अँगोछे से उसे पोंछना चाहा तो सुधा चिल्ला उठी–"हाँ-हाँ, छुओ मत। कहीं इनकी सैंडिल भी बाद में आके न रोने लगे। सुन बिनती, एक लड़की ने कल इन्हें छू लिया तो आप आज उदास थे। अभी तुम सैंडिल छुओ तो कहीं जाके कोतवाली में रपट न कर दें।"

चन्दर हँस पड़ा। और उसका मन धुलकर ऐसे निखर गया जैसे शरद का नीलाभ आकाश।

"अब पम्मी के यहाँ कब जाओगे?" सुधा ने शरारत-भरी मुसकराहट से पूछा।

"कल जाऊँगा! ठाकुर साहब पम्मी के हाथ अपनी कार बेच रहे हैं तो कागज पर दस्तख्त करना है।" चन्दर ने कहा, "अब मैं निडर हूँ। कहो बिनती, तुम्हारे ससुर का क्या कोई खत नहीं आया।"

बिनती झेंप गयी। चन्दर चल दिया।

थोड़ी दूर जाकर फिर मुड़ा और बोला, "अच्छा सुधा, आज तक जो काम हो बता दो फिर एक महीने तक मुझसे कोई मतलब नहीं। हम थीसिस पूरी करेंगे। समझीं?"

"समझे!" हाथ पटककर सुधा बोली।

सचमुच डेढ़ महीने तक चन्दर को होश नहीं रहा कि कहाँ क्या हो रहा है। बिसरिया रोज सुधा और बिनती को पढ़ाने आता रहा, सुधा और बिनती दोनों ही का इम्तहान खत्म हो गया। पम्मी दो बार सुधा और चन्दर से मिलने आयी लेकिन चन्दर एक बार भी उसके यहाँ नहीं गया। मिश्रा का एक खत बरेली से आया लेकिन चन्दर ने उसका भी जवाब नहीं दिया। डॉक्टर साहब ने अपनी पुस्तक के दो अध्याय लिख डाले लेकिन उसने एक दिन भी बहस नहीं की। बिनती उसे बराबर चाय, दूध, नाश्ता, शरबत और खरबूजा देती रही लेकिन चन्दर ने एक बार भी उसके ससुर का नाम लेकर नहीं चिढ़ाया। सुधा क्या करती है, कहाँ जाती है, चन्दर से क्या कहती है, चन्दर को कोई होश नहीं, बस उसका पेन, उसके कागज, स्टडीरूम की मेज और चन्दर है कि आखिर थीसिस पूरी करके ही माना।

7 मई को जब उसने थीसिस का आखिरी पन्ना लिखकर पूरा किया और सन्तोष की साँस ली तो देखा कि शाम के पाँच बजे हैं, सायबान में अभी परदा पड़ा है लेकिन धूप उतार पर है और लू बन्द हो गयी है। उसकी कुर्सी के पीछे एक चटाई बिछाये हुए सुधा बैठी है। ह्यूगो का अधपढ़ा हुआ उपन्यास बगल में खुला हुआ औंधा पड़ा है और आप चन्दर की एक मोटी-सी इकनॉमिक्स की किताब खोले उस पर कलम से कुछ गोदा-गोदी कर रही है।

"सुधा!" एक गहरी साँस लेकर अँगड़ाई लेते हुए चन्दर ने कहा, "लो, आज आखिरकार जान छूटी। बस, अब दो-तीन महीने में माबदौलत डॉक्टर बन जाएँगे!"

सुधा अपने कार्य में व्यस्त। चन्दर ने कहा, यह सुनकर भी गुम। चन्दर ने हाथ बढ़ाकर चोटी झटके दी। "हाय रे! हमें नहीं अच्छा लगता, चन्दर!" सुधा बिगड़कर बोली, "तुम्हारे काम के बीच में कोई बोलता है तो बिगड़ जाते हो और हमारा काम थोड़े ही महत्त्वपूर्ण है!" कहकर सुधा फिर पेन लेकर गोदने लगी।

"आखिर कौन-सा उपनिषद् लिख रही हैं आप? ज़रा देखें तो!" चन्दर ने किताब खींच ली। टाजिग की इकनॉमिक्स की किताब में एक पूरे पन्ने पर सुधा ने एक बिल्ली बनायी थी और अगर निगाह ज़रा चूक जाए तो आप कह नहीं सकते थे यह चौरासी

लाख योनियों में किस योनि का जीव है, लेकिन चूँकि सुधा कह रही है कि यह बिल्ली है, इसलिए मानना होगा कि यह बिल्ली ही है।

चन्दर ने सुधा की बाँह पकड़कर कहा, "उठ! आलसी कहीं की, चल उठा ये पोथा! चलके पापा के पैर छू आएँ?"

सुधा चुपचाप उठी और आज्ञाकारी लड़की की तरह मोटी फाइल उठा ली। दरवाजे तक पहुँचकर रुक गयी और चन्दर के कन्धे पर फाइलें टिकाकर बोली, "ऐ चन्दर, तो सच्ची अब तुम डॉक्टर हो जाओगे?"

"और क्या?"

"आहा!" कहकर जो सुधा उछली तो फाइल हाथ से खिसकी और सभी पन्ने जमीन पर।

चन्दर झल्ला गया। उसने गुस्से से लाल होकर एक घूँसा सुधा को मार दिया। "अरे राम रे!" सुधा ने पीठ सीधी करते हुए कहा, "बड़े परोपकारी हो डॉक्टर चन्दर कपूर! हमें बिना थीसिस लिखे डिग्री दे दी! लेकिन बहुत जोर की थी!"

चन्दर हँस पड़ा।

खैर दोनों पापा के पास गये। वे भी लिखकर ही उठे थे और शरबत पी रहे थे। चन्दर ने जाकर कहा, "पूरी हो गयी।" और झुककर पैर छू लिये। उन्होंने चन्दर को सीने से लगाकर कहा, "बस बेटा, अब तुम्हारी तपस्या पूरी हो गयी। अब जुलाई से यूनिवर्सिटी में जरूर आ जाओगे तुम!"

सुधा ने पोथा कोच पर रख दिया और अपने पैर बढ़ाकर खड़ी हो गयी। "ये क्या?" पापा ने पूछा।

"हमारे पैर नहीं छुएँगे क्या?" सुधा ने गम्भीरता से कहा।

"चल पगली! बहुत बदतमीज होती जा रही है!" पापा ने कृत्रिम गुस्से से कहा, "चन्दर! बहुत सिर चढ़ी हो गयी है। ज़रा दबाकर रखा करो। तुमसे छोटी है कि नहीं?"

"अच्छा पापा, अब आज मिठाई मिलनी चाहिए।" सुधा बोली, "चन्दर ने थीसिस खत्म की है?"

"जरूर, जरूर बेटी!" डॉक्टर शुक्ला ने जेब से दस का नोट निकाल कर दे दिया, "जाओ, मिठाई मँगवाकर खाओ तुम लोग।"

सुधा हाथ में नोट लिये उछलते हुए स्टडी रूप में आयी, पीछे-पीछे चन्दर। सुधा रुक गयी और अपने मन में हिसाब लगाते हुए बोली, "दस रुपये पौंड ऊन। एक पौंड में आठ लच्छी। छह लच्छी में एक शाल। बाकी बची दो लच्छी। दो लच्छी में एक स्वेटर। बस एक बिनती का स्वेटर, एक हमारा शाल।"

चन्दर का माथा ठनका। अब मिठाई की उम्मीद नहीं। फिर भी कोशिश करनी चाहिए।

"सुधा, अभी से शाल का क्या करोगी? अभी तो बहुत गरमी है!" चन्दर बोला।

"अबकी जाड़े में तुम्हारा ब्याह होगा तो आखिर हम लोग नयी-नयी चीज का इन्तजाम करें न। अब डॉक्टर हुए, अब डॉक्टरनी आएँगी!" सुधा बोली।

खैर, बहुत मनाने-बहलाने-फुसलाने पर सुधा मिठाई मँगवाने को राजी हुई। जब नौकर मिठाई लेने चला गया तो चन्दर ने चारों ओर देखकर पूछा, "कहाँ गयी बिनती? उसे भी बुलाओ कि अकेले-अकेले खा लोगी!"

"वह पढ़ रही है मास्टर साहब से!"

"क्यों? इम्तहान तो खत्म हो गया, अब क्या पढ़ रही है?" चन्दर ने पूछा।

"विदुषी का दूसरा खण्ड तो दे रही है न सितम्बर में!" सुधा बोली।

"अच्छा, बुलाओ बिसरिया को भी!" चन्दर बोला।

"अच्छा, मिठाई आने दो।" सुधा ने कहा और फाइल की ओर देखकर कहा, "मुझे इस कम्बख्त पर बहुत गुस्सा आ रहा है।"

"क्यों?"

"इसकी वजह से तुम डेढ़ महीने सीधे से बोले तक नहीं। इम्तहान वाले दिन सुबह-सुबह तुम्हें हाथ जोड़ने आयी तो तुमने सिर पर हाथ भी नहीं रखा!" सुधा ने शिकायत के स्वर में कहा।

"तो अब आशीर्वाद दे दें। अब तो खत्म हुई थीसिस। अब जितना चाहो बात कर लो। थीसिस न लिखते तो फिर तुम्हारे चन्दर को उपाधि कहाँ से मिलती?" चन्दर ने दुलार से कहा।

"तो फिर कन्वोकेशन पर तुम्हारी गाउन हम पहनकर फोटो खिंचाएँगे!" सुधा मचलकर बोली। इतने में नौकर मिठाई ले आया। "जाओ, बिनतीजी को बुला लाओ।" चन्दर ने कहा।

बिनती आयी।

"तुम पढ़ चुकी!" चन्दर ने पूछा।

"अभी नहीं।" बिनती बोली।

"अच्छा, अब आज पढ़ाई बन्द करो, उन्हें भी बुला लाओ। मिठाई खाई जाए।" चन्दर ने कहा।

"अच्छा!" कहकर बिनती जो मुड़ी तो सुधा बोली, "अरे लालचिन! ये तो पूछ ले कि मिठाई काहे की है?"

"मुझे मालूम है!" बिनती मुसकराती हुई बोली, "उनके यहाँ आज गये होंगे, पम्मी के यहाँ फिर आज कुछ उस दिन जैसी बात हुई होगी।"

सुधा हँस पड़ी। चन्दर झेंप गया। बिनती चली गयी बिसरिया को बुलाने।

"अब तो ये तुमसे बोलने लगी!" सुधा ने कहा।

"हाँ, यह है बड़ी सुशील लड़की और बहुत शान्त। हमें बहुत अच्छी लगती है। बोलना तो जैसे आता ही नहीं इसे।"

"हाँ, लेकिन अब खूब सीख रही है। इसकी गुरु मिली है गेसू। हमसे भी ज्यादा गेसू से पटने लगी है इसकी। दोनों ब्याह करने जा रही हैं और दोनों उसी की बातें करती हैं जब मिलती हैं तब।" सुधा बोली।

"और कविता भी करती है यह, तुम एक बार कह रही थीं?" चन्दर ने पूछा।

"नहीं जी, असल में एक बड़ी सुन्दर-सी नोट-बुक थी, उसमें यह जाने क्या लिखती थी? हमें नहीं दिखाती थी। बाद में हमने देखा कि एक डायरी है। उसमें धोबी का हिसाब लिखती थी।"

"तो कविता नहीं लिखतीं! ताज्जुब है, वरना सोलह बरस के बाद प्रेम करके कविता करना तो लड़कियों का फैशन हो गया है, उतना ही व्यापक जितना उलटा पल्ला ओढ़ना।" चन्दर बोला।

"चला तुम्हारा नारी-पुराण!" सुधा बिगड़ी।

मिठाई खाने वाले आये। आगे-आगे बिनती, पीछे-पीछे बिसरिया। अभिवादन के बाद बिसरिया बैठ गया। "कहो बिसरिया, तुम्हारी शिष्या कैसी है?"

"बस अद्वितीय।" कवि बिसरिया ने सिर हिलाकर कहा। सुधा मुसकरा दी, चन्दर की ओर देखकर।

"और ये सुधा कैसी थी?"

"बस अद्वितीय।" बिसरिया ने उसी तरह कहा।

"दोनों अद्वितीय हैं? साथ ही!" चन्दर ने पूछा।

सुधा और बिनती दोनों हँस दीं। बिसरिया नहीं समझ पाया कि उसने कौन-सी हँसने की बात की थी और जब नहीं समझ पाया तो पहले सिर खुजलाने लगा फिर खुद भी हँस पड़ा। उसकी हँसी पर तीनों और हँस पड़े।

"चन्दर, मास्टर साहब भी खूब हैं। एक दिन बिनती को महादेवी की वह कविता पढ़ा रहे थे, 'विरह का जलजात जीवन,' तो पढ़ते-पढ़ते बड़ी गहरी साँस भरने लगे।"

चन्दर और बिनती दोनों हँस पड़े। बिसरिया पहले तो खुद हँसा फिर बोला, "हाँ भाई, क्या करें, कपूर! तुम तो जानते ही हो, मैं बहुत भावुक हूँ। मुझसे बर्दाश्त नहीं

होता। एक बार तो ऐसा हुआ कि पर्चे में एक करुणरस का गीत आ गया अर्थ लिखने को। मैं उसे पढ़ते ही इतना व्यथित हो गया कि उठकर टहलने लगा। प्रोफेसर समझे मैं दूसरे लड़के की कॉपी देखने उठा हूँ, तो उन्होंने निकाल दिया। मुझे निकाले जाने का अफसोस नहीं हुआ लेकिन कविता पढ़कर मुझे बहुत रुलाई आयी।"

सुधा हँसी तो चन्दर ने आँख के इशारे से मना किया और गम्भीरता से बोला, "हाँ भाई बिसरिया, सो तो सही है ही। तुम इतने भावुक न हो तो इतना अच्छा कैसे लिख सकते हो? तो तुमने पर्चा छोड़ दिया?"

"हाँ, मैं पर्चे वगैरह की क्या परवाह करता हूँ? मेरे लिए इन सभी वस्तुओं का कुछ भी अर्थ नहीं। मैं भावना की उपासना करता हूँ। उस समय परीक्षा देने की भावना से ज्यादा सबल उस कविता की करुण-भावना थी। और इस तरह मैं कितनी बार फेल हो चुका हूँ। मेरे साथ वह पढ़ता था न हरिहर टंडन, वह अब बस्ती कॉलेज का प्रिंसिपल है। एक मेरा सहपाठी था, वह रेडियो का प्रोग्राम एक्जीक्यूटिव है..."

"और एक तुम्हारा सहपाठी तो हमने सुना कि असेम्बली का स्पीकर भी है!" चन्दर बात काटकर बोला। सुधा फिर हँस पड़ी। बिनती भी हँस पड़ी।

खैर मिठाई का भोग प्रारम्भ हुआ। बिसरिया कुछ तकल्लुफ कर रहा था तो बिनती बोली, "खाइए, मिठाई तो विरह-रोग और भावुकता में बहुत स्वास्थ्यप्रद होती है!"

"अच्छा, अब तो बिनती का कंठ फूट निकला! अपने गुरुजी को बना रही है।" चन्दर बोला।

बिसरिया थोड़ी देर बाद चला गया। "अब मुझे एक पार्टी में जाना है।" उसने कहा। जब आखिर में एक रसगुल्ला बच रहा तो बिनती हाथ में लेकर बोली, "कौन लेगा?" आज पता नहीं क्यों बिनती बहुत खुश थी और बहुत बोल रही थी।

चन्दर बोला, "हमें दो!"

सुधा बोली, "हमें!"

बिनती ने एक बार चन्दर की ओर देखा, एक बार सुधा की ओर। चन्दर बोला, "देखें बिनती हमारी है या सुधा की है।"

बिनती ने झट रसगुल्ला सुधा के मुख में रख दिया और सुधा के सिर पर सिर रखकर बोली–

"हम अपनी दीदी के हैं!" सुधा ने आधा रसगुल्ला बिनती को दे दिया तो बिनती चन्दर को दिखलाकर खाते हुए सुधा से बोली, "दीदी, ये हमें बहुत बनाते हैं, अब हम भी तुम्हारी तरह बोलेंगे तो इनका दिमाग ठीक हो जाएगा।"

"हम-तुम दोनों मिलके इनका दिमाग ठीक करेंगे?" सुधा ने प्यार से बिनती को

थपथपाते हुए कहा, "अब हम तश्तरियाँ धोकर रख दें।" और तश्तरियाँ उठाकर चल दी।

"पानी नहीं दोगी?" चन्दर बोला।

बिनती पानी ले आयी और बोली, "हम तो आपका इतना काम करते हैं और आज जब देखो तब हमें बनाते रहते हैं। आपको क्या आनन्द आता है हमें बनाने में?"

चन्दर ने पल-भर बिनती की ओर देखा और बोला, "असल में बनने के बाद जब तुम झेंप जाती हो तो...हाँ ऐसे ही।"

बिनती ने फिर झेंपकर मुँह छिपा लिया और लाज से सकुचाकर इन्द्रवधू बन गयी। बिनती देखने-सुनने में बड़ी अच्छी थी। उसकी गठन तो सुधा की तरह नहीं थी लेकिन उसके चेहरे पर एक फिरोजी आभा थी जिसमें गुलाल के डोरे थे। आँखें उसकी बड़ी-बड़ी और पलकों में इस तरह डोलती थीं जैसे किसी सुकुमार सीपी में कोई बहुत बड़ा मोती डोले। झेंपती थी तो मुँह पर साँझ मुसकरा उठती थी और गालों में फूलों के कटोरों जैसे दो छोटे-छोटे गड्ढे। और बिनती के अंग-अंग में एक रूप की लहर थी जो नागिन की तरह लहराती थी और उसकी आदत थी कि बात करते समय अपनी गरदन ज़रा टेढ़ी कर लेती थी और अँगुलियों से अपने आँचल का छोर उमेठने लगती थी।

इस वक्त चन्दर की बात पर झेंप गयी और उसी तरह आँचल के छोर को उमेठती हुई, मुसकान छिपाकर उसने ऐसी निगाह से चन्दर की ओर देखा जिसमें थोड़ी लाज, थोड़ा गुस्सा, थोड़ी प्रसन्नता और थोड़ी शरारत थी।

चन्दर एकदम बोल उठा, "अरे सुधा, सुधा, ज़रा बिनती की आँख देखो इस वक्त!"

"आयी अभी।" बगल के कमरे में तश्तरी रखते हुए सुधा बोली।

"बड़े खराब हैं आप?" बिनती बोली।

"हाँ, बनाओगी न आज से हमें? हमारा दिमाग ठीक करोगी न? बहुत बोल रही थी, अब बताओ!"

"बताएँ क्या? अभी तक हम बोलते नहीं थे तभी न?"

"अब अपनी ससुराल में बोलना टुइयाँ ऐसी! वहीं तुम्हारे बोल पर रीझेंगे लोग।" चन्दर ने फिर छेड़ा।

"छि:, राम-राम! ये सब मजाक हमसे मत किया कीजिए। दीदी से क्यों नहीं कहते जिनकी अभी शादी होने जा रही है।"

"अभी उनकी कहाँ, अभी तो तय भी नहीं हुई।"

"तय ही समझिए, फोटो इनकी उन लोगों ने पसन्द कर ली। अच्छा एक बात कहें, मानिएगा!" बिनती बड़े आग्रह और दीनता के स्वर में बोली।

"क्या?" चन्दर ने आश्चर्य से पूछा। बिनती आज सहसा कितनी बोलने लगी है।

बिनती बोली, नीचे जमीन की ओर देखती हुई–"आप हमसे ब्याह के बारे में मजाक न किया कीजिए, हमें अच्छा नहीं लगता।"

"ओहो, ब्याह अच्छा लगता है लेकिन उसके बारे में मजाक नहीं। गुड़ खाया गुलगुले से परहेज!"

"हाँ, यही तो बात है।" बिनती सहसा गम्भीर हो गयी–"आप समझते होंगे कि मैं ब्याह के लिए उत्सुक हूँ, दीदी भी समझती हैं; लेकिन मेरा ही दिल जानता है कि ब्याह की बात सुनकर मुझे कैसा लगने लगता है। लेकिन फिर भी मैंने ब्याह करने से इनकार नहीं किया। खुद दौड़-दौड़कर उस दिन दुबेजी की सेवा में लगी रही, इसलिए कि आप देख चुके हैं कि माँ का व्यवहार मुझसे कैसा है? आप यहाँ इस परिवार को देखकर समझ नहीं सकते कि मैं वहाँ कैसे रहती हूँ, कैसे माँजी की बातें बर्दाश्त करती हूँ, वह नरक है मेरे लिए, माँ की गोद नरक है और मैं किसी तरह निकल भागना चाहती हूँ। कुछ चैन तो मिलेगा!" बिनती की आँखों में आँसू आ गये और सिसकती हुई बोली, "लेकिन आप या दीदी जब यह कहते हैं, तो मुझे लगता है कि मैं कितनी नीच हूँ, कितनी पतित हूँ कि खुद अपने ब्याह के लिए व्याकुल हूँ, लेकिन आप न कहा करें तो अच्छा है!" बिनती को आँसुओं का तार बँध गया था।

सुधा बगल के कमरे से सब कुछ सुन रही थी। आयी और चन्दर से बोली, "बहुत बुरी बात है, चन्दर! बिनती, क्यों रो रही हो, रानी? बुआ का स्वभाव ही ऐसा है, उससे हमेशा अपना दिल दुखाने से क्या लाभ?" और पास जाकर उसको छाती से लगाकर सुधा बोली, "मेरी राजदुलारी! अब रोना मत, ऐं! अच्छा, हम लोग कभी मजाक नहीं करेंगे! बस अब चुप हो जाओ, रानी बिटिया की तरह जाओ मुँह धो आओ।"

बिनती चली गयी। चन्दर लज्जित-सा बैठा था।

"लो, अब तुम्हें भी रुलाई आ रही है क्या?" सुधा ने बहुत दुलार से कहा, "तुम उससे ससुराल का मजाक मत किया करो। वह बहुत दुःखी है और बहुत कदर करती है तुम्हारी। और किसी की मजाक की बात और है। हम या तुम कहते हैं तो उससे लग जाता है।"

"अच्छा, वो कह रही थी, तुम्हारी फोटो उन लोगों ने पसन्द कर ली है।"–चन्दर ने बात बदलने के खयाल से कहा।

"और क्या, कोई हमारी शक्ल तुम्हारी तरह है कि लोग नापसन्द कर दें।" सुधा अकड़कर बोली।

"नहीं, सच-सच बताओ?" चन्दर ने पूछा।

"अरे जी," लापरवाही से मुँह बिचकाकर सुधा बोली, "उनके पसन्द करने से

क्या होता है? मैं ब्याह-उआह नहीं करूँगी। तुम इस फेर में न रहना कि हमें निकाल दोगे यहाँ से।"

इतने में बिनती आ गयी। वह भी उदास थी। सुधा उठी और बिनती को पकड़ लायी और ढकेलकर चन्दर के बगल में बिठा दिया।

"लो, चन्दर! अब इसे दुलार कर लो तो अभी गुरगुराने लगे। बिल्ली कहीं की!" सुधा ने उसे हल्की-सी चपत मारकर कहा। बिनती का मुँह अपनी हथेलियों में लेकर अपने मुँह के पास लेकर आँखों में आँख डालकर कहा, "पगली कहीं की, आँसू का खजाना लुटाती फिरती है।"

"चन्दर!" डॉ. शुक्ला ने पुकारा और चन्दर उठकर चला गया।

सुधा पर इन दिनों घूमना सवार था। सुबह हुई कि चप्पल पहनी और गायब। गेसू, कामिनी, प्रभा, लीला शायद ही कोई लड़की बची होगी जिसके यहाँ जाकर सुधा ऊधम न मचा आती हो, और चार सुख-दु:ख की बातें न कर आती हो। बिनती को घूमना कम पसन्द था, हाँ जब कभी सुधा गेसू के यहाँ जाती थी तो बिनती जरूर जाती थी, उसे सुधा की सभी मित्रों में गेसू सबसे ज्यादा पसन्द थी। डॉक्टर शुक्ला के ब्यूरो में छुट्टी हो चुकी थी पर वे सुधा का ब्याह तय करने की कोशिश कर रहे थे। इसलिए वह बाहर भी नहीं गये थे। चन्दर डेढ़ महीने तक लगातार मेहनत करने के बाद पढ़ाई-लिखाई की ओर से आराम कर रहा था और उसने निश्चित कर लिया था कि अब बरसात के पहले वह किताब छुएगा नहीं। बड़े आराम के दिन कटते थे उसके। सुबह उठकर साइकिल पर गंगा नहाने जाता था और वहाँ अक्सर ठाकुर साहब से भी मुलाकात हो जाती थी। डॉक्टर शुक्ला ने भी कई दफे इरादा किया कि वे गंगाजी चला करें लेकिन एक तो उनसे दिन में काम नहीं होता था, शाम को वे घूमते और सुबह उठकर किताब लिखते थे।

एक दिन सुबह लिख रहे थे कि चन्दर आया और उनके पैर छूकर बोला, "प्रान्तीय सरकार का वह पुरस्कार कल शाम को आ गया!"

"कौन-सा?"

"वह जो उत्तर प्रान्त में माता और शिशुओं की मृत्यु-संख्या पर मैंने निबन्ध लिखा था, उसी पर।"

"तो क्या पदक आ गया?" डॉक्टर शुक्ला ने कहा।

"जी," अपनी जेब में से एक मखमली डिब्बा निकालकर चन्दर ने दिया। पदक बहुत सुन्दर था। जगमगाता हुआ स्वर्णपदक जिसमें प्रान्तीय राजमुद्रा अंकित थी।

"ईश्वर तुम्हें बहुत यशस्वी करे जीवन में।" डॉक्टर शुक्ला ने पदक उसकी कमीज

में अपने हाथों से लगा दिया, "जाओ, अन्दर सुधा को दिखा आओ।"

चन्दर जाने लगा तो डॉक्टर साहब ने बुलाया, "अच्छा, अब सुधा की शादी का इन्तजाम करना है। हमसे तो कुछ होने से रहा, तुम्हीं को सब करना होगा। और सुनो, जेठ दशहरा को लड़के का भाई और माँ देखने आ रही हैं। और बहन भी आएँगी गाँव से।"

"अच्छा?" चन्दर बैठ गया कुर्सी पर और बोला, "कहाँ है लड़का? क्या करता है?"

"लड़का शाहजहाँपुर में है। घर के जमींदार हैं ये लोग। लड़का एम.ए. है। और अच्छे विचारों का है। उसने लिखा है कि सिर्फ दस आदमी बारात में आएँगे, एक दिन रुकेंगे। संस्कार के बाद चले जाएँगे। सिवा लड़की के गहने-कपड़े और लड़के के गहने-कपड़ों के और कुछ भी नहीं स्वीकर करेंगे।"

"अच्छा, ब्राह्मणों में तो ऐसा कुल नहीं मिलेगा।"

"तभी तो! सुधा की किस्मत है, वरना तुम बिनती के ससुर को तो देख ही चुके हो। अच्छा जाओ, सुधा से मिल आओ।"

वह सुधा के कमरे में आ गया। सुधा थी ही नहीं। वह आँगन में आया। देखा महराजिन खाना बना रही है और बिनती बरामदे में बुरादे की अँगीठी पर पकौड़ियाँ बना रही है।

"आइए," बिनती बोली, "दीदी तो गयी हैं गेसू को बुलाने। आज गेसू की दावत है।...पीढ़े पर बैठिएगा, लीजिए।" एक पीढ़ा चन्दर की ओर बिनती ने खिसका दिया। चन्दर बैठ गया। बिनती ने उसके हाथ में मखमली डिब्बा देखा तो पूछा, "यह क्या लाये? कुछ दीदी के लिए है क्या? यह तो अँगूठी मालूम पड़ती है।"

"अँगूठी, वह क्या दाल में मिला के खाएगी! जंगली कहीं की! उसे क्या तमीज है अँगूठी पहनने की!"

"हमारी दीदी के लिए ऐसी बात की तो अच्छा नहीं होगा, हाँ!" उसे बिनती ने उसी तरह गरदन टेढ़ी कर आँखें डुलाते हुए धमकाया–"उन्हें नहीं अँगूठी पहननी आएगी तो क्या आपको आएगी? अब ब्याह में सोलहों सिंगार करेंगी! अच्छा, दीदी कैसी लगेंगी घूँघट काढ़ के? अभी तक तो सिर खोले चकई की तरह घूमती-फिरती है।"

"तुमने तो डाल ली आदत, ससुराल में रहने की!" चन्दर ने बिनती से कहा।

"अरे हमारा क्या!" एक गहरी साँस लेते हुए बिनती ने कहा, "हम तो उसी के लिए बने थे। लेकिन सुधा दीदी को ब्याह-शादी में न फँसना पड़ता तो अच्छा था। दीदी इन सबके लिए नहीं बनी थीं। आप मामाजी से कहते क्यों नहीं?"

चन्दर ने कुछ जवाब नहीं दिया। चुपचाप बैठा हुआ सोचता रहा। बिनती भी कड़ाही में से पकौड़ियाँ निकाल-निकालकर थाली में रखने लगी। थोड़ी देर बार जब वह घी में पकौड़ियाँ डाल चुकी तब भी वह वैसे ही गुमसुम बैठा सोच रहा था।

"क्या सोच रहे हैं आप? नहीं बताइएगा। फिर अभी हम दीदी से कह देंगे कि बैठे-बैठे सोच रहे थे।" बिनती बोली।

"क्या तुम्हारी दीदी का डर पड़ा है?" चन्दर ने कहा।

"अपने दिल से पूछिए। हमसे नहीं बन सकते आप!" बिनती ने मुसकराकर कहा और उसके गालों में फूलों के कटोरे खिल गये—"अच्छा, इस डिब्बे में क्या है, कुछ प्राइवेट!"

"नहीं जी, प्राइवेट क्या होगा, और वह भी तुमसे? सोने का मेडल है। मिला है मुझे एक लेख पर।" और चन्दर ने डिब्बा खोलकर दिखला दिया।

"आहा! ये तो बहुत अच्छा है। हमें दे दीजिए।" बिनती बोली।

"क्या करेगी तू?" चन्दर ने हँसकर पूछा।

"अपने आने वाले जीजाजी के लिए कान में बुन्दे बनवा लेंगे।" बिनती बोली, "अरे हाँ, आपको एक चीज दिखाएँगे।"

"क्या?"

"यह नहीं बताते। देखिएगा तो उछल पड़िएगा।"

"तो दिखाओ न!"

"अभी तो दीदी आ रही होंगी। दीदी के सामने नहीं दिखाएँगे।"

"सुधा से छिपाकर हम कुछ नहीं कर सकते, यह तुम जानती हो।" चन्दर बोला।

"छिपाने की बात थोड़े ही है। देखकर तब उन्हें बता दीजिएगा। वैसे वह खुद ही सुधा दीदी से क्या छिपाते हैं? लो, सुधा दीदी तो आ गयीं..."

चन्दर ने पीछे मुड़कर देखा। सुधा के हाथ में एक लम्बा-सा सरकंडा था और उसे झंडे की तरह फहराती हुई चल आ रही थी। चन्दर हँस पड़ा।

"खिल गये दीदी को देखते ही!" बिनती बोली और एक गरम पकौड़ी चन्दर के ऊपर फेंक दी।

"अरे, बड़ी शैतान हो गयी हो तुम इधर! पाजी कहीं की!" चन्दर बोला।

सुधा चप्पल उतारकर अन्दर आयी। झूमती-इठलाती हुई चली आ रही थी।

"कहो, सेठ स्वार्थीमल!" उसने चन्दर को देखते ही कहा, "सुबह हुई और पकौड़ी की महक लग गयी तुम्हें!" पीढ़ा खींचकर उसके बगल में बैठ गयी और सरकंडा चन्दर के हाथ पर रखते हुए बोली, "लो, यह गन्ना। घर में बो देना। और गँडेरी खाना! अच्छा" और हाथ बढ़ाकर वह डिबिया उठा ली और बोली, "इसमें क्या है? खोलें या न खोलें?"

"अच्छा, खत तक तो हमारे बिना पूछे खोल लेती हो। इसे पूछ के खोलोगी!"

"अरे हमने सोचा शायद इस डिबिया में पम्मी का दिल बन्द हो। तुम्हारी मित्र है, शायद स्मृति-चिह्न में वही दे दिया हो।" और सुधा ने डिबिया खोली तो उछल पड़ी, "यह तो उसी निबन्ध पर मिला है जिसका चार्ट तुम बनाये थे!"

"हाँ!"

"तब तो ये हमारा है।" डिबिया अपने वक्ष में छिपाकर सुधा बोली।

"तुम्हारा तो है ही। मैं अपना कब कहता हूँ?" चन्दर ने कहा।

"लगाकर देखो!" और उठकर सुधा चल दी।

"बिनती, दो पकौड़ी तो दो।" और दो पकौड़ियाँ लेकर खाते हुए चन्दर सुधा के कमरे में गया। देखा, सुधा शीशे के सामने खड़ी है और मेडल अपनी साड़ी में लगा रही है। वह चुपचाप खड़ा होकर देखने लगा। सुधा ने मेडल लगाया और क्षण-भर तनकर देखती रही फिर उसे एक हाथ से वक्ष पर चिपका लिया और मुँह झुकाकर उसे चूम लिया।

"बस, कर दिया न गन्दा उसे!" चन्दर मौका नहीं चूका।

और सुधा तो जैसे पानी-पानी। गालों से लाज की रतनारी लपटें फूटीं और एड़ी तक धधक उठीं। फौरन शीशे के पास से हट गयी और बिगड़कर बोली, "चोर कहीं के! क्या देख रहे थे?"

"बिनती इतने में तश्तरी में पकौड़ी रखकर ले आयी। सुधा ने झट से मेडल उतार दिया और बोली, "लो, रखो सहेजकर।"

"क्यों, पहने रहो न!"

"ना बाबा, परायी चीज, अभी खो जाये तो डाँड़ भरना पड़े।" और मेडल चन्दर की गोद में रख दिया।

बिनती ने धीमे से कहा, "या मुरली मुरलीधर की अधरा न धरी अधरा न धरौंगी।"

चन्दर और सुधा दोनों झेंप गये। "लो, गेसू आ गयी।"

सुधा की जान में जान आ गयी। चन्दर ने बिनती का कान पकड़कर कहा, "बहुत उलटा-सीधा बोलने लगी है!"

बिनती ने कान छुड़ाते हुए कहा, "कोई झूठ थोड़े ही कहती हूँ!"

चन्दर चुपचाप सुधा के कमरे में पकौड़ियाँ खाता रहा। बगल के कमरे में सुधा, गेसू, फूल और हसरत बैठे बातें करते रहे। बिनती उन लोगों को नाश्ता देती रही। उस कमरे में नाश्ता पहुँचाकर बिनती एक गिलास में पानी लेकर चन्दर के पास आयी और पानी रखकर बोली, "अभी हलुआ ला रही हूँ, जाना मत!" और पल-भर में तश्तरी में हलुआ रखकर ले आयी।

"अब मैं चल रहा हूँ!" चन्दर ने कहा।

"बैठो, अभी हम एक चीज दिखाएँगे। ज़रा गेसू से बात कर आएँ।" बिनती बड़े भोले स्वर में बोली, "आइए, हसरत मियाँ।" और पल-भर में नन्हे-मुन्ने-से छह वर्ष के हसरत मियाँ तनजेब का कुरता और चूड़ीदार पायजामे पर पीले रेशम की जाकेट पहने कमरे में खरगोश की तरह उछल आये।

"आदाबर्ज।" बड़े तमीज से उन्होंने चन्दर को सलाम किया।

चन्दर ने उसे गोद में उठाकर पास बिटा दिया। "लो, हलुआ खाओ, हसरत!"

हसरत ने सिर हिला दिया और बोला, "गेसू ने कहा था, जाकर चन्दर भाई से हमारा आदाब कहना और कुछ खाना मत! हम खाएँगे नहीं।"

चन्दर बोला, "हमारा भी नमस्ते कह दो उनसे जाकर।"

हसरत उठ खड़ा हुआ–"हम कह आएँ।" फिर मुड़कर बोला, "आप तब तक हलुआ खत्म कर देंगे?"

चन्दर हँस पड़ा, "नहीं हम तुम्हारा इन्तजार करेंगे, जाओ।"

हसरत सिर हिलाता हुआ चला गया।

इतने में सुधा आयी और बोली, "गेसू की गजल सुनो यहाँ बैठकर। आवाज आ रही है न! फूल भी आयी है इसलिए गेसू तुम्हारे सामने नहीं आएगी वरना फूल अम्मीजान से शिकायत कर देगी। लेकिन वह तुमसे मिलने को बहुत इच्छुक है, अच्छा यहाँ से सुनना बैठे-बैठे..."

सुधा चली गयी। गेसू ने गाना शुरू किया बहुत महीन, पतली लेकिन बेहद मीठी आवाज में जिसमें कसक और नशा दोनों घुले-मिले थे। चन्दर एक तकिया टेककर बैठ गया और उनींदा-सा सुनने लगा। गजल खत्म होते ही सुधा भागकर आयी–"कहो, सुन लिया न!" और उसके पीछे-पीछे आया हसरत और सुधा के पैरों में लिपटकर बोला, "सुधा, हम हलुआ नहीं खाएँगे!"

सुधा हँस पड़ी, "पागल कहीं का। ले खा।" और उसके मुँह में हलुआ ठूँस दिया। हसरत को गोद में लेकर वह चन्दर के पास बैठ गयी और गेसू के बारे में बताने लगी, "गेसू गर्मियाँ बिताने नैनीताल जा रही है। वहीं अख्तर की अम्मी भी आएँगी और मँगनी की रस्म वहीं पूरी करेंगी। अब वह पढ़ेगी नहीं। जुलाई तक उसका निकाह हो जाएगा। कल रात की गाड़ी से जा रहे हैं ये लोग। वगैरह-वगैरह।"

बिनती बैठी-बैठी गेसू और फूल से बातें करती रही। थोड़ी देर बाद सुधा उठकर चली गयी। "तुम जाना मत, आज खाना यहीं खाना, मैं बिनती को तुम्हारे पास भेज रही हूँ, उससे बातें करते रहना।"

थोड़ी देर बाद बिनती आयी। उसके हाथ में कुछ था जिसे वह अपने आँचल से छिपाये हुई थी। आयी और बोली, "अब दीदी नहीं हैं, जल्दी से देख लीजिए।"

"क्या है?" चन्दर ने ताज्जुब से पूछा।

"जीजाजी की फोटो।" बिनती ने मुसकराकर कहा और एक छोटी-सी बहुत कलात्मक फोटो चन्दर के हाथ में रख दी।

"अरे यह तो मिश्र हैं। कॉमरेड कैलाश मिश्र।" और चन्दर के दिमाग में बरेली की बातें, लाठी चार्ज...सभी कुछ घूम गया। चन्दर के मन में इस वक्त जाने कैसा-सा लग रहा था। कभी बड़ा अचरच होता, कभी एक सन्तोष होता कि चलो सुधा के भाग्य की रेखा उसे अच्छी जगह ले गयी, फिर कभी सोचता कि मिश्र इतना विचित्र स्वभाव का है, सुधा की उससे निभेगी या नहीं? फिर सोचता, नहीं सुधा भाग्यवान है। इतना अच्छा लड़का मिलना मुश्किल था।

"आप इन्हें जानते हैं?" बिनती ने पूछा।

"हाँ, सुधा भी उन्हें नाम से जानती है शक्ल से नहीं। लेकिन अच्छा लड़का है, बहुत अच्छा लड़का।" चन्दर ने एक गहरी साँस लेकर कहा और फिर चुप हो गया। बिनती बोली, "क्या सोच रहे हैं आप?"

"कुछ नहीं।" पलकों में आये हुए आँसू रोककर और होंठों पर मुसकान लाने की कोशिश करते हुए बोला, "मैं सोच रहा हूँ, आज कितना सन्तोष है मुझे, कितनी खुशी है मुझे, कि सुधा एक ऐसे घर जा रही है जो इतना अच्छा है, ऐसे लड़के के साथ जा रही है जो इतना ऊँचा"...कहते-कहते चन्दर की आँखें भर आयीं।

बिनती चन्दर के पास खड़ी होकर बोली, "छिः, चन्दर बाबू! आपकी आँखों में आँसू! यह तो अच्छा नहीं लगता। जितनी पवित्रता और ऊँचाई से आपने सुधा के साथ निबाह किया है, यह तो शायद देवता भी नहीं कर पाते और दीदी ने आपको जैसा निश्छल प्यार दिया है उसको पाकर तो आदमी स्वर्ग से भी ऊँचा उठ जाता है, फैलाद से भी ज्यादा ताकतवर हो जाता है, फिर आज इतने शुभ अवसर पर आप में कमजोरी कहाँ से? हमें तो बड़ी शरम लग रही है। आज तक दीदी तो दूर, हम तक को आप पर गर्व था। अच्छा, मैं फोटो रख तो आऊँ वरना दीदी आ जाएँगी!" बिनती ने फोटो ली और चली गयी।

बिनती जब लौटी तो चन्दर स्वस्थ था। बिनती की ओर क्षण भर चन्दर ने देखा और कहा, "मैं इसलिए नहीं रोया था बिनती, मुझे यह लगा कि यहाँ कैसा लगेगा। खैर जाने दो।"

"एक दिन तो ऐसा होता ही है न, सहना पड़ेगा!" बिनती बोली।

"हाँ, सो तो है; अच्छा बिनती, सुधा ने यह फोटो देखी है?" चन्दर ने पूछा।

"अभी नहीं, असल में मामाजी ने मुझसे कहा था कि यह फोटो दिखा दे सुधा को; लेकिन मेरी मिम्मत नहीं पड़ी। मैंने उनसे कह दिया कि चन्दर आएँगे तो दिखा देंगे। आप जब ठीक समझें तो दिखा दें। जेठ दशहरा अगले ही मंगल को है।" बिनती ने कहा।

"अच्छा।" एक गहरी साँस लेकर चन्दर बोला।

बिनती थोड़ी देर तक चन्दर की ओर एकटक देखती रही। चन्दर ने उसकी निगाह चुरा ली और बोला, "क्या देख रही हो, बिनती?"

"देख रही हूँ कि आपकी पलकें झपकती हैं या नहीं?" बिनती बहुत गम्भीरता से बोली।

"क्यों?"

"इसलिए कि मैंने सुना था, देवताओं की पलकें कभी नहीं गिरतीं।"

चन्दर एक फीकी हँसी हँसकर रह गया।

"नहीं, आप मजाक न समझें। मैंने अपनी जिन्दगी में जितने लोग देखे, उनमें आप-जैसा कोई भी नहीं मिला। कितने ऊँचे हैं आप, कितना विशाल हृदय है आपका! दीदी कितनी भाग्यशाली हैं।"

चन्दर ने कुछ जवाब नहीं दिया। "जाओ, फोटो ले आओ।" उसने कहा, "आज ही दिखा दूँ। जाओ, खाना भी ले आओ। अब घर जाकर क्या करना है।"

पापा को खाना खिलाने के बाद चन्दर और सुधा खाने बैठे। महराजिन चली गयी थी। इसलिए बिनती सेंक-सेंककर रोटी दे रही थी। सुधा एक रेशमी सनिया पहने चौके के अन्दर खा रही थी। और चन्दर चौके के बाहर। सुबह के कच्चे खाने में डॉक्टर शुक्ला बहुत छूत-छात का विचार रखते थे।

"देखो, आज बिनती ने रोटी बनायी है तो कितनी मीठी लग रही है, एक तुम बनाती हो कि मालूम ही नहीं पड़ता रोटी है कि सोख्ता!" चन्दर ने सुधा को चिढ़ाते हुए कहा।

सुधा ने हँसकर कहा, "हमें बिनती से लड़ाने की कोशिश कर रहे हो! बिनती की हमसे जिन्दगी-भर लड़ाई नहीं हो सकती!"

"अरे हम सब समझते हैं इनकी बात!" बिनती ने रोटी पटकते हुए कहा और जब सुधा सिर झुकाकर खाने लगी तो बिनती ने आँख के इशारे से पूछा, "कब दिखाओगे?"

चन्दर ने सिर हिलाया और फिर सुधा से बोला, "तुम उन्हें चिट्ठी लिखोगी?"

"किन्हें?"

"कैलाश मिश्रा को, वही बरेली वाले? उन्होंने हमें खत लिखा था उसमें तुम्हें प्रणाम

लिखा था।" चन्दर बोला।

"नहीं, खत-वत नहीं लिखते। उन्हें एक दफे बुलाओ तो यहाँ।"

"हाँ, बुलाएँगे अब महीने-दो महीने बाद, तब तुमसे खूब परिचय करा देंगे और तुम्हें उसकी पार्टी में भी भरती करा देंगे।" चन्दर ने कहा।

"क्या? हम मजाक नहीं करते? हम सचमुच समाजवादी दल में शामिल होंगे।" सुधा बोली, "अब हम सोचते हैं कुछ काम करना चाहिए, बहुत खेल-कूद लिये, बचपन निभा लिया।"

"उन्होंने अपना चित्र भेजा है। देखोगी?" चन्दर ने जेब में हाथ डालते हुए पूछा।

"कहाँ?" सुधा ने बहुत उत्सुकता से पूछा, "निकालो देखें।"

"पहले बताओ, हमें क्या इनाम दोगी? बहुत मुश्किल से भेजा उन्होंने चित्र!" चन्दर ने कहा।

"इनाम देंगे इन्हें!" सुधा बोली और झट से झपटकर चित्र छीन लिया।

"अरे, छू लिया चौके में से?" बिनती ने दबी जबान से कहा।

सुधा ने थाली छोड़ दी। अब छू गयी थी वह; अब खा नहीं सकती थी।

"अच्छी फोटो देखी दीदी। सामने की थाली छूट गयी!" बिनती ने कहा।

सुधा ने हाथ धोकर आँचल के छोर से पकड़कर फोटो देखी और बोली, "चन्दर सचमुच देखो! कितने अच्छे लग रहे हैं। कितना तेज है चेहरे पर, और माथा देखो कितना ऊँचा है।" सुधा फोटो देखती हुई बोली।

"अच्छी लगी फोटो? पसन्द है?" चन्दर ने बहुत गम्भीरता से पूछा।

"हाँ, हाँ, और समाजवादियों की तरह नहीं लगते ये।" सुधा बोली।

"अच्छा सुधा, यहाँ आओ।" और चन्दर के साथ सुधा अपने कमरे में जाकर पलंग पर बैठ गयी। चन्दर उसके पास बैठ गया और उसका हाथ अपने हाथ में लेकर उसकी अँगूठी घुमाते हुए बोला, "सुधा, एक बात कहें, मानोगी?"

"क्या?" सुधा ने बहुत दुलार और भोलेपन से पूछा।

"पहले बता दो कि मानोगी?" चन्दर ने उसकी अँगूठी की ओर एकटक देखते हुए कहा।

"फिर, हमने कभी कोई बात तुम्हारी टाली है! क्या बात है?"

"तुम मानोगी चाहे कुछ भी हो?" चन्दर ने पूछा।

"हाँ-हाँ, कह तो दिया। अब कौन-सी तुम्हारी ऐसी बात है जो तुम्हारी सुधा नहीं मान सकती!" आँखों में, वाणी में, अंग-अंग से सुधा के आत्मसमर्पण छलक रहा था।

"फिर अपनी बात पर कायम रहना, सुधा! देखो!" उसने सुधा की उँगलियाँ अपनी पलकों से लगाते हुए कहा, "सुधी मेरी! तुम उस लड़के से ब्याह कर लो!"

"क्या?" सुधा चोट खायी नागिन की तरह तड़प उठी–"इस लड़के से? यही शकल है इसकी हमसे ब्याह करने की! चन्दर, हम ऐसा मजाक नापसन्द करते हैं, समझे कि नहीं! इसलिए बड़े प्यार से बुला लाये, बड़ा दुलार कर रहे थे!"

"तुम अभी वायदा कर चुकी हो!" चन्दर ने बहुत आजिजी से कहा।

"वायदा कैसा? तुम कब अपने वायदे निभाते हो? और फिर यह धोखा देकर वायदा कराना क्या? हिम्मत थी तो साफ-साफ कहते हमसे! हमारे मन में आता सो कहते। हमें इस तरह से बाँध कर क्यों बलिदान चढ़ा रहे हो!" और सुधा मारे गुस्से के रोने लगी।

चन्दर स्तब्ध। उसने इस दृश्य की कल्पना ही नहीं की थी। वह क्षण भर खड़ा रहा। वह क्या कहे सुधा से, कुछ समझ ही में नहीं आता था। वह गया और रोती हुई सुधा के कन्धे पर हाथ रख दिया। "हटो उधर!" सुधा ने बहुत रुखाई से हाथ हटा दिया और आँचल से सिर ढकती हुई बोली, "मैं ब्याह नहीं करूँगी, कभी नहीं करूँगी। किसी से नहीं करूँगी। तुम सभी लोगों ने मिलकर मुझे मार डालने की ठानी है। तो मैं अभी सिर पटककर मर जाऊँगी।" और मारे तैश के सचमुच सुधा ने अपना सिर दीवार पर पटक दिया। "अरे!" दौड़कर चन्दर ने सुधा को पकड़ लिया। मगर सुधा ने गरजकर कहा, "दूर हटो चन्दर छूना मत मुझे।" और जैसे उसमें जाने कहाँ की ताकत आ गयी है, उसने अपने को छुड़ा दिया।

चन्दर ने दबी जबान से कहा, "छिः सुधा! यह तुमसे उम्मीद नहीं थी मुझे। यह भावुकता तुम्हें शोभा नहीं देती। बातें कैसी कर रही हो तुम! हम वही चन्दर हैं न!"

"हाँ, वही चन्दर हो! और तभी तो! इस सारी दुनिया में तुम्हीं एक रह गये हो मुझे फोटो दिखाकर पसन्द कराने को।" सुधा सिसक-सिसककर रोने लगी–"पापा ने भी धोखा दे दिया। हमें पापा से यह उम्मीद नहीं थी।"

"पगली! कौन अपनी लड़की को हमेशा अपने पास रख पाया है!" चन्दर बोला।

"तुम चुप रहो, चन्दर। हमें तुम्हारी बोली जहर लगती है। 'सुधा, यह फोटो तुम्हें पसन्द है?' तुम्हारी जबान हिली कैसे? शरम नहीं आयी तुम्हें। हम कितना मानते थे पापा को, कितना मानते थे तुम्हें? हमें यह नहीं मालूम था कि तुम लोग ऐसा करोगे।" थोड़ी देर चुपचाप सिसकती रही सुधा और फिर धधककर उठी–"कहाँ है वह फोटो? लाओ, अभी मैं जाऊँगी पापा के पास! मैं कहूँगी उनसे हाँ, मैं इस लड़के को पसन्द करती हूँ। वह बहुत अच्छा है, बहुत सुन्दर है। लेकिन मैं उससे शादी नहीं करूँगी, मैं किसी से शादी नहीं करूँगी! झूठी बात है..." और उठकर पापा के कमरे की ओर जाने लगी।

"खबरदार, जो कदम बढ़ाया!" चन्दर ने डाँटकर कहा, "बैठो इधर।"

"मैं नहीं रुकूँगी!" सुधा ने अकड़कर कहा।

"नहीं रुकोगी?"

"नहीं रुकूँगी।"

और चन्दर का हाथ तैश में उठा और एक भरपूर तमाचा सुधा के गाल पर पड़ा। सुधा के गाल पर नीली उँगलियाँ उपट आयीं। वह स्तब्ध! जैसे पत्थर बन गयी हो। आँख में आँसू जम गये। पलकों में निगाहें जम गयीं। होंठों में आवाजें जम गयीं और सीने में सिसकियाँ जम गयीं।

चन्दर ने एक बार सुधा की ओर देखा और कुर्सी पर जैसे गिर पड़ा और सिर पटककर बैठ गया। सुधा कुर्सी के पास जमीन पर बैठ गयी। चन्दर के घुटनों पर सिर रख दिया। बड़ी भारी आवाज में बोली, "चन्दर, देखें तुम्हारे हाथ में चोट तो नहीं आयी।"

चन्दर ने सुधा की ओर देखा, एक ऐसी निगाह से जिसमें कब्र मुँह फाड़कर जमुहाई ले रही थी। सुधा एकाएक फिर सिसक पड़ी और चन्दर के पैरों पर सिर रखकर बोली, "चन्दर, सचमुच मुझे अपने आश्रय से निकालकर ही मानोगो! चन्दर, मजाक की बात दूसरी है, जिन्दगी में तो दुश्मनी मत निकाला करो।"

चन्दर एक गहरी साँस लेकर चुप हो गया। और सिर थामकर बैठ गया। पाँच मिनट बीत गये। कमरे में सन्नाटा, गहन खामोशी। सुधा चन्दर के पाँवों को छाती से चिपकाये सूनी-सूनी निगाहों से जाने कुछ देख रही थी दीवारों के पार, दिशाओं के पार, क्षितिजों से परे...दीवार पर घड़ी चल रही थी टिक...टिक...

चन्दर ने सिर उठाया और कहा, "सुधा, हमारी तरफ देखो–" सुधा ने सिर ऊपर उठाया। चन्दर बोला, "सुधा, तुम हमें जाने क्या समझ रही होगी, लेकिन अगर तुम समझ पातीं कि मैं क्या सोचता हूँ! क्या समझता हूँ।" सुधा कुछ नहीं बोली, चन्दर कहता गया, "मैं तुम्हारे मन को समझता हूँ, सुधा! तुम्हारे मन ने जो तुमसे नहीं कहा, वह मुझसे कह दिया था–लेकिन सुधा, हम दोनों एक-दूसरे की जिन्दगी में क्या इसीलिए आये कि एक-दूसरे को कमजोर बना दें या हम लोगों ने स्वर्ग की ऊँचाइयों पर साथ बैठकर आत्मा का संगीत सुना सिर्फ इसीलिए कि उसे अपने ब्याह की शहनाई में बदल दें?"

"गलत मत समझो चन्दर, मैं गेसू नहीं कि अख्तर से ब्याह के सपने देखूँ और न तुम्हीं अख्तर हो, चन्दर! मैं जानती हूँ कि मैं तुम्हारे लिए राखी के सूत से भी ज्यादा पवित्र रही हूँ लेकिन मैं जैसी हूँ, मुझे वैसी ही क्यों नहीं रहने देते! मैं किसी से शादी नहीं करूँगी। मैं पापा के पास रहूँगी। शादी को मेरा मन नहीं कहता, मैं क्यों करूँ? तुम गुस्सा मत हो, दु:खी मत हो, तुम आज्ञा दोगे तो मैं कुछ भी कर सकती हूँ, लेकिन हत्या

करने से पहले यह तो देख लो कि मेरे हृदय में क्या है?" सुधा ने चन्दर के पाँवों को अपने हृदय से और भी दबाकर कहा।

"सुधा, तुम एक बात सोचो। अगर तुम सबका प्यार बटोरती चलती हो तो कुछ तुम्हारी जिम्मेदारी है या नहीं? पापा ने आज तक तुम्हें किस तरह पाला। अब क्या तुम्हारा यह फर्ज है कि तुम उनकी बात को ठुकराओ? और एक बात और सोचो—हम पर कुछ विश्वास करके ही उन्होंने कहा है कि मैं तुमसे फोटो पसन्द कराऊँ? अगर अब तुम इनकार कर देती हो तो एक तरफ पापा को तुमसे धक्का पहुँचेगा, दूसरी ओर मेरे प्रति उनके विश्वास को कितनी चोट लगेगी। हम उन्हें क्या मुँह दिखाने लायक रहेंगे भला! तो तुम क्या चाहती हो? महज अपनी थोड़ी-सी भावुकता के पीछे तुम सभी की जिन्दगी चौपट करने के लिए तैयार हो? यह तुम्हें शोभा नहीं देता है। क्या कहेंगे पापा, कि चन्दर ने अभी तक तुम्हें यही सिखाया था? हमें लोग क्या कहेंगे? बताओ। आज तुम शादी न करो। उसके बाद पापा हमेशा के लिए दु:खी रहा करे और दुनिया हमें कहा करें, तब तुम्हें अच्छा लगेगा।"

"नहीं।" सुधा ने भर्राये हुए गले से कहा।

"तब, और फिर एक बात और है न सुधी! सोने की पहचान आग में होती है न! लपटों में अगर उसमें और निखार आये तभी वह सच्चा सोना है। सचमुच मैंने तुम्हारे व्यक्तित्व को बनाया है या तुमने मेरे व्यक्तित्व को बनाया है, यह तो तभी मालूम होगा जब हम लोग कठिनाइयों से, वेदनाओं से, संघर्षों से खेलें और बाद में विजयी हों और तभी मालूम होगा कि सचमुच मैंने तुम्हारे जीवन में प्रकाश और बल दिया था। अगर सदा तुम मेरी बाँहों की सीमा में रहीं और मैं तुम्हारी पलकों की छाँव में रहा और बाहर के संघर्षों से हम लोग डरते रहे तो कायरता है। और मुझे अच्छा लगेगा कि दुनिया कहे कि मेरी सुधा, जिस पर मुझे नाज था, वह कायर है? बोलो। तुम कायर कहलाना पसन्द करोगी?"

"हाँ!" सुधा ने फिर चन्दर के घुटनों में मुँह छिपा लिया।

"क्या? यह मैं सुधा के मुँह से सुन रहा हूँ। छि: पगली! अभी तक तेरी निगाहों ने मेरे प्राणों में अमृत भरा है और मेरी साँसों ने तेरे पंखों में तूफानों की तेजी। और हमें-तुम्हें तो आज खुश होना चाहिए कि अब सामने जो रास्ता है उसमें हम लोगों को यह सिद्ध करने का अवसर मिलेगा कि सचमुच हम लोगों ने एक-दूसरे को ऊँचाई और पवित्रता दी है। मैंने आज तक तुम्हारी सहायता पर विश्वास किया था। आज क्या तुम मेरा विश्वास तोड़ दोगी? सुधा, इतनी क्रूर क्यों हो रही हो आज तुम? तुम साधारण लड़की नहीं हो।

तुम ध्रुवतारा से ज्यादा प्रकाशमान हो। तुम यह क्यों चाहती हो कि दुनिया कहे, सुधा भी एक साधारण-सी भावुक लड़की थी और आज मैं अपने कान से सुनूँ! बोलो सुधी?" चन्दर ने सुधा के सिर पर हाथ रखकर कहा।

सुधा ने आँखें उठायीं, बड़ी कातर निगाहों से चन्दर की ओर देखा और सिर झुका लिया। सुधा के सिर पर हाथ फेरते हुए चन्दर बोला–

"सुधा, मैं जानता हूँ मैं तुम पर शायद बहुत सख्ती कर रहा हूँ, लेकिन तुम्हारे सिवा और कौन है मेरा? बताओ। तुम्हीं पर अपना अधिकार भी आजमा सकता हूँ। विश्वास करो मुझ पर सुधा, जीवन में अलगाव, दूरी, दुःख और पीड़ा आदमी को महान् बना सकती है। भावुकता और सुख हमें ऊँचे नहीं उठाते। बताओ सुधा, तुम्हें क्या पसन्द है? मैं ऊँचा ऊठूँ तुम्हारे विश्वास के सहारे, तुम ऊँची उठो मेरे विश्वास के सहारे, इससे अच्छा और क्या है सुधा! चाहो तो मेरे जीवन को एक पवित्र साधन बना दो, चाहो तो एक छिछली अनुभूति।"

सुधा ने एक गहरी साँस ली, क्षण-भर घड़ी की ओर देखा और बोली, "इतनी जल्दी क्या है अभी चन्दर? तुम जो कहोगे मैं कर लूँगी!" और फिर वह सिसकने लगी–"लेकिन इतनी जल्दी क्या है? अभी मुझे पढ़ लेने दो!"

"नहीं, इतना अच्छा लड़का फिर मिलेगा नहीं। और इस लड़के के साथ तुम वहाँ पढ़ भी सकती हो। मैं जानता हूँ उसे। वह देवताओं-सा निश्छल है। बोलो, मैं पापा से कह दूँ कि तुम्हें पसन्द है?"

सुधा कुछ नहीं बोली।

"मौन का मतलब हाँ है न?" चन्दर ने पूछा।

सुधा ने कुछ नहीं कहा। झुककर चन्दर के पैरों को अपने होंठों से छू लिया और पलकों से दो आँसू चू पड़े। चन्दर ने सुधा को उठा लिया और उसके माथे पर हाथ रखकर कहा, "ईश्वर तुम्हारी आत्मा को सदा ऊँचा बनाएगा, सुधा!" उसने एक गहरी साँस लेकर कहा, "मुझे तुम पर गर्व है," और फोटो उठाकर बाहर चलने लगा।

"कहाँ जा रहे हो! जाओ मत!" सुधा ने उसका कुरता पकड़कर बड़ी आजिजी से कहा, "मेरे पास रहो, तबीयत घबराती है?"

चन्दर पलंग पर बैठ गया। सुधा तकिये पर सिर रखकर लेट गयी और फटी-फटी पथराई आँखों से जाने क्या देखने लगी। चन्दर भी चुप था, बिल्कुल खामोश। कमरे में सिर्फ घड़ी चल रही थी, टिक...टिक...

थोड़ी देर बाद सुधा ने चन्दर के पैरों को अपने तकिये के पास खींच लिया और उसके तलवों पर होठ रखकर उसमें मुँह छिपाकर चुपचाप लेटी रही। बिनती आयी।

सुधा हिली भी नहीं! चन्दर ने देखा वह सो गयी थी। बिनती ने फोटो उठाकर इशारे से पूछा, "मंजूर?" "हाँ।" बिनती ने बजाय खुश होने के चन्दर की ओर देखकर सिर झुका लिया और चली गयी।

सुधा सो रही थी और चन्दर के तलवों में उसकी नरम क्वाँरी साँसें गूँज रही थीं। चन्दर बैठा रहा चुपचाप। उसकी हिम्मत न पड़ी कि वह हिले और सुधा की नींद तोड़ दे। थोड़ी देर बाद सुधा ने करवट बदली तो वह उठकर आँगन के सोफे पर जाकर लेट रहा और जाने क्या सोचता रहा।

जब उठा तो देखा धूप ढल गयी है और सुधा उसके सिरहाने बैठी उसे पंखा झल रही है। उसने सुधा की ओर अपराधी जैसी कातर निगाहों से देखा और सुधा ने बहुत दर्द से आँखें फेर लीं और ऊँचाइयों पर आखिरी साँसें लेती हुई मरणासन्न धूप की ओर देखने लगी।

चन्दर उठा और सोचने लगा तो सुधा बोली, "कल आओगे कि नहीं?"

"क्यों नहीं आऊँगा?" चन्दर बोला।

"मैंने सोचा शायद अभी से दूर होना चाहते हो।" एक गहरी साँस लेकर सुधा बोली और पंखे की ओट में आँसू पोंछ लिये।

चन्दर दूसरे दिन सुबह नहीं गया। उसकी थीसिस का बहुत-सा भाग टाइप होकर आ गया था और उसे बैठा वह सुधार रहा था। लेकिन साथ ही पता नहीं क्यों उसका सहसा नहीं हो रहा था वहाँ जाने का। लेकिन मन में एक चिन्ता थी सुधा की। वह कल से बिल्कुल मुरझा गयी थी। चन्दर को अपने ऊपर कभी-कभी क्रोध आता था। लेकिन वह जानता था कि यह तकलीफ का ही रास्ता ठीक रास्ता है। वह अपनी जिन्दगी में सस्तेपन के खिलाफ था। लेकिन उसके लिए सुधा की पलक का एक आँसू भी देवता की तरह था और सुधा के फूलों-जैसे चेहरे पर उदासी की एक रेखा भी उसे पागल बना देती थी। सुबह पहले तो वह नहीं गया, बाद में स्वयं उसे पछतावा होने लगा और वह अधीरता से पाँच बजने का इन्तजार करने लगा।

पाँच बजे, और वह साइकिल लेकर पहुँचा। देखा, सुधा और बिनती दोनों नहीं हैं। अकेले डॉक्टर शुक्ला अपने कमरे में बैठे हैं। चन्दर गया। "आओ, सुधा ने तुमसे कह दिया, उसे पसन्द है?" डॉक्टर शुक्ला ने पूछा।

"हाँ, उसे कोई एतराज नहीं।" चन्दर ने कहा।

"मैं पहले से जानता था। सुधा मेरी इतनी अच्छी है, इतनी सुशील है कि वह मेरी

इच्छा का उल्लंघन तो कर ही नहीं सकती। लेकिन चन्दर, कल से उसने खाना-पीना छोड़ दिया है। बताओ, इससे क्या फायदा? मेरे बस में क्या है? मैं उसे हमेशा तो रख नहीं सकता। लेकिन, लेकिन आज सुबह खाते वक्त वह बैठी भी नहीं मेरे पास बताओ..." उनका गला भर आया–"बताओ, मेरा क्या कसूर है?"

चन्दर चुप था।

"कहाँ है सुधा?" चन्दर ने पूछा।

"गैरेज में मोटर ठीक कर रही है। मैं इतना मना किया कि धूप में तप जाओगी, लू लग जाएगी–लेकिन मानी ही नहीं! बताओ, इस झल्लाहट से मुझे कैसा लगता है?" वृद्ध पिता के कातर स्वर में डॉक्टर ने कहा, "जाओ चन्दर, तुम्हीं समझाओ! मैं क्या कहूँ?"

चन्दर उठकर गया। मोटर गैरेज में काफी गरमी थी, लेकिन बिनती वहीं एक चटाई बिछाये पड़ी सो रही थी और सुधा इंजन का कवर उठाये मोटर साफ करने में लगी हुई थी। बिनती बेहोश सो रही थी। तकिया चटाई से हटकर जमीन पर चला गया था और चोटी फर्श पर सोयी हुई नागिन की तरह पड़ी थी। बिनती का एक हाथ छाती पर था और एक हाथ जमीन पर। आँचल, आँचल न रहकर चादर बन गया था। चन्दर के जाते ही सुधा ने मुँह फेरकर देखा–"चन्दर, आओ।" क्षीण मुसकराहट उसके होंठों पर दौड़ गयी। लेकिन मुसकराहट में उल्लास लुट चुका था, रेखाएँ बाकी थीं। सहसा उसने मुड़कर देखा–"बिनती! अरे, कैसे घोड़ा बेचकर सो रही है! उठ! चन्दर आये हैं!" बिनती ने आँखें खोलीं, चन्दर की ओर देखा, लेटे-ही-लेटे नमस्ते किया और आँचल सँभालकर फिर करवट बदलकर सो गयी।

"बहुत सोती है कम्बख्त!" सुधा बोली, "इतना कहा इससे कमरे में जाकर पंखे में सो! लेकिन नहीं, जहाँ दीदी रहेगी, वहीं यह भी रहेगी। मैं गैरेज में हूँ तो यह कैसे कमरे में रहे। वहीं मरेगी जहाँ मैं मरूँगी।"

"तो तुम्हीं क्यों गैरेज में थीं! ऐसी क्या जरूरत थी अभी ठीक करने की!" चन्दर ने कहा, लेकिन कोशिश करने पर भी सुधा को आज डाँट नहीं पा रहा था। पता नहीं कहाँ पर क्या टूट गया था।

"नहीं चन्दर, तबीयत ही नहीं लग रही थी। क्या करती! क्रोसिया उठाया, वह भी रख दिया। कविता उठायी, वह भी रख दी। कविता वगैरह में तबीयत नहीं लगी। मन में आया, कोई कठोर काम हो, कोई नीरस काम हो लोहे-लक्कड़, पीतल-फौलाद का, तो मन लग जाए। तो चली आयी मोटर ठीक करने।"

"क्यों, कविता में भी तबीयत नहीं लगी? ताज्जुब है, गेसू के साथ बैठकर तुम तो कविता में घंटों गुजार देती थीं!" चन्दर बोला।

"उन दिनों शायद किसी को प्यार करती रही होऊँ तभी कविता में मन लगता था!"

सुधा उस दिन की पुरानी बात याद करके बहुत उदास हँसी हँसी–"अब प्यार नहीं करती होऊँगी, अब तबीयत नहीं लगती। बड़ी फीकी, बड़ी बेजार, बड़ी बनावटी लगती हैं ये कविताएँ, मन के दर्द के आगे सभी फीकी हैं।" और फिर वह उन्हीं पुरजों में डूब गयी। चन्दर भी चुपचाप मोटर की खिड़की से टिककर खड़ा हो गया। और चुपचाप कुछ सोचने लगा।

सुधा ने बिना सिर उठाये, झुके-ही-झुके, एक हाथ से एक तार लपेटते हुए कहा–"चन्दर, तुम्हारे मित्र का परिवार आ रहा है, इसी मंगल को। तैयारी करो जल्दी।"

"कौन परिवार, सुधा?"

"हमारे जेठ और सास आ रही हैं, इसी बैसाखी को हमें देखने। उन्होंने तिथि बदल दी है। तो अब छह ही दिन रह गये हैं।"

चन्दर कुछ नहीं बोला। थोड़ी देर बाद सुधा फिर बोली–

"अगर उचित समझो तो कुछ पाउडर-क्रीम ले आना, लगाकर ज़रा गोरे हो जाएँ तो शायद पसन्द आ जाएँ! क्यों, ठीक है न!" सुधा ने बड़ी विचित्र-सी हँसी हँस दी और सिर उठाकर चन्दर की ओर देखा। चन्दर चुप था लेकिन उसकी आँखों में अजीब-सी पीड़ा थी और उसके माथे पर बहुत ही करुण छाँह।

सुधा ने कवर गिरा दिया और चन्दर के पास जाकर बोली, "क्यों चन्दर, बुरा मान गये हमारी बात का? क्या करें चन्दर, कल से हम मजाक करना भी भूल गये। मजाक करते हैं तो व्यंग्य बन जाता है। लेकिन हम तुमको कुछ कह नहीं रहे थे, चन्दर। उदास न होओ।" बड़े ही दुलार से सुधा बोली, "अच्छा, हम कुछ नहीं कहेंगे।" और उसने अपना आँचल सँभालने के लिए हाथ उठाया। हाथ में कालौंच लग गयी थी। चन्दर समझा मेरे कन्धे पर हाथ रख रही है सुधा। वह अलग हटा तो सुधा अपने हाथ देखकर बोली, "घबराओ न देवता, तुम्हारी उज्ज्वल साधना में कालिख नहीं लगाऊँगी। अपने आँचल में पोंछ लूँगी।" और सचमुच आँचल में हाथ पोंछकर बोली, "चलो, अन्दर चलें, उठ बिनती! बिलैया कहीं की!"

चन्दर को सोफे पर बिठाकर उसी की बगल में सुधा बैठ गयी और अँगुलियाँ तोड़ते हुए कहा, "चन्दर, सिर में बहुत दर्द हो रहा है मेरे।"

"सिर में दर्द नहीं होगा तो क्या?" इतनी तपिश में मोटर बना रही थीं! पापा कितने दु:खी हो रहे थे आज? तुम्हें इस तरह करना चाहिए? फिर फायदा क्या हुआ? न ऐसे दु:खी किया, वैसे दु:खी कर लिया। बात तो वही रही न? तारीफ तो तब थी कि तुम अपनी दुनिया में अपने हाथ से आग लगा देती और चेहरे पर शिकन न आती। अभी तक दुनिया की सभी ऊँचाई समेटकर भी बाहर से वही बचपन कायम रखा था तुमने,

अब दुनिया का सारा सुख अपने हाथ से लुटाने पर भी वही बचपन, वही उल्लास क्यों नहीं कायम रखती!"

"बचपन!" सुधा हँसी–"बचपन अब खत्म हो गया, चन्दर! अब मैं बड़ी हो गयी।"

"बड़ी हो गयी! कब से?"

"कल दोपहर से, चन्दर!"

चन्दर चुप। थोड़ी देर बाद फिर स्वयं सुधा ही बोली, "नहीं चन्दर, दो-तीन दिन में ठीक हो जाऊँगी! तुम घबराओ मत। मैं मृत्यु-शय्या पर भी होऊँगी तो तुम्हारे आदेश पर हँस सकती हूँ।" और फिर सुधा मुगसुम बैठ गयी। चन्दर चुपचाप सोचता रहा और बोला, "सुधी! मेरा तुम्हें कुछ भी ध्यान नहीं है?"

"और किसका है, चन्दर! तुम्हारा ध्यान न होता तो देखती मुझे कौन झुका सकता था। आज से सालों पहले जब मैं पापा के पास आयी थी तो मैंने कभी न सोचा था कि कोई भी होगा जिसके सामने मैं इतना झुक जाऊँगी।...अच्छा चन्दर, मन बहुत उचट रहा है! चलो, कहीं घूम आएँ! चलोगे?"

"चलो!" चन्दर ने कहा।

"जाएँ बिनती को जगा लाएँ। वह कमबख्त अभी पड़ी सो रही है।" सुधा उठकर चली गयी। थोड़ी देर में बिनती आँख मलते बगल में चटाई दाबे आयी और फिर बरामदे में बैठकर ऊँघने लगी। पीछे-पीछे सुधा आयी और चोटी खींचकर बोली, "चल तैयार हो! चलेंगे घूमने।"

थोड़ी देर में तैयार हो गये। सुधा ने जाकर मोटर निकाली और बोली चन्दर से–"तुम चलाओगे या हम? आज हमीं चलाएँ। चलो, किसी पेड़ से लड़ा दें मोटर आज!"

"अरे बाप रे।" पीछे बिनती चिल्लायी, "तब हम नहीं जाएँगे।"

सुधा और चन्दर दोनों ने मुड़कर उसे देखा और उसकी घबराहट देखकर दंग रह गये।

"नहीं। मरेगी नहीं तू!" सुधा ने कहा। और आगे बैठ गयी।

"बिनती, तू पीछे बैठेगी?" सुधा ने पूछा।

"न भइया, मोटर चलेगी तो मैं गिर जाऊँगी।"

"अरे कोई मोटर के पीछे बैठने के लिए थोड़ी कह रही हूँ। पीछे की सीट पर बैठेगी?" सुधा ने पूछा।

"ओ! मैं समझी तुम कह रही हो पीछे बैठने के लिए जैसी बग्गी में साईस बैठते हैं! हम तुम्हारे पास बैठेंगे।" बिनती ने मचलकर कहा।

"अब तेरा बचपन इठला रहा है, बिल्ली कहीं की, चल आ मेरे पास!" बिनती मुसकराती हुई जाकर सुधा के बगल में बैठ गयी। सुधा ने उसे दुलार से पास खींच लिया।

चन्दर पीछे बैठा तो सुधा बोली, "अगर कुछ हर्ज न समझो तो तुम भी आगे आओ या दूरी रखनी हो तो पीछे ही बैठो।"

चन्दर आगे बैठ गया। बीच में बिनती, इधर चन्दर उधर सुधा।

मोटर चली तो बिनती चीखी, "अरे मेरे मास्टर साहब।"

चन्दर ने देखा, बिसरिया चला जा रहा था, "आज नहीं पढ़ेंगे..." चन्दर ने चिल्लाकर कहा। सुधा ने मोटर रोकी नहीं।

चन्दर को बेहद अचरज हुआ जब उसने देखा कि मोटर पम्मी के बँगले पर रुकी। "अरे यहाँ क्यों?" चन्दर ने पूछा।

"यों ही।" सुधा ने कहा। "आज मन हुआ कि मिस पम्मी से अँग्रेजी कविता सुनें।"

"क्यों, अभी तो तुम कह रही थीं कि कविता पढ़ने में आज तुम्हारा मन ही नहीं लग रहा है!"

"कुछ कहो मत चन्दर, आज मुझे जो मन में आये, कर लेने दो। मेरा सिर बेहद दर्द कर रहा है। और मैं कुछ समझ नहीं पाती क्या करूँ। चन्दर तुमने अच्छा नहीं किया?"

चन्दर कुछ नहीं बोला। चुपचाप आगे चल दिया। सुधा के पीछे-पीछे कुछ संकोच करती हुई-सी बिनती आ रही थी।

पम्मी बैठी कुछ लिख रही थी। उसने उठकर सबों का स्वागत किया। वह कोच पर बैठ गयी। दूसरी पर सुधा, चन्दर और बिनती। सुधा ने बिनती का परिचय पम्मी से कराया और पम्मी ने बिनती से हाथ मिलाया तो बिनती जाने क्यों चन्दर की ओर देखकर हँस पड़ी। शायद उस दिन की घटना की याद में।

सहसा सुधा को जाने क्या खयाल आ गया, बिनती की शरारत-भरी हँसी देखकर कि उसने फौरन कहा चन्दर से–"चन्दर, तुम पम्मी के पास बैठो, दो मित्रों को साथ बैठना चाहिए।"

"हाँ, और खासतौर से जब वह कभी-कभी मिलते हों।"–बिनती ने मुसकराते हुए जोड़ दिया। पम्मी ने मजाक समझ लिया और बिना शरमाये बोली–

"हम लोगों को मध्यस्थ की जरूरत नहीं, धन्यवाद! आओ चन्दर, यहाँ आओ।" पम्मी ने चन्दर को बुलाया। चन्दर उठकर पम्मी के पास बैठ गया। थोड़ी देर तक बातें होती रहीं। मालूम हुआ, बर्टी अपने एक दोस्त के साथ तराई के पास शिकार खेलने गया है। आजकल वह दिल की शक्ल का एक पानपुमा दफ्ती का टुकड़ा काटकर उसमें गोली मारा करता है और जब किसी चिड़िया वगैरह को मारता है तो शिकार को उठाकर देखता है कि गोली हृदय में लगी है या नहीं। स्वास्थ्य उसका सुधर रहा है। सुधा कोच पर सिर टेके उदास बैठी थी। सहसा पम्मी ने बिनती से कहा, "आपको पहली दफे देखा मैंने। आप बातें क्यों नहीं करतीं?"

बिनती ने झेंपकर मुँह झुका लिया। बड़ी विचित्र लड़की थी। हमेशा चुप रहती थी और कभी-कभी बोलने की लहर आती तो गुटरगूँ करके घर गुँजा देती थी और जिन दिनों चुप रहती थी उन दिनों ज्यादातर आँख की निगाह, कपोलों की आशनाई या अधरों की मुसकान के द्वारा बातें करती थी। पम्मी बोली, "आपको फूलों से शौक है?"

"हाँ, हाँ" बिनती सिर हिलाकर बोली।

"चन्दर, इन्हें जाकर गुलाब दिखा लाओ। इधर फिर खूब खिले हैं!"

बिनती ने सुधा से कहा, "चलो दीदी।" और चन्दर के साथ बढ़ गयी।

फूलों के बीच में पहुँचकर, बिनती ने चन्दर से कहा, "सुनिए, दीदी को तो जाने क्या होता जा रहा है। बताइए, ऐसे क्या होगा?"

"मैं खुद परेशान हूँ, बिनती! लेकिन पता नहीं मन में कौन-सा विश्वास है जो कहता है कि नहीं, सुधा अपने को सँभालना जानती है, अपने मन को सन्तुलित करना जानती है और सुधा सचमुच ही त्याग में ज्यादा गौरवमयी हो सकती है।" इसके बाद चन्दर ने बात टाल दी। वह बिनती से ज्यादा बात करना नहीं चाहता था, सुधा के बारे में।

बिनती ने चन्दर को मौन देखा तो बोली, "एक बात कहें आपसे? मानिएगा!"

"क्या?"

"अगर हमसे कभी कोई अनधिकार चेष्टा हो जाए तो क्षमा कर दीजिएगा, लेकिन आप और दीदी दोनों मुझे इतना चाहते हैं कि हम समझ नहीं पाते कि व्यवहारों को कहाँ सीमित रखूँ!" बिनती ने सिर झुकाये एक फूल को नोचते हुए कहा।

चन्दर ने उसकी ओर देखा, क्षण-भर चुप रहा, फिर बोला, "नहीं बिनती, जब सुधा तुम्हें इतना चाहती है तो तुम हमेशा मुझ पर उतना ही अधिकार समझना जितना सुधा पर।"

उधर पम्मी ने चन्दर के जाते ही सुधा से कहा, "क्या आपकी तबीयत खराब है?"

"नहीं तो।"

"आज आप बहुत पीली नज़र आती हैं!" पम्मी ने पूछा।

"हाँ, कुछ मन नहीं लग रहा था तो मैं आपके पास चली आयी कि आपसे कुछ कविताएँ सुनूँ, अँगरेजी की। दोपहर को मैंने कविता पढ़ने की कोशिश की तो तबीयत नहीं लगी और शाम को लगा कि अगर कविता नहीं सुनूँगी तो सिर फट जाएगा।"

"आपके मन में कुछ संघर्ष मालूम पड़ता है, या शायद... एक बात पूछूँ आपसे?"

"क्या, पूछिए?"

"आप बुरा तो नहीं मानेंगी?"

"नहीं, बुरा क्यों मानूँगी?"

"आप कपूर को प्यार तो नहीं करतीं? उससे विवाह तो नहीं करना चाहतीं?"

"छि:, मिस पम्मी, आप कैसी बातें कर रही हैं। उसका मेरे जीवन में कोई ऐसा स्थान नहीं। छि:, आपकी बात सुनकर शरीर में काँटे उठ जाते हैं। मैं और चन्दर से विवाह करूँगी! इतनी घिनौनी बात तो मैंने कभी नहीं सुनी!"

"माफ कीजिएगा, मैंने यों ही पूछा था। क्या चन्दर किसी को प्यार करता है?"

"नहीं, बिल्कुल नहीं!" सुधा ने इतने ही विश्वास से कहा जितने विश्वास से उसने अपने बारे में कहा था।

इतने में चन्दर और बिनती आ गये। सुधा बोली अधीरता से, "मेरा एक-एक क्षण कटना मुश्किल हो रहा है, आप शुरू कीजिए कुछ गाना!"

"कपूर, क्या सुनोगे?" पम्मी ने कहा।

"अपने मन से सुनाओ! चलो, सुधा ने कहा तो कविता सुनने को मिली!"

पम्मी ने आलमारी से एक किताब उठायी और एक कविता गाना शुरू की–अपनी हेयर पिन निकालकर मेज पर रख दी और उसके बाल मचलने लगे। चन्दर के कन्धे से वह टिककर बैठ गयी और किताब चन्दर की गोद में रख दी। बिनती मुसकरायी तो सुधा ने आँख के इशारे से मना कर दिया। पम्मी ने गाना शुरू किया, लेडी नार्टन का एक गीत–

"मैं तुम्हें प्यार नहीं करती हूँ न! मैं तुम्हें प्यार नहीं करती हूँ।
फिर भी मैं उदास रहती हूँ जब तुम पास नहीं होते हो!
और मैं उस चमकदार नीले आकाश से भी ईर्ष्या करती हूँ
जिसके नीचे तुम खड़े होगे और जिसके सितारे तुम्हें देख सकते हैं..."

चन्दर ने पम्मी की ओर देखा। सुधा ने अपने ही वक्ष में अपना सिर छुपा लिया। पम्मी ने एक पद समाप्त कर एक गहरी साँस ली और फिर शुरू किया–

"मैं तुम्हें प्यार नहीं करती हूँ–फिर भी तुम्हारी बोलती हुई आँखें;
जिनकी नीलिमा में गहराई, चमक और अभिव्यक्ति है–
मेरी निर्निमेष पलकों और जागते अर्धरात्रि के आकाश में नाच जाती हैं!
और किसी की आँखों के बारे में ऐसा नहीं होता..."

सुधा ने बिनती को अपने पास खींच लिया और उसके कन्धे पर सिर टेककर बैठ गयी। पम्मी गाती गयी–

"न मुझे मालूम है कि मैं तुम्हें प्यार नहीं करती हूँ, लेकिन फिर भी,
कोई शायद मेरे साफ दिल पर विश्वास नहीं करेगा।

और अकसर मैंने देखा है, कि लोग मुझे देखकर मुसकरा देते हैं
क्योंकि मैं उधर एकटक देखती हूँ, जिधर से तुम आया करते हो!"

गीत का स्वर बड़े स्वाभाविक ढंग से उठा, लहराने लगा, काँप उठा और फिर धीरे-धीरे एक करुण सिसकती हुई लय में डूब गया। गीत खत्म हुआ तो सुधा का सिर बिनती के कन्धे पर था और चन्दर का हाथ पम्मी के कन्धे पर। चन्दर थोड़ी देर सुधा की ओर देखता रहा फिर पम्मी की एक हल्की सुनहरी लट से खेलते हुए बोला, "पम्मी, तुम बहुत अच्छा गाती हो!"

"अच्छा? आश्चर्यजनक! कहो चन्दर, पम्मी इतनी अच्छी है यह तुमने कभी नहीं बताया था, हमें फिर कभी सुनाइएगा?"

"हाँ, हाँ मिस शुक्ला! काश कि बजाय लेडी नार्टन के यह गीत आपने लिखा होता!"

सुधा घबरा गयी, "चलो। चन्दर, चलें अब! चलो।" उसने चन्दर का हाथ पकड़कर खींच लिया–"मिस पम्मी, अब फिर कभी आएँगे। आज मेरा मन ठीक नहीं है।"

चन्दर ड्राइव करने लगा। बिनती बोली, "हमें आगे हवा लगती है, हम पीछे बैठेंगे।"

कार चली तो सुधा बोली, "अब मन कुछ शान्त है, चन्दर। इसके पहले तो मन में कैसे तूफान आपस में लड़ रहे थे, कुछ समझ में नहीं आता। अब तूफान बीत गये। तूफान के बाद की खोमोश उदासी है।" सुधा ने गहरी साँस ली, "आज जाने क्यों बदन टूट रहा है।" बैठे ही बैठे बदन उमेठते हुए कहा।

दूसरे दिन चन्दर गया तो सुधा को बुखार आ गया। अंग-अंग जैसे टूट रहा हो और आँखों में ऐसी तीखी जलन कि मानो किसी ने अंगारे भर दिये हों। रात-भर वह बेचैन रही, आधी पागल-सी रही। उसने तकिया, चादर, पानी का गिलास सभी उठाकर फेंक दिया, बिनती को भी बुलाकर पास बिठा लेती, कभी उसे दूर ढकेल देती। डॉक्टर साहब परेशान, रात-भर सुधा के पास बैठे, कभी उसका माथा, कभी उसके तलवों में बर्फ मलते रहे। डॉक्टर घोष ने बताया कि यह कल की गरमी का असर है। बिनती ने एक बार पूछा, "चन्दर को बुलवा दें?" तो सुधा ने कहा, "नहीं, मैं मर जाऊँ तो! मेरे जीते जी नहीं!" बिनती ने ड्रावर से कहा, "चन्दर को बुला लाओ।" तो सुधा ने बिगड़कर कहा, "क्यों तुम सब लोग मेरी जान लेने पर तुले हो?" और उसके बाद कमजोरी से हाँफने लगी। ड्राइवर चन्दर को बुलाने नहीं गया।

जब चन्दर पहुँचा तो डॉक्टर साहब रात-भर जागरण के बाद उठकर नहाने-धोने जा रहे थे। "पता नहीं सुधा को क्या हो गया कल से! इस वक्त तो कुछ शान्त है पर

रात-भर बुखार और बेहद बेचैनी रही है। और एक ही दिन में इतनी चिड़चिड़ी हो गयी है कि बस..." डॉक्टर साहब ने चन्दर को देखते ही कहा।

चन्दर जब कमरे में पहुँचा तो देखा कि सुधा आँख बन्द किये हुए लेटी है और बिनती उसके सिर पर आइस-बैग रखे हुए है। सुधा का चेहरा पीला पड़ गया है और मुँह पर जाने कितनी ही रेखाओं की उलझन है, आँखें बन्द हैं और पलकों के नीचे से अंगारों की आँच छनकर आ रही है। चन्दर की आहट पाते ही सुधा ने आँखें खोलीं। अजब-सी आग्नेय निगाहों से चन्दर की ओर देखा और बिनती से बोली, "बिनती, इनसे कह दो जाएँ यहाँ से।"

बिनती स्तब्ध, चन्दर नहीं समझा, पास आकर बैठ गया, बोला, "सुधा, क्यों, पड़ गयी न, मैंने कहा था कि गैरेज में मोटर साफ मत करो। परसों इतना रोयी, सिर पटका, कल धूप खायी। आज पड़ रही! कैसी तबीयत है?"

सुधा उधर खिसक गयी और अपने कपड़े समेट लिये, जैसे चन्दर की छाँह से भी बचना चाहती है और तेज, कड़वी और हाँफती हुई आवाज में बोली, "बिनती, इनसे कह दो जाएँ यहाँ से।"

चन्दर चुप हो गया और एकटक सुधा की ओर देखने लगा और सुधा की बात ने जैसे चन्दर का मन मरोड़ दिया। कितनी गैरियत से बात कर रही है सुधा! सुधा, जो उसके अपने व्यक्तित्व से ज्यादा अपनी थी, आज किस स्वर में बोल रही है! "सुधी, क्या हुआ तुम्हें?" चन्दर ने बहुत आहत हो बहुत दुलार-भरी आवाज में पूछा।

"मैं कहती हूँ जाओगे नहीं तुम?" फुफकारकर सुधा बोली, "कौन हो तुम मेरी बीमारी पर सहानुभूति प्रकट करने वाले? मेरी कुशल पूछने वाले? मैं बीमार हूँ, मैं मर रही हूँ, तुमसे मतलब? तुम कौन हो? मेरे भाई हो? मेरे पिता हो? कल अपने मित्र के यहाँ मेरा अपमान कराने ले गये थे!" सुधा हाँफने लगी।

"अपमान! किसने तुम्हारा अपमान किया, सुधा? पम्मी ने तो कुछ भी नहीं कहा? तुम पागल तो नहीं हो गयीं?" चन्दर ने सुधा के पैरों पर हाथ रखते हुए कहा।

"पागल हो नहीं गयी तो हो जाऊँगी!" उसने पैर हटा लिये, "तुम, पम्मी, गेसू, पापा डॉक्टर सब लोग मिलकर मुझे पागल कर दोगे। पापा कहते हैं ब्याह करो, पम्मी कहती है मत करो, गेसू कहती है तुम प्यार करती हो और तुम...तुम, कुछ भी नहीं कहते। तुम मुझे इस नरक में बरसों से सुलगते देख रहे हो और बजाय इसके कि तुम कुछ कहो, तुमने मुझे खुद इस भट्ठी में ढकेल दिया!...चन्दर, मैं पागल हूँ, मैं क्या करूँ?" सुधा बड़े कातर स्वर में बोली। चन्दर चुप था। सिर्फ सिर झुकाये, हाथों पर था रखे बैठा था। सुधा थोड़ी देर हाँफती रही। फिर बोली–

"तुम्हें क्या हक था कल पम्मी के यहाँ ले जाने का? उसने क्यों कल गीत में कहा कि मैं तुम्हें प्यार करती हूँ?" सुधा बोली। चन्दर ने बिनती की ओर देखा–"क्यों बिनती? बिनती से मैं कुछ नहीं छिपाता।" "क्यों पम्मी ने कल कहा। मैं तुम्हें प्यार नहीं करती! मेरा मन मुझे धोखा नहीं दे सकता। मैं तुमसे सिर्फ जाने क्या करती हूँ...फिर पम्मी ने कल ऐसी बात क्यों कही? मेरे रोम-रोम में जाने कौन-सा ज्वालामुखी धधक उठता है ऐसी बातें सुनकर? तुम क्यों पम्मी के यहाँ ले गये?"

"तुम खुद गयी थीं, सुधा!" चन्दर बोला।

"तो तुम रोक नहीं सकते थे! तुम कह देते मत जाओ तो मैं कभी जा सकती थी? तुमने क्यों नहीं रोका? तुम हाथ पकड़ लेते। तुम डाँट देते। तुमने क्यों नहीं डाँटा? एक ही दिन में मैं तुम्हारी गैर हो गयी? गैर हूँ तो फिर क्यों आये हो? जाओ यहाँ से। मैं कहती हूँ; जाओ यहाँ से?" दाँत पीसकर सुधा बोली।

"सुधा..."

"मैं तुम्हारी बोली नहीं सुनना चाहती। जाते हो कि नहीं..." और सुधा ने अपने माथे पर से उठाकर आइस-बैग फेंक दिया। बिनती चौंक उठी। चन्दर चौंक उठा। उसने मुड़कर सुधा की ओर देखा। सुधा का चेहरा डरावना लग रहा था। उसका मन रो आया। वह उठा, क्षण-भर सुधा की ओर देखता रहा और धीरे-धीरे कमरे से बाहर चला गया।

बरामदे के सोफे पर आकर सिर झुकाकर बैठ गया और सोचने लगा, यह सुधा को क्या हो गया? परसों शाम को वह इसी सोफे पर सोया था, सुधा बैठी पंखा झल रही थी। कल शाम को वह हँस रही थी, लगता था तूफान शान्त हो गया पर यह क्या? अन्तर्द्वन्द्व ने यह रूप कैसे ले लिया?

और क्यों ले लिया? जब वह अपने मन को शान्त रख सकता है, जब वह सभी कुछ हँसते-हँसते बरदाश्त कर सकता है तो सुधा क्यों नहीं कर सकती? उसने आज तक अपनी साँसों से सुधा का निर्माण किया है। सुधा को तिल-तिल बनाया, सजाया, सँवारा है फिर सुधा में यह कमजोरी क्यों?

क्या उसने यह रास्ता अख्तियार करके भूल की? क्या सुधा भी एक साधारण-सी लड़की है जिसके प्रेम और घृणा का स्तर उतना ही साधारण है? माना उसने अपने दोनों के लिए एक ऐसा रास्ता अपनाया है जो विलक्षण है लेकिन इससे क्या! सुधा और वह दोनों ही क्या विलक्षण नहीं हैं? फिर सुधा क्यों बिखर रही है? लड़कियाँ भावना की ही बनी होती हैं? साधना उन्हें आती ही नहीं क्या? उसने सुधा का गलत मूल्यांकन किया था? क्या सुधा इस 'तलवार की धार' पर चलने में असमर्थ साबित होगी? यह तो चन्दर की हार थी।

और फिर सुधा ऐसी ही रही तो चन्दर? सुधा चन्दर की आत्मा है; इसे अब चन्दर खूब अच्छी तरह पहचान गया। तो क्या अपनी ही आत्मा को घोंट डालने की हत्या का पाप चन्दर के सिर पर है?

तो क्या त्याग मात्र नाम ही है? क्या पुरुष और नारी के सम्बन्ध का एक ही रास्ता है—प्रणय, विवाह और तृप्ति! पवित्रता, त्याग और दूरी क्या सम्बन्धों को, विश्वासों को जिन्दा नहीं रहने दे सकते? तो फिर सुधा और पम्मी में क्या अन्तर है? क्या सुधा के हृदय के इतने समीप रहकर, सुधा के व्यक्तित्व में घुल-मिलकर और आज सुधा को इतने अन्तर पर डालकर चन्दर पाप कर रहा है? तो क्या फूल को तोड़कर अपने ही बटन होल में लगा लेना ही पुण्य है और दूसरा रास्ता गर्हित है? विनाशकारी है? क्यों उसने सुधा का व्यक्तित्व तोड़ दिया है?

किसी ने उसके कन्धे पर हाथ रखा। विचार-शृंखला टूट गयी...बिनती थी। "क्या सोच रहे हैं आप?" बिनती ने पूछा, बहुत स्नेह से।

"कुछ नहीं!"

"नहीं बताइएगा? हम नहीं जान सकते?" बिनती के स्वर में ऐसा आग्रह, ऐसा अपनापन, ऐसी निश्छलता रहती थी कि चन्दर अपने को कभी नहीं रोक पाता था। छिपा नहीं पाता था।

"कुछ नहीं बिनती! तुम कहती हो, सुधा को इतने अन्तर पर मैंने रखा तो मैं देवता हूँ! सुधा कहती है, मैंने अन्तर पर रखा, मैंने पाप किया! जाने क्या किया है मैंने? क्या मुझे कम तकलीफ है? मेरा जीवन आजकल किस तरह घायल हो गया है, मैं जानता हूँ। एक पल मुझे आराम नहीं मिलता। क्या उतनी सजा काफी नहीं थी जो सुधा को भी किस्मत यह दण्ड दे रही है? मुझको सभी बेचैनी और दु:ख मिल जाता। सुधा को मेरे पाप का दण्ड क्यों मिल रहा है? बिनती, तुमसे अब कुछ नहीं छिपा। जिसको मैं अपनी साँसों में दुबकाकर इन्द्रधनुष के लोक तक ले गया, आज हवा के झोंके उसे बादलों की ऊँचाई से क्यों ढकेल देना चाहते हैं? और मैं कुछ भी नहीं कर सकता?" इतनी देर बाद बिनती के ममता-भरे स्पर्श में चन्दर की आँखें छलछला आयीं।

"छि:, आप समझदार हैं! दीदी ठीक हो जाएँगी! घबराने से काम नहीं चलेगा न! आपको हमारी कसम है। उदास मत होइए। कुछ सोचिए मत। दीदी बीमार हैं, आप इस तरह से करेंगे तो कैसे काम चलेगा! उठिए, दीदी बुला रही हैं।"

चन्दर गया। सुधा ने इशारे से पास बुलाकर बिठा लिया। "चन्दर, हमारा दिमाग ठीक नहीं है। बैठ जाओ लेकिन कुछ बोलना मत, बैठे रहो।"

उसके बाद दिन भर अजब-सा गुजरा। जब-जब चन्दर ने उठने की कोशिश की,

सुधा ने उसे खींचकर बिठा लिया। घर तो उसे जाने ही नहीं दिया। बिनती वहीं खाना ले आयी। सुधा कभी चन्दर की ओर देख लेती। फिर तकिये में मुँह गड़ा लेती। बोली एक शब्द भी नहीं, लेकिन उसकी आँखों में अजब-सी कातरता थी। पापा आये, घंटों बैठे रहे; पापा चले गये तो उसने चन्दर का हाथ अपने हाथ में ले लिया, करवट बदली और तकिये पर अपने कपोलों से चन्दर की हथेली दबाकर लेटी रही। पलकों से कितने ही गरम-गरम आँसू छलककर गालों पर फिसलकर चन्दर की हथेली भिगोते रहे।

चन्दर चुप रहा। लेकिन सुधा के आँसू जैसे नसों के सहारे उसके हृदय में उतर गये और जब हृदय डूबने लगा तो उसकी पलकों पर उतर आये। सुधा ने देखा लेकिन कुछ भी नहीं बोली। घण्टा-भर बहुत गहरी साँस ली; बेहद उदासी से मुसकराकर कहा, "हम दोनों पागल हो गये हैं, क्यों चन्दर? अच्छा, अब शाम हो गयी। ज़रा लॉन पर चलें।"

सुधा चन्दर के कन्धे पर हाथ रखकर खड़ी हो गयी। बिनती ने दवा दी, थर्मामीटर से बुखार देखा। बुखार नहीं था। चन्दर ने सुधा के लिए कुरसी उठायी। सुधा ने हँसकर कहा, "चन्दर, आज बीमार हूँ तो कुरसी उठा रहे हो, मर जाऊँगी तो अरथी उठाने भी आना, वरना नरक मिलेगा! समझे न!"

"छिः, ऐसा कुबोल न बोला करो, दीदी?"

सुधा लॉन में कुरसी पर बैठ गयी। बगल में नीचे चन्दर बैठ गया। सुधा ने चन्दर का सिर अपनी कुरसी में टिका लिया और अपनी उँगलियों से चन्दर के सूखे होंठों को छूते हुए कहा, "चन्दर, आज मैंने तुम्हें बहुत दुःखी किया, क्यों? लेकिन जाने क्यों, दुःखी न करती तो आज मुझे वह ताकत न मिलती जो मिल गयी।" और सहसा चन्दर के सिर को अपनी गोद में खींचती हुई-सी सुधा ने कहा, "आराध्य मेरे! आज तुम्हें बहुत-सी बातें बताऊँगी। बहुत-सी।"

बिनती उठकर जाने लगी तो सुधा ने कहा, "कहाँ चली? बैठ तू यहाँ। तू गवाह रहेगी ताकि बाद में चन्दर यह न कहे कि सुधा कमजोर निकल गयी।" बिनती बैठ गयी। सुधा ने क्षण-भर आँखें बन्द कर लीं और अपनी वेणी पीठ पर से खींचकर गोद में ढाल ली और बोली, "चन्दर, आज कितने ही साल हुए, जब से मैंने तुम्हें जाना है, तब से अच्छे-बुरे सभी कामों का फैसला तुम्हीं करते रहे हो। आज भी तुम्हीं बताओ चन्दर कि अगर मैं अपने को बहुत सँभालने की कोशिश करती हूँ और नहीं सँभाल पाती हूँ, तो यह कोई पाप तो नहीं? तुम जानते हो चन्दर, तुम जितने मजबूत हो उस पर मुझे घमंड है कि तुम कितनी ऊँचाई पर हो, मैं भी उतना ही मजबूत बनने की कोशिश करती हूँ, उतने ही ऊँचे उठने की कोशिश करती हूँ, अगर कभी-कभी फिसल जाती हूँ तो यह अपराध तो नहीं?"

"नहीं।" चन्दर बोला।

"और अगर अपने उस अन्तर्द्वन्द्व के क्षणों में तुम पर कठोर हो जाती हूँ, तो तुम सह लेते हो। मैं जानती हूँ, तुम मुझे जितनत स्नेह करते हो, उसमें मेरी सभी दुर्बलताएँ धुल जाती हैं। लेकिन आज मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ चन्दर कि मुझे खुद अपनी दुर्बलताओं पर शरम आती है आगे से मैं वैसी ही बनूँगी जैसा तुमने सोचा है, चन्दर।"

चन्दर कुछ नहीं बोला सिर्फ घास पर रखे हुए सुधा के पाँवों पर अपनी काँपती उँगलियाँ रख दीं। सुधा कहती गयी, "चन्दर, आज से कुछ ही महीने पहले जब गेसू ने मुझसे पूछा था कि तुम्हारा दिल कहीं झुका था तो मैंने इनकार कर दिया था, कल पम्मी ने पूछा, तुम चन्दर को प्यार करती हो तो मैंने इनकार कर दिया था, मैं आज भी इनकार करती हूँ कि मैंने तुम्हें प्यार किया है या तुमने मुझे प्यार किया है। मैं भी समझती हूँ और तुम भी समझते हो लेकिन यह न तुमसे छिपा है न मुझसे कि तुमने जो कुछ दिया है वह प्यार से कहीं ज्यादा ऊँचा और प्यार से कहीं ज्यादा महान् है।...मैं ब्याह नहीं करना चाहती थी, मैंने परसों इनकार कर दिया था, इतनी रोयी थी, खीझी थी, बाद में मैंने सोचा कि यह गलत है, यह स्वार्थ है। जब पापा मुझे इतना प्यार करते हैं तो मुझे उनका दिल नहीं दुखाना चाहिए। पर मन के अन्दर की जो खीझ थी, जो कुढ़न थी, वह कहीं तो उतरती ही। वह मैं अपने पर उतार देना चाहती थी, मन में आता था अपने को कितना कष्ट दे डालूँ इसीलिए अपने गैरेज में जाकर मोटर सँभाल रही थी, लेकिन वहाँ भी असफल रही और अन्त में वह खीझ अपने मन पर भी न उतारकर उस पर उतारी जिसको मैंने अपने से भी बढ़कर माना है। वह खीझ उतरी तुम पर!"

चन्दर ने सुधा की ओर देखा। सुधा मुसकराकर बोली, "न, ऐसे मत देखो। यह मत समझो कि अपने आज के व्यवहार के लिए मैं तुमसे क्षमा माँगूँगी। मैं जानती हूँ, माँगने से तुम दु:खी भी होगे और डाँटने भी लगोगे। खैर, आज से मैं अपना रास्ता पहचान गयी हूँ। मैं जानती हूँ कि मुझे कितना सँभलकर चलना है। तुम्हारे सपने को पूरा करने के लिए मुझे अपने को क्या बनाना होगा, यह भी मैं समझ गयी हूँ। मैं खुश रहूँगी, सबल रहूँगी और सशक्त रहूँगी और जो रास्ता तुम दिखलाओगे उधर ही चलूँगी। लेकिन एक बात बताओ चन्दर, मैंने ब्याह कर लिया और वहाँ सुखी न रह पायी, फिर और उन्हें वह भावना, उपासना न दे पायी और फिर तुम्हें दु:ख हुआ, तब?"

चन्दर ने घास का एक तिनका तोड़कर कहा, "देखो सुधा, एक बात बताओ। अगर मैं तुम्हें कुछ कह देता हूँ और उसे तुम मुझी को वापस दे देती हो तो कोई बहुत ऊँची बात नहीं हुई। अगर मैंने तुम्हें सचमुच ही स्नेह या पवित्रता जो कुछ भी दिया है, उसे तुम उन सभी के जीवन में ही क्यों नहीं प्रतिफलित कर सकती जो तुम्हारे जीवन

में आते हैं, चाहे वह पति ही क्यों न हों। तुम्हारे मन के अक्षय स्नेह-भंडार के उपयोग में इतनी कृपणता क्यों? मेरा सपना कुछ और ही है, सुधा। आज तक तुम्हारी साँसों के अमृत ने ही मुझे यह सामर्थ्य दी कि मैं अपने जीवन में कुछ कर सकूँ और मैं भी यही चाहता हूँ कि मैं तुम्हें वह स्नेह दूँ जो कभी घटे ही न। जितना बाँटो उतना बढ़े और इतना मुझे विश्वास है कि तुम यदि स्नेह की एक बूँद दो तो मनुष्य क्या से क्या हो सकता है। अगर वही स्नेह रहेगा तो तुम्हारे पति को कभी कोई असन्तोष क्या हो सकता है और फिर कैलाश तो इतना अच्छा लड़का है, और उसका जीवन इतना ऊँचा कि तुम उसकी जिन्दगी में ऐसी लगोगी, जैसे अँगूठी में हीरा। और जहाँ तक तुम्हारा अपना सवाल है, मैं तुमसे भीख माँगता हूँ कि अपना सब कुछ खोकर भी अगर मुझे कोई सन्तोष रहेगा तो यह देखकर कि मेरी सुधा अपने जीवन में कितनी ऊँची है। मैं तुमसे इस विश्वास की भीख माँगता हूँ।"

"छि:, मुझसे बड़े हो चन्दर! ऐसी बात नहीं कहते! लेकिन एक बात है। मैं जानती हूँ कि मैं चन्द्रमा हूँ, सूर्य की किरणों से ही जिसमें चमक आती है। तुमने जैसे आज तक मुझे सँवारा है, आगे भी तुम अपनी रोशनी अगर मेरी आत्मा में भरते गये तो मैं अपना भविष्य भी नहीं पहचान सकूँगी। समझे!"

"समझा, पगली कहीं की!" थोड़ी देर चन्दर चुप बैठा रहा फिर सुधा के पाँवों से सिर टिकाकर बोला–"परेशान कर डाला, तीन रोज से। सूरत तो देखो कैसी निकल आयी है और बैसाख को कुल चार रोज रह गये। अब मत दिमाग बिगाड़ना! वे लोग आते ही होंगे।"

"बिनती! दवा ले आ..." बिनती उठकर गयी तो सुधा बोली, "हटो, अब हम घास पर बैठेंगे!" और घास पर बैठकर वह बोली, "लेकिन एक बात है, आज से लेकर ब्याह तक तुम हर अवसर पर हमारे सामने रहना, जो कहोगे वह हम करते जाएँगे।"

"हाँ, यह हम जानते हैं।" चन्दर ने कहा और कुछ दूर हटकर घास पर लेट गया और आकाश की ओर देखने लगा। शाम हो गयी थी और दिन-भर की उड़ी हुई धूल अब बहुत कुछ बैठ गयी थी। आकाश के बादल ठहरे हुए थे और उन पर अरुणाई झलक रही थी। एक दुरंगी पतंग बहुत ऊँचे पर उड़ रही थी। चन्दर का मन भारी था। हालाँकि जो तूफान परसों उठा था वह खत्म हो गया था, लेकिन चन्दर का मन अभी मरा-मरा हुआ-सा था। वह चुपचाप लेटा रहा। बिनती दवा और पानी ले आयी। दवा पीकर सुधा बोली, "क्यों, चुप क्यों हो, चन्दर?"

"कोई बात नहीं।"

"फिर बोलते क्यों नहीं, देखा बिनती, अभी-अभी क्या कह रहे थे और अब देखो इन्हें।" सुधा बोली।

"हम अभी बताते हैं इन्हें!" बिनती बोली और गिलास में थोड़ा-सा पानी लेकर चन्दर के ऊपर फेंक दिया। चन्दर चौंककर उठ बैठा और बिगड़कर बोला, "यह क्या बदतमीजी है? अपनी दीदी को यह सब दुलार दिखाया करो।"

"तो क्यों पड़े थे ऐसे? बात करेंगे ऋषि-मुनियों जैसे और उदास रहेंगे बच्चों की तरह! वाह रे चन्दर बाबू!" बिनती ने हँसकर कहा, "दीदी, ठीक किया न मैंने?"

"बिल्कुल ठीक, ऐसे ही इनका दिमाग ठीक होगा।"

इतने में डॉक्टर शुक्ला आये और कुरसी पर बैठ गये। सुधा के माथे पर हाथ रखकर देखा, "अब तो तू ठीक है?"

"हाँ, पापा!"

"बिनती, कल तुम्हारी माताजी आ रही हैं। अब बैसाखी की तैयारी करनी है। सुधा के जेठ आ रहे हैं और सास।"

सुधा चुपचाप उठकर चली गयी। चन्दर, बिनती और डॉक्टर साहब बैठे उस दिन का बहुत-सा कार्यक्रम बनाते रहे।

चन्दर को सबसे बड़ा सन्तोष था कि सुधा ठीक हो गयी थी। बैसाख पूनो के एक दिन पहले ही से बिनती ने घर को इतना साफ कर डाला था कि घर चमक उठा था। यह बात तो दूसरी है कि स्टडी-रूम की सफाई में बिनती ने चन्दर के बहुत से कागज बुहारकर फेंक दिये थे और आँगन धोते वक्त उसने चन्दर के कपड़ों को छींटों से तर कर दिया था। उसके बदले में चन्दर ने बिनती को डाँटा था और सुधा देख-देखकर हँस रही थी और कह रही थी, "तुम क्यों चिढ़ रहे हो? तुम्हें देखने थोड़े ही आ रही हैं हमारी सास।"

बैसाखी पूनो की सुबह डॉक्टर साहब और बुआजी गाड़ी लेकर उनको लिवा लाने गये थे। चन्दर बाहर बरामदे में बैठा अखबार पढ़ रहा था और सुधा अन्दर कमरे में बैठी थी। अब दो दिन उसे बहुत दब-ढँककर रहना होगा। वह बाहर नहीं घूम सकती थी; क्योंकि जाने कैसे और कब उसकी सास आ जाएँ और देख लें। बुआ उसे समझा गयी थीं और उसने एक गम्भीर आज्ञाकारी लड़की की तरह मान लिया था और अपने कमरे में चुपचाप बैठी थी। बिनती कढ़ी के लिए बेसन फेंट रही थी और महराजिन ने रसोई में दूध चढ़ा रखा था।

सुधा चुपके से आयी, किवाड़ की आड़ से देखा कि पापा और बुआ की मोटर

आ तो नहीं रही है! जब देखा कि कोई नहीं है तो आकर चुप्पे से खड़ी हो गयी और पीछे से चन्दर के हाथ से अखबार ले लिया। चन्दर ने पीछे देखा तो सुधा एक बच्चे की तरह मुसकरा दी और बोली, "क्यों चन्दर, हम ठीक हैं न? ऐसे ही रहें न? देखा तुम्हारा कहना मानते हैं न हम?"

"हाँ सुधी, तभी तो हम तुमको इतना दुलार करते हैं!"

"लेकिन चन्दर, एक बार आज रो लेने दो। फिर उनके सामने नहीं रो सकेंगे।" और सुधा का गला रुँध गया और आँख छलछला आयी।

"छिः, सुधा..." चन्दर ने कहा।

"अच्छा, नहीं–नहीं..." और झटके से सुधा ने आँसू पोंछ लिये। इतने में गेट पर किसी कार का भोंपू सुनाई पड़ा और सुधा भागी।

"अरे, यह तो पम्मी की कार है।" चन्दर बोला। सुधा रुक गयी। पम्मी ने पोर्टिको में आकर कार रोकी।

"हैलो, मेरे जुड़वाँ मित्र, क्या हाल है तुम लोगों का?" और हाथ मिलाकर बेतकल्लुफी से कुर्सी खींचकर बैठ गयी।

"इन्हें अन्दर ले चलो, चन्दर! वरना अभी वे लोग आते होंगे।" सुधा बोली।

"नहीं, मुझे बहुत जल्दी है। आज शाम को बाहर जा रही हूँ। बर्टी अब मसूरी चला गया है, वहाँ से उसने मुझे भी बुलाया है। उसके हाथ में कहीं शिकार में चोट लग गयी है। मैं तो आज जा रही हूँ।"

सुधा बोली, "हमें ले चलिएगा?"

"चलिए। कपूर, तुम भी चलो, जुलाई में लौट आना!" पम्मी ने कहा।

"जब जंगले साल हम लोगों की मित्रता की वर्षगाँठ होगी तो मैं चलूँगा।" चन्दर ने कहा।

"अच्छा, विदा!" पम्मी बोली। चन्दर और सुधा ने हाथ जोड़े तो पम्मी ने आगे बढ़कर सुधा का मुँह हथेलियों में उठाकर उसकी पलकें चूम लीं और बोली, "मुझे तुम्हारी पलकें बहुत अच्छी लगती हैं। अरे! इनमें आँसुओं का स्वाद है, अभी रोयी थीं क्या?" सुधा झेंप गयी।

चन्दर के कन्धे पर हाथ रखकर पम्मी ने कहा, "कपूर, तुम खत जरूर लिखते रहना। चलते तो बड़ा अच्छा रहता। अच्छा, आप दोनों मित्रों का समय अच्छी तरह बीते।" और पम्मी चल दी।

थोड़ी देर में डॉक्टर साहब की कार आयी। सुधा ने अपने कमरे के दरवाजे बन्द कर लिये, बिनती ने सिर पर पल्ला ढक लिया और चन्दर दौड़कर बाहर गया। डॉक्टर

साहब के साथ जो सज्जन उतरे वे ठिगने-से, गोरे-से, गोल चेहरे के कुलीन सज्जन थे और खद्दर का कुरता और धोती पहने थे। हाथ में एक छोटा-सा सफरी बैग था। चन्दर ने लेने को हाथ बढ़ाया तो हँसकर बोले, "नहीं जी, क्या इतना-सा बैग ले चलने में मेरा हाथ थक जाएगा। आप लोग तो खातिर करके मुझे महत्त्वपूर्ण बना देंगे।"

सब लोग स्टडी रूम में गये। वहीं डॉक्टर शुक्ला ने परिचय कराया–"यह हमारे शिष्य और लड़के, प्रान्त के होनहार अर्थशास्त्री चन्द्रकुमार कपूर और आप शाहजहाँपुर के प्रसिद्ध कांग्रेसी कार्यकर्ता और म्युनिसिपल कमिश्नर श्री शंकरलाल मिश्र।"

"अब तू नहाय लेव संकरी, फिर चाय ठंडाय जइहै।" बुआजी ने आकर कहा। आज बुआजी ने बहुत दिनों पहले की बूटीदार साड़ी पहन रखी थी और शायद वह खुश थीं क्योंकि बिनती को डाँट नहीं रही थीं।

"नहीं, मैं तो वेटिंग-रूम में नहा चुका। चाय मैं पीता नहीं। खाना ही तैयार कराइए।" और घड़ी देखकर शंकर बाबू बोले, "मुझे ज़रा स्वराज्य-भवन जाना है और दो बजे की गाड़ी से वापस चले जाना है और शायद उधर से ही चला जाऊँगा।" उन्होंने बहुत मीठे स्वर से मुसकराते हुए कहा।

"यह तो अच्छा नहीं लगता कि आप आये भी और कुछ रुके नहीं।" डॉक्टर शुक्ला बोले।

"हाँ, मैं खुद रुकना चाहता था लेकिन माँजी की तबीयत ठीक नहीं है। कैलाश भी कानपुर गया हुआ है। मुझे जल्दी जाना चाहिए।"

बिनती ने लाकर थाली रखी। चन्दर ने आश्चर्य से डॉक्टर साहब की ओर देखा। वे हँसकर बोले, "भाई, यह लोग हमारी तरह छूत-पाक नहीं मानते। शंकर तुम्हारे सम्प्रदाय के हैं, यहीं कच्चा खाना खा लेंगे।"

"इन्हें ब्राह्मण कहत के है, ई तो किरिस्तान है, हमरो धरम बिगाड़िन हियाँ आय कै! बुआजी बोलीं। बुआजी ने ही यह शादी तय करायी थी, लड़का बताया था और दूर के रिश्ते से वे कैलाश और शंकर की भाभी लगती थीं।"

शंकर बाबू ने हाथ धोये और कुर्सी खींचकर बैठ गये। चन्दर की ओर देखकर बोले, "आइए, होनहार डॉक्टर साहब, आप तो मेरे साथ खा सकते हैं?"

"नहीं, आप खाइए।" चन्दर ने तकल्लुफ करते हुए कहा।

"अजी वाह! मैं ब्राह्मण हूँ, शुद्ध; मेरे साथ खाकर आपको जल्दी मोक्ष मिल जाएगा। कहीं हाथ में तरकारी लगी रह गयी तो आपके लिए स्वर्ग का फाटक फौरन खुल जाएगा! खाओ।"

दो कौर खाने के बाद शंकर बाबू ने बुआजी से कहा, "यही बहू है, जो लड़की थाली रख गयी थी?"

"अरे राम कहौ, ऊ तो हमार छोरी है बिनती! पहचनत्यौ नै। पिछले साल तो मुन्ने के विवाह में देखे होबो!" बुआजी बोलीं।

शंकर बाबू कैलाश से काफी बड़े थे लेकिन देखने में बहुत बड़े नहीं लगते थे। खाते-पीते बोले, "डॉक्टर साहब! लड़की से कहिए, रोटी दे जाये। मैं इसी तरह देख लूँगा, और ज्यादा तड़क-भड़क की कोई जरूरत नहीं!"

डॉक्टर साहब ने बुआजी को इशारा किया और वे उठकर चली गयीं। थोड़ी देर में सुधा आयी। सादी सफेद धोती पहने, हाथ में रोटी लिये दरवाजे पर आकर हिचकी, फिर आकर चन्दर से बोली, "रोटी लोगे!" और बिना चन्दर की आवाज सुने रोटी चन्दर के आगे रखकर बोली, "और क्या चाहिए?"

"मुझे कढ़ी चाहिए।" शंकर बाबू ने कहा। सुधा गयी और कढ़ी ले आयी। शंकर बाबू के सामने रख दी। शंकर बाबू ने आँखें उठाकर सुधा की ओर देखा, सुधा ने निगाहें नीची कर लीं और चली गयी।

"बहुत अच्छी है लड़की!" शंकर बाबू ने कहा। "इतनी पढ़ी-लिखी लड़की में इतनी शर्म-लिहाज नहीं मिलती। सचमुच जैसे आपकी एक ही लड़की थी, आपने उसे खूब बनाया है। कैलाश के बिल्कुल योग्य लड़की है। यह तो कहिए डॉक्टर साहब कि शिष्टा प्रबल होती है वरना हमारा कहाँ सौभाग्य था! जब से मेरी पत्नी मरी तभी से माताजी कैलाश के विवाह की जिद कर रही हैं। कैलाश अन्तर्जातीय विवाह करना चाहता था, लेकिन हमें तो अपनी जाति में ही इतना अच्छा सम्बन्ध मिल गया।"

"तो तोहरे अबहिन कौन बैस ह्वै गयी। तुहौ काहे नाही बहुरिया लै अउत्यौ। सुधी के अकेल मन न लगी!" बुआजी बोलीं।

शंकर बाबू कुछ नहीं बोले। खाना खाकर उन्होंने हाथ धोये और घड़ी देखी।

"अब थोड़ा सो लूँ, या जाने दीजिए। आइए, बातें करें हम और आप," उन्होंने चन्दर से कहा। एक बजे तक चन्दर शंकर बाबू से बातें करता रहा और डॉक्टर साहब और सुधा वगैरह खाना खाते रहे। शंकर बाबू बहुत हँसमुख थे और बहुत बातूनी भी। चन्दर को तो कैलाश से भी ज्यादा शंकर बाबू पसन्द आये। बातें करने से मालूम हुआ कि शंकर बाबू की आयु अभी तीस वर्ष से अधिक की नहीं है। एक पाँच वर्ष का बच्चा है और उसी के होने में उनकी पत्नी मर गयी। अब वे विवाह नहीं करेंगे, वे गांधीवादी हैं, कांग्रेस के प्रमुख स्थानीय कार्यकर्ता हैं और म्युनिसिपल कमिश्नर हैं। घर के जमींदार हैं। कैलाश बरेली में पढ़ता था। अब भी कैलाश का कोई इरादा किसी प्रकार की नौकरी

या व्यापार करने का नहीं है, वह मजदूरों के लिए साप्ताहिक पत्र निकालने का इरादा कर रहा है। वह सुधा को बजाय घर पर रखने के अपने साथ रखेगा क्योंकि वह सुधा को आगे पढ़ाना चाहता है, सुधा को राजनीति क्षेत्र में ले जाना चाहता है।

बीच में एक बार बिनती आयी और उसने चन्दर को बुलाया। चन्दर बाहर गया तो बिनती ने कहा, "दीदी पूछ रही हैं, ये कितनी देर में जाएँगे?"

"क्यों?"

"कह रही हैं अब चन्दर को याद थोड़े ही है कि सुधा भी इसी घर में है। उन्हीं से बातें कर रहे हैं।"

चन्दर हँस दिया और कुछ नहीं कहा। बिनती बोली, "ये लोग तो बहुत अच्छे हैं। मैं तो कहूँगी सुधा दीदी को इससे अच्छा परिवार मिलना मुश्किल है। हमारे ससुर की तरह नहीं हैं ये लोग।"

"हाँ, फिर भी सुधा इतनी सेवा नहीं कर रही है इनकी। बिनती, तुम सुधा को कुछ शिक्षा दे दो इस मामले में।"

"हाँ-हाँ, हम सेवा करने की शिक्षा दे देंगे और ब्याह करने के बाद की शिक्षा अपनी पम्मी से दिलवा देना। खुद तो उनसे ले ही चुके होंगे आप!"

चन्दर झेंप गया। "पाजी कहीं की, बहुत बेशरम हो गयी है। पहले मुँह से बोल नहीं निकलता था!"

"तुमने और दीदी ने ही तो किया बेशरम! हम क्या करें? पहले हम कितना डरते थे!" बिनती ने उसी तरह गर्दन टेढ़ी करके कहा और मुसकराकर भाग गयी।

जब डॉक्टर साहब आये तो शंकर बाबू ने कहा, "अब तो मैं जा रहा हूँ, यह माला मेरी ओर से बहू को दे दीजिए।" और उन्होंने बड़ी सुन्दर मोतियों की माला बैग से निकाली और बुआजी के हाथ में दे दी।

"हाँ, एक बात है!" शंकर बाबू बोले, "ब्याह हम लोग महीने भर के अन्दर ही करेंगे। आपकी सब बात हमने मानी, यह बात आपको हमारी माननी होगी।"

"इतनी जल्दी!" डॉक्टर शुक्ला चौंक उठे, "यह असम्भव है, शंकर बाबू! मैं अकेला हूँ, आप जानते हैं।"

"नहीं, आपको कोई कष्ट न होगा।" शंकर बाबू बहुत मीठे स्वर में बोले, "हम लोग रीति-रसम के तो कायल हैं नहीं। आप जितना चाहे रीति-रसम अपने मन से कर लें। हम लोग तो सिर्फ छह-सात आदमियों के साथ आएँगे। सुबह आएँगे, अपने बँगले में एक कमरा खाली करा दीजिएगा। शाम को अगवानी और विवाह कर दें। दूसरे दिन दस बजे हम लोग चले जाएँगे।"

"यह नहीं होगा।" डॉक्टर साहब बोले, "हमारी तो अकेली लड़की है और हमारे भी तो कुछ हौसले हैं। और फिर लड़की की बुआ तो यह कभी भी नहीं स्वीकार करेंगी।"

"देखिए, मैं आपको समझा दूँ, कैलाश शादियों में तड़क-भड़क के सख्त खिलाफ है। पहले तो वह इसीलिए जाति में विवाह नहीं करना चाहता था, लेकिन जब मैंने उसे भरोसा दिलाया कि बहुत सादा विवाह होगा तभी वह राजी हुआ। इसीलिए इसे आप मान ही लें फिर विवाह के बाद तो जिन्दगी पड़ी है। आपकी अकेली लड़की है जितना चाहिए, करिए। रहा कम समय का तो शुभस्य शीघ्रम्! फिर आपको कुछ खास इन्तजाम भी नहीं करना, अगर कुछ हो तो कहिए मैं यहीं रह जाऊँ, आपका काम कर दूँ!" शंकर बाबू हँसकर बोले।

कुछ देर तक बातें होती रहीं, अन्त में शंकर बाबू ने अपने सौजन्य और मीठे स्वभाव से सभी को राजी कर ही लिया। उसके बाद उन्होंने सबसे विदा माँगी, चलते वक्त बुआजी और डॉक्टर साहब के पैर छुए, चन्दर से हाथ मिलाया और शंकर बाबू सबका मन जीतकर चले गये।

बुआजी ने माला हाथ में ली, उसे उलट-पलटकर देखा और बोलीं, "एक ऊ आये रहे जूताखोर! एक ठो कागज थमाय के चले गये!" और एक गहरी साँस लेके चली गयीं।

डॉ. साहब ने सुधा को बुलाया। उसके हाथ में वह माला रखकर उसे चिपटा लिया। सुधा पापा की गोद में मुँह छिपाकर रो पड़ी।

उसके बाद सुधा चली गयी और चन्दर, डॉक्टर साहब और बुआजी बैठे शादी के इन्तजाम की बातें करते रहे। यह तय हुआ कि अभी तो इन्हीं की इच्छानुसार विवाह कर दिया जाए फिर यूनिवर्सिटी खुलने पर सभी को बुलाकर अच्छी दावत वगैरह दे दी जाए। यह भी तय हुआ कि बुआजी गाँव जाकर अनाज, घी, बड़ियाँ और नौकर वगैरह का इन्तजाम कर लाएँ और पन्द्रह दिन के अन्दर लौट आएँ। अगवानी ठीक छह बजे शाम को हो जाए और सुबह के नाश्ते में क्या दिया जाए, यह सभी डॉक्टर साहब ने तय कर डाला। लेकिन निश्चय यह किया गया कि चूँकि आदमी बहुत कम आ रहे हैं, अत: सुबह-शाम के नाश्ते का काम यूनिवर्सिटी के किसी रेस्तराँ को दे दिया जाए।

इसी बीच में बिनती खरबूजा और शरबत लाकर रख गयी और चन्दर ने बहुत आराम से शरबत पीते हुए पूछा, "किसने बनाया है?"

"सुधा दीदी ने।"

"आज बड़ी खुश मालूम पड़ती है, चीनी बहुत कम छोड़ी है!" चन्दर बोला। बुआ और बिनती दोनों हँस पड़ीं।

थोड़ी देर बाद चन्दर उठकर भीतर गया तो देखा कि सुधा पलंग पर बैठी सामने एक किताब रखे जाने क्या देख रही है और सामने वह माला पड़ी है। चन्दर गया और बोला, "सुधा! आज मैं बहुत खुश हूँ।"

सुधा ने आँखें उठायीं और चन्दर की ओर देखकर मुसकराने की कोशिश की और बोली, "मैं भी बहुत खुश हूँ।"

"क्यों, तय हो गया इसलिए?" बिनती ने पूछा।

"नहीं, चन्दर बहुत खुश हैं इसलिए!" और एक गहरी साँस लेकर किताब बन्द कर दी।

"कौन-सी किताब है, सुधा?" चन्दर ने पूछा।

"कुछ नहीं, इस पर उर्दू के कुछ अशआर लिखे हैं जो गेसू ने सुनाये थे।" सुधा बोली।

चन्दर ने बिनती की ओर देखा और कहा, "बिनती, कैलाश तो जैसा है वैसा ही है, लेकिन शंकरबाबू की तारीफ मैं कर नहीं सकता। क्या राय है तुम्हारी?"

"हाँ, है तो सही; दीदी इतनी सुखी रहेंगी कि बस! दीदी, हमें भूल मत जाना समझीं!" बिनती बोली।

"और हमें भी मत भूलना सुधा!" चन्दर ने सुधा की उदासी दूर करने के लिए छेड़ते हुए कहा।

"हाँ, तुम्हें भूले बिना कैसे काम चलेगा।" सुधा ने और भी गहरी साँस लेते हुए कहा और एक आँसू गालों पर फिसल ही आया।

"अरे पगली, तुम सब कुछ अपने चन्दर के लिए कर रही हो, उसकी आज्ञा मानकर कर रही हो। फिर यह आँसू कैसे? छि:! और यह माला सामने रखे क्या कर रही हो?" चन्दर ने बहलाया।

"माला तो दीदी इसलिए सामने रखे थीं कि बतलाऊँ...बतलाऊँ!" बिनती बोली, "असल में रामायण की कहानी तो सुनी है चन्दर, तुमने? रामचन्द्र ने अपने एक भक्त को मोती की माला दी तो वह उसे दाँत से तोड़कर देख रहा था कि उसके अन्दर रामनाम है या नहीं। सो यह माला सामने रखकर देख रही थीं, इसमें कहीं चन्दर की झलक है या नहीं?"

"चुप गिलहरी कहीं की?" सुधा हँस पड़ी, "बहुत बोलना आ गया है!" सुधा ने हँसते हुए बनावटी गुस्से से कहा। फिर सुधा तकिये से टिककर बैठ गयी–"आज गेसू नहीं है। मुझे गेसू की बहुत याद आ रही है।"

"क्यों?"

"इसलिए कि आज उसके कई शेर याद आ रहे हैं। एक दफे उसने सुनाया था–

'ये आज फिजा खामोश है क्यों, हर जर्रे को आखिर होश है क्यों?

या तुम ही किसी के हो न सके, या कोई तुम्हारा हो न सका।'

इसी की अन्तिम पंक्ति है–

'मौजें भी हमारी हो न सकीं, तूफाँ भी हमारा हो न सका'!"

"वाह! यह पंक्ति बहुत अच्छी है", चन्दर ने कहा।

"आज गेसू होती तो बहुत-सी बातें करते!" सुधा बोली, "देखो चन्दर, जिन्दगी भी क्या होती है! आदमी क्या सोचता है और क्या हो जाता है। आज से तीन-चार महीने पहले मैंने क्या सोचा था! क्लास-रू? से भागकर हम लोग पेड़ के नीचे लेटकर बातें करते थे, तो मैं हमेशा कहती थी–मैं शादी नहीं करूँगी। पापा को समझा लूँगी। उस दिन क्या मालूम था कि इतनी जल्दी जुए के नीचे गरदन डाल देनी होगी और पापा को भी जीतकर किसी दूसरे से हार जाना होगा। अभी उसकी तय भी नहीं हुई और महीने-भर बाद मेरी..." सुधा थोड़ी देर चुप रही और फिर–"और दूसरी बात उसकी, जो मैंने तुम्हें बतायी थी। उसने कहा था जब किसी के कदम हट जाते हैं सिर के नीचे से, तब मालूम होता है कि हम किसका सपना देख रहे थे। पहले हमें भी नहीं मालूम होता था कि हमारे सिर किसके कदमों पर झुक चुके हैं। याद है? मैंने तुम्हें बताया था, तुमने पूछा था!"

"याद है।" चन्दर ने कहा। बिनती उठकर चली गयी लेकिन सुधा या चन्दर किसी ने ध्यान भी नहीं दिया। चन्दर बोला, "लेकिन सुधा, इन सब बातों को सोचने से क्या फायदा, आगे का रास्ता सामने है, बढ़ो।"

"हाँ, सो तो है ही देवता मेरे! कभी-कभी जाने कितनी पुरानी बातें मन में आ ही जाती हैं और मन करता है कि मैं सोचती ही जाऊँ। जाने क्यों मन को बड़ा सन्तोष मिलता है। और चन्दर, जब मैं वहाँ रहूँगी, तुमसे दूर, तो इन्हीं स्मृतियों के अलावा और क्या शेष रहेगा...तुम्हें वह दिन याद है जब मैं गेसू के यहाँ नहीं जा पायी थी और उस स्थान पर हम लोगों में झगड़ा हो गया था...चन्दर, वहाँ सब कुछ है लेकिन मैं लड़ूँगी-झगड़ूँगी किससे वहाँ?"

चन्दर एक फीकी-सी हँसी हँसकर बोला, "अब क्या जन्म-भर बच्ची ही बनी रहोगी!"

"हाँ चन्दर, चाहती तो यही थी लेकिन जिन्दगी तो जबरदस्ती सब सुख छीन लेती है और बदले में कुछ भी नहीं देती। आओ, चलो लॉन पर चलें। शाम को तुमसे बातें ही करेंगे!"